वाङ चू सुख्यात कथाकार भीष्म की उन ग्यारह कहानियों का नवीनतम संकलन है जो हाल के कुछ वर्षों में लिखी गयी और पाठकों द्वारा प्रशंसित भी हुई। इन कहानियों में साद्देश्यनिर्वहन के साथ साथ हृदयग्राही अन्तरंगता और रसमयता स्पृहणीय है। इन्हें व्यापक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में लिखा गया है, किन्तु जीवन सन्दर्भों के चयन में विविधता रखी गयी है जिससे रोचकता और प्रभाव में वृद्धि हुई है। इस प्रसंग में संकलन की एक कहानी वाङ चू — जिसके आधार पर पुस्तक का नामकरण हुआ है— और दूसरी कहानी 'राधा अनुराधा' को ले सकते हैं। पहली में एक निर्वासित चीनी मानस की निरीहता का चित्रण है तथा दूसरी अभावों और यातनाओं में पली एक निम्नवर्गीय किशोरी नायिका के रोमांस की करुण उच्छवास कथा है। ओ हरामजादे शीर्षक व्यंग्यात्मक है किन्तु कहानी प्रवासी भारतीय मानस की पीड़ा की परतों को खोलती है। इसी तरह और और कहानियाँ मन पर अलग-अलग प्रभाव छोड़ती हैं तथा आज के सामाजिक जीवन की विषमताओं को रेखांकित करती हैं।

# वाङ् चू

भीष्म साहनी

राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली पटना

मूल्य रु० १० ००

भीष्म साहनी

प्रथम सस्करण १६७८

प्रकाशक राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
८, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली ११०००२

मुद्रक ग्रन्थ भारती,
दिल्ली ११००३२

र । चाँद चौधरी

वरुण के लिए

# कथाक्रम

# ओ हरामजादे

घुमक्कडो के जिन्दा म मुझे खुद मालूम न होता कि कल किस घाट जा लगूगा। कभी भूमध्य सागर के तट पर भूली बिसरी किसी सभ्यता के खण्हर देख रहा होता तो कभी यूरोप के किसी नगर की जनाकीर्ण सडको पर घूम रहा होता। दुनिया बडी विचित्र पर साथ ही अबोध और अगम्य लगती, जान पडता जस मरी ही तरह वह भी बिना किसी धुर के निरुद्देश्य घूम रही है।

ऐसे ही एक बार मैं यूरोप के एक दूरवर्ती इलाके मे जा पहुँचा था। एक दिन दोपहर के वक्त होटल के कमरे म से निकलकर मैं खाडी के किनारे बेंच पर बठा आती जाती नावो को देख रहा था, जब मेरे पास से गुजरते हुए अधेड उम्र की एक महिला ठिठककर खडी हो गयी। मैंने विशेष ध्यान नही दिया, मैंने समझा उसे किसी दूसरे चेहरे का मुगालता हुआ होगा। पर वह और निकट आ गयी।

'भारत स आये हो ?'' उसने धीरे से बडी शिष्ट मुस्कान के साथ पूछा।

मैंने भी मुस्कराकर सिर हिला दिया।

'मैं देखते ही समझ गयी थी कि तुम हिन्दुस्तानी होगे।' और वह अपना बडा सा थैला बेंच पर रखकर मेरे पास बठ गयी।

नाटे कद की वाझिल से शरीर की महिला बाजार से सौदा खरीदकर लौट रही थी। खाडी के नीले जल जसी ही उसकी आखें थी—इतनी साफ नीली आखें केवल बच्चो की होती है। इस पर साफ गोरी त्वचा। पर बाल खिचडी हो रहे थे और चेहरे पर हल्की हल्की रेखाएँ उतर आयी थी जिनके जाल से, खाडी हो या रेगिस्तान कभी कोई बच नही सकता। अपना

खरीदारी का थैला बेंच पर रखकर वह मेरे पास तनिक फासले पर बैठ गयी। वह अंग्रेज नहीं थी पर टूटी-फूटी अंग्रेजी में अपना मतलब अच्छी तरह से समझा लेती थी।

'मेरा पति भी भारत का रहनेवाला है। इस वक्त घर पर है। तुमसे मिलकर बहुत खुश होगा।"

मैं थोड़ा हैरान हुआ। इंग्लैण्ड और फ्रांस आदि देशों में तो हिन्दुस्तानी लोग बहुत मिल जाते हैं। वहाँ पर सैकड़ों बस भी गये हैं, लेकिन यूरोप के इस दूरदराज इलाके में कोई हिन्दुस्तानी क्या आकर रहने लगा होगा? कुछ कुतूहलवश, कुछ वक्त काटने की इच्छा से, मैं तैयार हो गया।

चलिए जरूर मिलना चाहूँगा।"

और हम दोनों उठ खड़े हुए।

सड़क पर चलते हुए मेरी नजर बार-बार उस महिला के गोल मटोल शरीर पर जाती रही। उस हिन्दुस्तानी ने इस औरत में क्या देखा होगा जो घर-बाहर छोड़कर यहाँ इसके साथ बस गया है। सम्भव है जवानी में चुलबुली और नटखट रही होगी। इसकी नीली आँखों ने कहर ढाये होंगे। हिन्दुस्तानी मरता ही नीली आँखों और गोरी चमड़ी पर है। पर अब तो समय उस पर कहर ढाने लगा था। पचास पचपन की रही होगी। थैला उठाये हुए साँस बार-बार फूल रहा था, कभी उसे एक हाथ में उठाती, कभी दूसरे हाथ में। मैंने थैला उसके हाथ से ले लिया और हम बतियाते हुए उसके घर की ओर जाने लगे।

आप भी कभी भारत गयी हैं?' मैंने पूछा।

"एक बार गयी थी। लाल ले गया था। पर इसे तो अब लगता है बीसियों बरस बीत चुके हैं।

लाल साहब तो जाते रहते होंगे?

महिला ने खिचड़ी बालोंवाला अपना सिर झटककर कहा 'नहीं वह भी कभी नहीं गया। इसीलिए वह तुमसे मिलकर बहुत खुश होगा। यहाँ हिन्दुस्तानी बहुत कम आते हैं।

तंग सीढ़ियाँ चढ़कर हम एक फ्लैट में पहुँचे। अन्दर रोशनी थी और एक खुला सा कमरा जिसकी चारों दीवारों के साथ किताबों से ठसाठस

भरी आलमारिया रखी थी। दीवार का जहा कही कोई टुकडा खाली मिला था वहा तरह तरह के नक्शे और मानचित्र टाग दिय गये थे। उसी कमरे मे दूर खिडकी के पासवाले कमरे मे काले रग का सूट पहने, सावले रग और उडत सफेद बालोवाला एक हिन्दुस्तानी बठा कोई पत्रिका बाच रहा था।

'लाल देखा तो कौन आया ह ? इनसे मिलो। तुम्हारे एक देशवासी को जबदस्ती खीच लायी हूँ।' महिला ने हँसकर कहा।

वह उठ खडा हुआ और जिज्ञासा और कुतूहल से मेरी ओर देखता हुआ आगे बढ आया।

आइए आइए! बडी खुशी हुई। मुझे लाल कहते ह मैं यहा इजीनियर हूँ। मेरी पत्नी न मुझ पर बडा एहसान किया है जो आपका ले आयी है।"

ऊँचे लम्बे कद का आदमी निकला। यह कहना कठिन था कि भारत के किस हिस्से से आया है। शरीर का बोझिल और ढीला ढाला था। दोनो कनपटियो के पास सफेद बालो के गुच्छे से उग आये थे जबकि सिर के ऊपर गिने चुने सफेद बाल उड-से रहे थे।

दुआ-सलाम के बाद हम बठे ही थे कि उसने सवालो की झडी लगा दी।

"दिल्ली शहर तो अब बहुत कुछ बदल गया होगा ?' उसने बच्चो के से आग्रह के साथ पूछा।

"हा। बदल गया है।" आप कब थे दिल्ली म ?

'मैं दिल्ली का रहनेवाला नही हूँ। यो लडकपन म बहुत बार दिल्ली गया हूँ। रहनेवाला तो मैं पजाब का हूँ जालन्धर का। जालन्धर तो आपने कहीं देखा होगा।'

'ऐसा तो नही, मैं स्वय पजाब का रहनेवाला हूँ। किसी जमाने म जालन्धर म रह चुका हूँ।"

मेरे कहने की देर थी कि वह आदमी उठ खडा हुआ और लपककर मुझे बाँहो म भर लिया।

'ओ जालम! तू बोलना नही एँ जे जलन्धर दा रहणवाले ?"

*मैं सकुचा गया। ढील ढाले बुजुर्ग को यो उत्तेजित होता देख मुझे अट-*

पटा गा नगा। पर वह सिर न पाँव तक पुनर उठा था। इसी उत्तेजना म वह आदमी मुझे छोडकर तज तज नलता हुआ पिछले कमर की ओर चला गया और थोडी दर बाद अपनी पत्नी का साथ लिय अन्दर दाखिल हुआ जो इस बीच थला उठाय अन्दर चली गयी थी।

'हलेन यह आदमी जालन्धर स आया है मर शहर म तुमने बताया ही नहा।

उत्तेजना के कारण उसका चेहरा तमतान लगा था और उसकी बडी आँखा क नीच गूमडा म नमी आ गयी थी।

मैंने ठीक ही किया ना महिला कमर म आत हुए बोली। उसने इस बीच एप्रन पहन लिया था और रसोईघर म काम करने लग गयी थी। बडी शालीन स्निग्ध नजर स उसने मेरी ओर देखा। उसके चेहर पर वसी ही शालीनता झलक रही थी जो बरसों तक शिष्टाचार निभाने के बाद स्वभाव का अंग बन जाती है। वह मुस्कराती हुई मेरे पास आकर बठ गयी।

लाल मुझे भारत म जगह जगह घुमाने ले गया था। आगरा, बनारस, कलकत्ता हम बहुत घूमे थ

वह बुजुर्ग इस बीच टिकटिकी बाँध मेरी ओर देखे जा रहा था। उसकी आँखा म वही रूमानी किस्म का देशप्रेम झलकने लगा था जो देश के बाहर रहनवाले हिन्दुस्तानी की आँखा म अपने किसी देशवासी स मिलने पर चमकने लगता है। हिन्दुस्तानी पहले तो अपने देश से भागता है, और बाद से उसी हिन्दुस्तानी के लिए तरसने लगता है।

भारत छोडने के बाद आप बहुत दिन से भारत नही गये, आपकी श्रीमती बता रही थी। भारत के साथ आपका सम्पर्क तो रहता ही होगा?'

और मेरी नजर किताबों स ठसाठस भरी आलमारियों पर पडी। दीवारों पर टँगे अनेक मानचित्र भारत के ही मानचित्र थे।

उसकी पत्नी अपनी भारत यात्रा को याद करके कुछ अनमनी सी हो गयी थी एक छाया सी मानो उसके चेहरे पर डोलने लगी हो।

लाल के कुछ मित्र सम्बन्धी अभी भी जालन्धर म रहते है। कभी कभी उनका खत आ जाता है।' फिर हँसकर बोली उनके खत मुझे पढने

वमरा अन्दर से वन्द करके उन्हे पढता है।'
के लिए नही देता। "तुम क्या जानो उन खतो से मुझे क्या मिलता है।" लाल ने भावुक होते हुए कहा।
इस पर उसकी पत्नी उठ खडी हुई।
"तुम लोग जालन्धर की गलियो मे घूमो, मैं चाय का प्रबन्ध करती हूँ।" उसने हँसकर कहा और उन्ही कदमो रसोईघर की ओर घूम गयी।

भारत के प्रति उस आदमी की अत्यधिक भावुकता को देखकर मुझे अचम्भा भी हो रहा था। देश के बाहर दशाब्दियो तक रह चुकने के बाद भी कोई आदमी बच्चो की तरह भावुक हो सकता है, मुझे अटपटा लग रहा था।
मैंने आवाज को हल्का करते हुए मजाक के से लहजे मे कहा, "मेरे एक मित्र को भी आप ही की तरह भारत से बडा लगाव था। वह भी बरसो तक देश के बाहर रहता रहा था। उसके मन मे ललक उठने लगी कि कब मैं फिर से अपने देश की धरती पर पाँव रख पाऊँगा, कब अपने वतन की जमीन को अपने हाथ से छू पाऊँगा।
कहते हुए मैं क्षण भर के लिए ठिठका। मैं जो कहने जा रहा हूँ शायद मुझे नही कहना चाहिए। लेकिन फिर भी धृष्टता से बोलता गया, "चुनाचे वर्षों बाद सचमुच वह एक दिन टिकट कटवाकर हवाई जहाज द्वारा दिल्ली जा पहुँचा। उसने खुद यह किस्सा बाद मे मुझे सुनाया था। हवाई जहाज पर से उतरकर वह बाहर आया, हवाई अड्डे की भीड मे खडे खडे ही वह नीचे की ओर झुका और बडे श्रद्धाभाव से भारत की धरती का स्पर्श किया। पर जब स्पर्श करने के बाद खडा हुआ तो देखा, बटुआ गायब था।"
बुजुर्ग अभी भी मेरी ओर देखे जा रहा था। उसकी आँखो के भाव मे एक तरह की दूरी आ गयी थी, जैसे अतीत की अँधियारी खोह मे से दो आँखें मुझ पर लगी हो।
'उसने झुककर स्पर्श तो किया, यही बडी बात है।' उसने धीरे से कहा, 'दिल की साध तो पूरी कर ली।'
मैं सकुचा गया। मुझे अपना व्यवहार भौंडा सा लगा, लेकिन उसकी

सनक के प्रति मेरे दिल में गहरी सहानुभूति रही हो, ऐसा भी नहीं था।

वह अभी भी मेरी ओर बड़े स्नेह से देखे जा रहा था। फिर वह सहसा उठ खड़ा हुआ—'ऐसे मौके तो रोज रोज नहीं आते। इस तो हम सलिब्रेट करेंगे।"

और पीछे जाकर एक आलमारी में से कोन्याक शराब की बोतल और दो शीशे के जाम उठा लाया।

जाम में कोन्याक उँडेली गयी। वह मेरे साथ बगलगीर हुआ, और हमने 'इस अनमोल घड़ी' के नाम पर जाम टकराये।

आपको चाहिए कि आप हर तीसरे चौथे साल भारत की यात्रा पर आया करें। इससे मन भरा रहता है।" मैंने कहा।

इसने सिर हिलाया एक बार गया था लेकिन तभी निश्चय कर लिया था कि अब कभी भारत नहीं जाऊँगा।' शराब के दो एक जामों के बाद ही वह खुलने लगा था और उसकी भावुकता में एक प्रकार की आत्मीयता का पुट भी आने लगा था। मेरे घुटने पर हाथ रखकर बोला मैं घर से भागकर आया था। तब मैं बहुत छोटा था। इस बात को अब लगभग चालीस साल होने को आये हैं वह थोड़ी देर के लिए पुरानी यादों में खो गया पर फिर, अपने को झटका सा देकर वर्तमान में लौट आया। जिन्दगी में कभी कोई बड़ी घटना जिन्दगी का रुख नहीं बदलती हमेशा छोटी तुच्छ सी घटनाएँ ही जिन्दगी का रुख बदलती है। मेरे भाई ने मुझे केवल डाँटा था कि तुम पढ़ते लिखते नहीं हो, आवारा घूमते रहते हो, पिताजी का पैसा बर्बाद करते हो और मैं उसी रात घर से भाग गया था।"

कहते हुए उसने फिर से मेरे घुटने पर हाथ रखा और बड़ी आत्मीयता से बोला, "अब सोचता हूँ वह एक बार नहीं, दस बार भी मुझे डाँटता तो मैं इसे अपना सौभाग्य समझता। कम से कम कोई डाँटनेवाला तो था।

कहते कहते उसकी आवाज लड़खड़ा गयी बाद में मुझे पता चला कि मेरी माँ जिन्दगी के आखिरी दिन तक मेरा इन्तजार करती रही थी। और मेरा बाप हर रोज सुबह ग्यारह बजे, जब डाकिये के आने का वक्त होता तो वह घर के बाहर चबूतरे पर आकर खड़ा हो जाता था। और इधर मैंने

यह दृढ निश्चय कर रखा था कि जब तक मैं कुछ बन न जाऊँ, घरवालो को खत नहीं लिखूंगा।

एक क्षीण-सी मुस्कान उसके होठो पर आयी और बुझ गयी, 'फिर मैं भारत गया। यह लगभग पन्द्रह साल बाद की बात रही होगी। मैं बडे मसूबे बाँधकर गया था

उसने फिर जाम भरे और अपना किस्सा सुनाने को मुह खोला ही था कि चाय आ गयी। नाटे कद की उसकी गोल मटोल पत्नी चाय की ट्रे उठाये मुस्कराती हुई चली आ रही थी। उसे देखकर मन म फिर से सवाल उठा क्या यह महिला जिन्दगी का रुख बदलने का कारण बन सकती है?

चाय आ जाने पर वार्तालाप म औपचारिकता आ गयी।

"जालन्धर मे हम माई हीरा के दरवाजे के पास रहते थे। तब तो *जालन्धर बडा टूटा फूटा सा शहर था। क्यो हनी? तुम्हें याद है जालन्धर* मे हम कहाँ पर रह थे?'

'मुझे गलियो के नाम तो मालूम नही, लाल लेकिन इतना याद है कि सडको पर कुत्ते बहुत घूमते थे, और नालियाँ बडी गन्दी थी, मेरी बडी बेटी—तब वह डेढ साल की थी—मक्खी देखकर डर गयी थी। पहले कभी मक्खी नही देखी थी। वहीं पर उसने पहली बार गिलहरी को भी देखा था। गिलहरी उसके सामने से लपककर एक पेड पर चढ गयी थी तो वह भागती हुई मेरे पास दौड आयी थी। और क्या था वहा?"

' हम लाल के पुश्तैनी घर म रहे थे "

चाय पीते समय हम इधर उधर की बातें करते रहे। भारत की अर्थ व्यवस्था की, नये नये उद्योग धन्धो की, और मुझे लगा कि देश से दूर रहते हुए भी यह आदमी देश की गति विधि से बहुत कुछ परिचित है।

'मैं भारत म रहते हुए भी भारत के बारे मे बहुत कम जानता हूँ, आप भारत स दूर हैं, पर भारत के बारे मे बहुत-कुछ जानते हैं।"

उसने मेरी ओर देखा और हौले से मुस्कराकर बोला 'तुम भारत मे रहते हो यही बडी बात है।'

मुझे लगा जैसे सब कुछ रहते हुए भी एक अभाव सा, इस आदमी के दिल को अन्दर ही अन्दर चाटता रहता है—एक खोला जिसे जीवन की

उपलब्धियाँ और आराम आमायश, कुछ भी नहीं पार सकता, जसे रह रहकर कोई जगम सा रिसने लगता हो।

सहसा उसकी पत्नी बोली लाल न अभी तक अपन को इस बात के लिए माफ नहीं किया कि उसन मेरे साथ शादी क्या की।'

'हलन

मैं अटपटा महसूस करन लगा। मुझे लगा जसे भारत को लेकर पति-पत्नी के बीच अक्सर झगडा उठ खडा होता होगा और जसे इस विषय पर झगडते हुए ही य लोग बुढापे की दहलीज तक आ पहुँचे थे। मन म आया कि मैं फिर स भारत की बुराई करूँ ताकि यह सज्जन अपनी भावुक परिकल्पनाओ स छुटकारा पायें लेकिन यह कोशिश बेसूद थी।

सच कहती हूँ ' उसकी पत्नी कहे जा रही थी इस भारत म शादी करनी चाहिए थी। तब यह खुश रहता। मैं अब भी कहती हूँ यह भारत चला जाय और मैं इलग यहा पर रहती रहूँगी। हमारी दोनो बेटियाँ बडी हो गयी ह। मैं अपना ध्यान कर लगी "

वह बडी सन्तुलित, निर्लिप्त आवाज म कह जा रही थी। उसकी आवाज म न शिकायत का स्वर था, न क्षोभ का। मानो अपन पति के ही हित की बात बडे तकसगत और सुचिंतित ढग से कह रही हो।

"पर म जानती हूँ, यह वहाँ पर भी सुख स नही रह पायगा। अब तो वहा की गर्मी भी बरदाश्त नही कर पायगा। और वहाँ पर अब इसका कौन बठा है ? माँ रही, न बाप। भाई न मरने स पहले पुराना पुश्तनी घर भी बेच दिया था।

'हलन प्लीज बुजुग ने वास्ता डालन के स लहजे म कहा।

अब की बार मैंने स्वय इधर उधर की बातें छेड दी। पता चला कि उनकी दो बेटिया है जो इस समय घर पर नही थी बडी बेटी बाप की ही तरह इजीनियर बनी थी जब कि छोटी बेटी अभी यूनिवर्सिटी म पढ रही थी, कि दोनो बडी समझदार और प्रतिभासम्पन्न हैं। युवतिया है।

क्षण भर के लिए मुझे लगा जसे मुझे इस भावुकता की ओर अधिक ध्यान नही देना चाहिए इसे सनक से ज्यादा नही समझना चाहिए जो इस

आदमी का कभी कभी परेशान करने लगती है जब अपने यहाँ का कोई आदमी इससे मिलता है। मेरे चले जाने के बाद भावुकता का यह ज्वार उतर जायगा और यह फिर से अपने दैनिक जीवन की पटरी पर आ जायगा।

आखिर चाय का दौर खत्म हुआ और हमने सिगरेट सुलगाया। कोन्याक का दौर अभी भी थोड़े थोड़े वक्त के बाद चल रहा था। कुछ देर सिगरेटों सिगारों की चर्चा चली इस बीच उसकी पत्नी चाय के बर्तन उठाकर किचन की ओर बढ़ गयी।

"हाँ, आप कुछ बता रहे थे कि कोई छोटी सी घटना घटी थी

वह क्षण भर के लिए ठिठका फिर सिर टेढ़ा करके मुस्कराने लगा, तुम अपने देश से ज्यादा देर बाहर नहीं रहे इसलिए नहीं जानते कि परदेस में दिल की क्या कैफियत होती है। पहले कुछ साल तो मैं सब कुछ भूले रहा पर भारत से निकले दस बारह साल बाद भारत की याद रह रहकर मुझे सताने लगी। मुझ पर एक जनून सा तारी होने लगा। मेरे व्यवहार में भी अजीब बचपन सा आने लगा। कभी कभी मैं कुर्ता पाजामा पहनकर सड़कों पर घूमने लगता था ताकि लोगों को पता चले कि मैं हिन्दुस्तानी हूँ भारत का रहनेवाला हूँ। कभी जोधपुरी चप्पल पहन लेता जो मैंने लन्दन से मँगवायी थी लोग सचमुच बड़े कुतूहल से मेरी जोधपुरी चप्पल की ओर देखते और मुझे बड़ा सुख मिलता। मेरा मन चाहता कि मैं सड़कों पर पान चबाता हुआ निकलूँ धोती पहनकर चलूँ। मैं सचमुच दिखाना चाहता था कि मैं भीड़ में खोया अजनबी नहीं हूँ मेरा भी कोई देश है मैं भी कहीं का रहनेवाला हूँ। परदेस में रहनेवाले हिन्दुस्तानी के दिल को जो बात सबसे ज्यादा सालती है वह यह कि वह परदेस में एक के बाद एक सड़क लाँघता चला जाय और उसे कोई जानता नहीं, कोई पहचानता नहीं जबकि अपने वतन में हर तीसरा आदमी वाकिफ होता है। दीवाली के दिन मैं घर में मोमबत्तियाँ लाकर जला देता हेलेन के माथे पर बिन्दी लगाता, उसकी माँग में लाल रंग भरता। मैं इस बात के लिए तरस तरस जाता कि रक्षा-बन्धन का दिन हो और मेरी बहिन अपने हाथों से मुझे राखी बाँधे और कहे मेरा वीर जुग जुग जिये !'' मैं वीर शब्द सुनने के लिए तरस—

तरस जाता। आखिर मैंने भारत जाने का फसला कर लिया। मैंने सोचा, मैं हेलन को भी साथ ले चलूंगा और अपनी डेढ बरस की बच्ची को भी। हेलेन को भारत की सर कराऊँगा और यदि उसे भारत पसन्द आया तो वही छोटी मोटी नौकरी करके रह जाऊँगा।

पहले तो हम भारत म घूमते घामते रहे। दिल्ली, आगरा, बनारस मैं एक एक जगह बडे चाव से इसे दिखाता और इसकी आँखो मे इसकी प्रतिक्रिया ढूंढता रहता। इसे कोई जगह पसन्द होती तो मेरा दिल गव स भर उठता।

'फिर हम जलन्धर गये।' कहते ही वह आदमी फिर अनमना सा होकर नीचे की ओर देखने लगा और चुप सा हो गया, मुझे लगा जसे वह मन ही मन दूर अतीत म खो गया है और खोता चला जा रहा है। पर सहसा उसने कन्धे झटक दिये और फर्श की ओर आँखें लगाये ही बोला

जालन्धर म पहुँचते ही मुझे घोर निराशा हुई। फटीचर सा शहर, लोग जरूरत से ज्यादा काले और दुबले। सडकें टूटी हुई। सभी कुछ जाना पहचाना था लेकिन बडा छोटा छोटा और टूटा फूटा। क्या यही मेरा शहर है जिसे मैं हेलेन को दिखाने लाया हूँ? हमारा पुश्तैनी घर जो बचपन म मुझे इतना बडा बडा और शानदार लगा करता था अब खण्डहर सा लग रहा था पुराना और सिकुडा हुआ। माँ बाप बरसो पहले मर चुके थे। भाई प्यार से मिला लेकिन उसे लगा जसे मैं जायदाद बाँटने आया हूँ और वह पहले दिन से ही खिचा खिचा रहने लगा। छोटी बहन की दस बरस पहले शादी हो चुकी थी और वह मुरादाबाद म जाकर रहने लगी थी। क्या मैं विदेश म बठा इसी नगर के स्वप्न देखा करता था? क्या मैं इसी शहर को देख पाने के लिए बरसो से तरसता रहा हूँ? जान पहचान के लोग बूढे हो चुके थे। गली के सिरे पर कुबडा हलवाई बठा करता था। अब वह पहले से भी ज्यादा पिचक गया था और दुकान म चौकी पर बठने के बजाय दुकान के बाहर खाट पर उकडू बठा था। गलियाँ बोसीदा सोयी हुई। मैं हेलन को क्या दिखाने लाया हूँ? दो-तीन दिन इसी तरह बीत गये। कभी मैं शहर के बाहर खेतो म चला जाता कभी गली-बाजार म घूमता। पर दिल मे कोई स्फूर्ति नही थी, कोई उत्साह नही था। मुझे लगा

न मैं फिर किसी पराए नगर म पहुच गया हू ।

तभी एक दिन बाजार म जाते हुए मुझे अचानक ऊँची-सी आवाज सुनाई दी— रा हरामजादे ! मैंने विशेष ध्यान नही दिया। यह हमारे शहर की परम्परागत गाली थी जो चौबीस घण्टे हर शहरी की जबान पर रहती थी। केवल इतना सा विचार मन म उठा कि शहर तो बुढा गया है लेकिन इसकी तहजीब ज्यो की त्यो कायम है।

'ओ हरामजादे ! अब बाप की तरफ देखता भी नही ?

मुझे लगा जस कोई आदमी मुझे ही सम्बोधन कर रहा है। मैंने घूमकर देखा। सडक के पार साइकलो की एक दुकान के चबूतरे पर खडा एक आदमी मुझे ही बुला रहा था।

मैंने ध्यान से देखा। काली काली घनियर मूछो और सपाट गजे सिर और आंखो पर लगे मोटे चश्मे के बीच से एक आकृति सी उभरने लगी। फिर मैंने झट से उसे पहचान लिया। वह तिलकराज था मेरा पुराना सहपाठी।

'हरामजादे ! अब बाप को पहचानता भी नही है ! दूसरे क्षण हम दोनो एक दूसरे की बांहो मे थे।

ओ हराम द ! बाहर की गया साहब बन गया तू ? तेरी साहबी विच मैं " और उसने मुझे जमीन पर स उठा लिया। मुझे डर था कि वह सचमुच ही सडक पर मुझे पटक नही दे। दूसरे क्षण हम एक दूसरे को गालिया निकाल रहे थे।

मुझे लडकपन का मेरा दोस्त मिल गया था। तभी सहसा मुझे लगा जसे जालन्धर मिल गया है, मुझे मेरा वतन मिल गया है। अभी तक मैं अपने ही शहर मे अजनबी सा घूम रहा था। तिलकराज से मिलने की देर थी कि मेरा सारा परायापन जाता रहा। मुझे लगा जस मै यही का रहनेवाला हूँ। मैं सडक पर चलते किसी भी आदमी से बात कर सकता हूँ, झगड सकता हूँ। हर इन्सान कही का बनकर रहना चाहता है। अभी तक मैं अपने शहर मे लौटकर भी परदेसी था मुझे किसी ने पहचाना नही था। अपनाया नहीं था। यह गाली मेरे लिए वह सेतु थी, सोने की वह कडी थी जिसने मुझे मेरे वतन स मेरे लोगो म मेरे बचपन और लडकपन स, फिर स जोड़ दिया

तिलकराज की और मेरी हरकतें में बचपना था, बेवकूफी थी। पर उस वक्त यही सत्य था और उसकी सत्यता से आज भी मैं इन्कार नहीं कर सकता। जिन दुनिया के सब बड़े भाड़ पर बड़े गहरे और सच्चे होते हैं।

'चलो कहीं बैठकर चाय पीते हैं,' तिलकराज ने फिर गाली देकर कहा, 'वह पंजाबी दोस्त क्या जो गाली देकर पक्कड़' तालकर बगलगीर न हो जाय।'

हम दोनों, एक दूसरे की कमर में हाथ डाले, सरामा सरामा माई हीरा के दरवाजे की ओर जाने लगे। मेरी चाल में पुराना अलमाव आ गया। मैं जालन्धर की गलियों में यों घूमने लगा जैसे कोई जागीरदार अपनी जागीर में घूमता है। मैं पुलक पुलक रहा था। किसी किसी वक्त मन में से आवाज उठती थी, तुम यहाँ के नहीं हो, पराये हो परदेसी हो, पर मैं अपने पैर और भी ज्यादा जोर से पटक पटककर चलने लगता।

'चुच्चा हलवाई अभी भी वहाँ पर बैठता है?'

'और क्या तू हमें धोखा दे गया है, औरों लोगों ने तो धोखा नहीं दिया।'

इसी अल्हड़पन से, एक दूसरे की कमर में हाथ डाले, हम किसी जमाने में इन्हीं सड़कों पर घूमा करते थे। तिलकराज के साथ मैं लड़कपन में पहुँच गया था, उन दिनों का अलबेलापन महसूस करने लगा था।

हम एक मैले कुचैले ढाबे में जा बैठे। वही मक्खियाँ और मैल से अटा गन्दा मेज, पर मुझे परवाह नहीं थी, यह मेरे जालन्धर के ढाबे का मेज था। उस वक्त मेरा मन करता कि हेलेन मुझे इस स्थिति में आकर देखे, तब वह मुझे देखकर जान लेगी कि मैं कौन हूँ, कहाँ का रहनेवाला हूँ, कि दुनिया में एक कोना ऐसा भी है जिसे मैं अपना कह सकता हूँ, यह गन्दा ढाबा, यह धुआँभरी फटीचर खोह।

ढाबे से निकलकर हम देर तक सड़कों पर मटरगश्ती करते रहे यहाँ तक कि थककर चूर हो गये। वह उसी तरह मुझे अपने घर के सामने तक ले गया जैसे लड़कपन में मैं उसके साथ चलता हुआ, उसे उसके घर तक छोड़ने जाता था। फिर हम वहाँ से लौट पड़े, यह भी वैसा ही था जैसा

लडकपन मे हुआ करता था। पहले म उसे उसके घर तक छोडन जाता, फिर वह मुझे मेरे घर तक छोडन आता था।

तभी उसन कहा, कल रात तुम खाना मेर घर पर खाओगे। अगर इन्कार किया ता साले यहीं तुझ गले स पकडकर नाली म घुसड दूगा।

"आऊँगा', मन झट म कहा।

'अपनी मेम को भी लाना। आठ बजे म तरी राह देखूगा। अगर नही आया तो साल हराम द

—और पुरान दिनो की ही तरह उसने पहले हाथ मिलाया और फिर घुटना उठाकर मरी जाघ पर द मारा। यही हमारा विदा होन का ढग हुआ करता था। जो पहले ऐसा कर जाय कर जाय। मन भी उस गले स पकड लिया और नीचे गिरान का अभिनय करन लगा।

यह स्वाग था। मरी जाल धर की सारी यात्रा ही छलावा थी। कोई भावना मुझे हाके लिय जा रही थी आर मैं इस छलाव मे ही खोया रहना चाहता था।

दूसर रोज आठ बजते न बजत हलेन और मैं उसके घर जा पहुचे। बच्ची को हमने पहल ही खिलाकर सुला दिया था। हलेन ने अपनी सबसे बढिया पोशाक पहनी, काले रग का फ्राक, जिस पर सुनहरी कसीदाकारी हो रही थी, क धा पर नारगी रग का स्टाल डाला, और बार-बार कह जाती

तुम्हारा पुराना दोस्त है ता मुझ बन सवरकर ही जाना चाहिए ना।"

म हा कह देना पर उसके एक एक प्रसाधन पर वह और भी ज्यादा दूर होती जा रही थी। न तो काला फ्राक और बनाव सिंगार और न स्टाल और इत्र फुलेल ही जाल धर म सही बठते थे। सच पूछा तो मैं चाहता भी नही था कि हलेन मरे साथ जाय। मैंन एकाध बार उस टालन की कोशिश भी की जिस पर वह बिगडकर बोली 'वाह जी, तुम्हारा दोस्त हो और मैं उससे न मिलू ? फिर तुम मुझ यहा लाय ही क्या हो ?"

हम लोग तो ठीक आठ बजे उसके घर पर पहुँच गये लेकिन उल्लू के पटठे ने मेरे साथ धोखा किया। म समझे बठा था कि मैं और मरी पत्नी

ही उसके परिवार के साथ खाना खायेंगे। पर जब हम उसके घर पहुच तो उसने सारा जाल धर इकट्ठा कर रखा था, सारा घर मेहमानो स भरा था। तरह तरह के लाग बुलाय गय थ। मुझे झेंप हुइ। अपनी आर स वह मेरा शानदार स्वागत करना चाहता था। वह भी पजाबी स्वभाव के अनुरूप ही था। दोस्त बाहर स आय और वह उसकी खातिरदारी न करे। अपनी जमीन-जायदाद वेचकर भी वह मेरी खातिरदारी करता। अगर उसका बस चलता तो वह बण्ड बाजा भी बुला लेता। पर मुझे बडी कोफ्त हुई। जब हम पहुचे नो बठकवाला कमरा मेहमानो स भरा था, उनम से अनक मेरे परिचित भी निकल आय और मेर मन म फिर हिलोर सी उठन लगी।

पत्नी से मेरा परिचय करान के लिए मुझे बठक मे से रसोईघर की आर ले गया। वह चूल्हे के पास बठी कुछ तल रही थी। वह भट स उठ खडी हुई और दुपटटे के काने से हाथ पाछती हुई आग बढ आयी। उसका चेहरा लाल हा रहा था और बालो की लट माथे पर झूल आयी थी। ठेठ पजाबिन, अपनत्व से भरी, मिलनसार हँसमुख। उसे या उठत देखकर मेरा सारा शरीर झनझना उठा। मेरी भावज भी चूल्हे पर से ऐसे ही उठ आया करती थी, दुपटटे के काने से हाथ पोछती हुई, मेरी बडी बहिनें भी, मेरी मा भी। पजाबी महिला का सारा बाकापन, सारी आत्मीयता उसमे जैसे निखर निखर आयी थी। किसी पजाबिन से मिलना हो तो रसोईघर की दहलीज पर ही मिलो। मैं सराबोर हा उठा। वह मिर पर पल्ला ठीक करती हुई, लजाती हुइ सी मरे सामन आ खडी हुई।

'भाभी यह तेरा घरवाला तो पल्ल दर्जे का बेवकूफ है तुम इसकी बातो म क्यो आ गयी ?'

"इतना आडबर करने की क्या जरूरत थी ? हम लाग तो तुमस मिलन आय है

फिर मैंने तिलकराज की ओर मुखातिब होकर कहा 'उल्लू के पटठे, तुझे महमानवाजी करने को किसने कहा था ? हरामी क्या म तेरा मेहमान हू ? मैं तुमस निबट लगा।

उसकी पत्नी कभी मरी ओर देखती, कभी अपन पति की आर फिर

धीरे-से बोली, "आप आयें और हम खाना भी न करें ? आपके पैरों से तो हमारा घर पवित्र हुआ है।'

वही वाक्य जो शताब्दियों से हमारी गृहणियाँ मेहमानों से कहती आ रही है।

फिर वह हमें छोड़कर सीधा मेरी पत्नी से मिलने चली गयी और जाते ही उसका हाथ पकड़ लिया और बड़ी आत्मीयता से उसे खींचती हुई एक कुर्सी की ओर ले गयी। वह यों व्यवहार कर रही थी जैसे उसका भाग्य जागा हो। हेलेन को कुर्सी पर बैठाने के बाद वह स्वयं नीचे फर्श पर बैठ गयी। वह टूटी फूटी अंग्रेजी बोल लेती थी और धड़क बोले जा रही थी। हर बार उनकी आँखें मिलतीं तो वह हँस देती। उसके लिए हेलन तक अपने विचार पहुँचाना कठिन था लेकिन अपनी आत्मीयता और स्नेहभाव उस तक पहुँचाने में उसे कोई कठिनाई नहीं हुई।

उस शाम तिलकराज की पत्नी हेलेन के आगे पीछे घूमती रही। कभी अन्दर से कढ़ाई के कपड़े उठा लाती और एक एक करके हेलेन को दिखाने लगती। कभी उसका हाथ पकड़कर उसे रसोईघर में ले जाती, और उसे एक एक व्यंजन दिखाती कि उसने क्या बनाया है और कैसे बनाया है। फिर वह अपनी कुल्लू की शाल उठा लायी और जब उसने देखा कि हेलेन को पसन्द आयी है, तो उसने उसके कन्धों पर डाल दी।

इस सारी आवभगत के बावजूद हेलेन थक गयी। भाषा की कठिनाई के बावजूद वह बड़ी शालीनता के साथ सभी से पेश आयी। पर अजनबी लोगों के साथ आखिर कोई कितनी देर तक शिष्टाचार निभाता रहे ? अभी ड्रिंक्स ही चल रहे थे जब वह एक कुर्सी पर थककर बैठ गयी। जब कभी मेरी नजर हेलेन की ओर उठती तो वह नजर नीची कर लेती, जिसका मतलब था कि मैं चुपचाप इस इन्तजार में बैठी हूँ कि कब तुम मुझे यहाँ से ले चलो।

रात के बारह बजे के करीब पार्टी खत्म हुई और तिलकराज के दोस्त-यार नशे में झूमते हुए अपने अपने घर जाने लगे। उस वक्त तक काफी शोरगुल होने लगा था, कुछ लोग बहकने भी लगे थे। एक आदमी के हाथ से शराब का गिलास गिरकर टूट गया था।

जब हम लाग भी जान का हुए और हलेन भी उठ खडी हुई ता तिलकराज ने पजाबी दस्तूर के मुताबिक कहा—बठ जा बठ जा, काई जाना वाना नही है।

'नही यार अब चलें। देर हो गयी है।'

उसन फिर स मुझे धक्का दकर कुर्सी पर फेंक दिया।

कुछ हल्का हल्का सरूर कुछ पुरानी याद तिलकराज का प्यार और स्नेह और उसकी पत्नी का आत्मीयता से भरा व्यवहार, मुझे भला लग रहा था। सलवार कमीज पहने, बाला का जूडा बनाय, चूडिया खनकाती एक कमरे से दूसरे कमरे म जाती हुइ तिलकराज की पत्नी मेरे लिए मेरे वतन का मुजस्समा बन गयी थी, मेरे दश की समूची सस्कृति उसम सिमट आयी थी। मेरे दिल म कही गहरे म, एक टीस-सी उठी कि मरे घर म भी कोई मेरे ही देश की महिला एक कमरे से दूसरे कमरे म घूमा करती उसी की हसी गूजती मेरे ही देश के गीत गुनगुनाती। वर्षों स मैंने कभी या चूडियाँ खनकने की आवाज नही सुनी थी। वर्षा स मैं उन बोला के लिए तरस गया था जो बचपन म अपने घर म सुना करता था।

हलेन स मुझे काई शिकायत नही थी। मरे लिए उसन क्या नही किया था। उसन चपाती बनाना सीख लिया था। दाल छौंकना सीख लिया था। शादी के कुछ समय बाद ही वह मेरे मुह स सुन गीत टप्पे भी गुन गुनाने लगी थी। कभी-कभी सलवार कमीज पहनकर मेरे साथ घूमने निकल पडती। रसोईघर की दीवार पर उसन भारत का एक मानचित्र टाँग दिया था जिस पर अनेक स्थाना पर लाल पेंसिल स निशान लगा रख थे कि जालन्धर कहा पर है और दिल्ली कहाँ है और अमतसर कहाँ है जहाँ मेरी बडी बहिन रहती थी। भारत सम्बन्धी जो किताब मिलती उठा लाती, जब कभी काई हिन्दुस्तानी मिल जाता उस आग्रह अनुराध करके घर ले आती। पर उस समय मेरी नजर म यह सब बनावट था नकल थी मुलम्मा था इसान क्या नही विवेक और समझदारी के बल पर अपना जीवन व्यतीत कर सकता? क्या सारा वक्त तरह-तरह के अरमान उसके दिल का मथते रहते हैं?

फिर? मैंने आग्रह स पूछा।

उसने मेरी ओर देखा और उसके चहरे की मासपेशिया मे हल्का सा कम्पन हुआ। वह मुसकराकर कहने लगा, 'तुम्ह क्या बताऊँ ?" तभी मैं एक भूल कर बठा। हर इन्सान कही न कही पागल होता है और पागल बना रहना चाहता है जब मैं विदा लेने लगा और तिलकराज कभी मुझे गलबहिया देकर और कभी धक्का देकर बिठा रहा था और हलेन भी पहले मे दरवाजे पर जा खडी हुई थी तभी तिलकरा न की पत्नी लपककर रसोईघर की ओर से आयी और बोली "हाय, आप लोग जा रहे हैं ? यह कैसे हो सकता है ? मैंन ता खास आपके लिए सरसो का साग और मक्की की रोटिया बनायी ह।'

मैं ठिठक गया। सरसो का साग और मक्की की राटिया पजाबिया का चहता भोजन है।

भाभी तुम भी अब कह रही हा ? पहले अटसट खिलाती रही हो और जब घर जाने लगे हैं ता '

मै इतने लागो के लिए कस मक्की की रोटिया बना सकती थी ? अकेली बनानेवाली जो थी। मैंने आपके लिए थोडी सी बना दी। यह कहत थे कि आपको सरसा का साग और मक्की की रोटी बहुत पसन्द है

सरसा का साग और मक्की की रोटी। मैं चहक उठा, और तिलकराज को सम्बोधन करके कहा, "ओ हरामी, मुझे बताया क्या नही ?' और उसी हिलोर मे हलेन से कहा 'आओ हेलेन, भाभी ने सरसो का साग बनाया है। यह तो तुम्ह चखना ही हागा।'

हलेन खीझ उठी। पर अपने को सयत कर मुसकराती हुई बोली, "मुझे नही, तुम्ह चखना होगा।' फिर धीरे से कहने लगी 'मैं बहुत थक गयी हूँ। क्या यह साग कल नही खाया जा सकता ?

सरसो का साग, नाम स ही मैं बावला हो उठा था। उधर शराब का हल्का हल्का नशा भी ता था।

भाभी न खास हमारे लिए बनाया है। तुम्हें जरूर अच्छा लगगा।' फिर बिना हलेन के उत्तर का इन्तजार किये साग है ता मैं तो रसाईघर के अन्दर बठकर खाऊँगा। मैंने बच्चो की तरह लाड से कहा, 'चल ब, उल्लू के पटठे, उतार जूत धो हाथ और बैठ जा थाली के पास ! एक ही थाली

मे स खायेंग।'

छोटा सा रसाइघर था। हमारे अपन घर मे भी एसा ही रसोईघर हुआ करता था जहा मा अँगीठी के पास रोटिया सेंका करती थी और हम घर के बच्च साझी थालियो पर झुके लुकमे तोडा करत थ।

फिर एक बार एक चिरपरिचित दश्य मानो अतीत म से उभरकर मरी आखो के सामन घूमने लगा था और मैं आत्मविभोर होकर उस दख रहा था। चूल्हे की आग की लौ मे तिलकराज की पत्नी के कान का झुमर चमक चमक जाता था। सोन के काटे म लाल नगीना पजाबियो को बहुत फबना है। इस पर, हर बार तव पर रोटी सेंकन पर उसकी चूडिया खनक उठती और वह दोनो हाथो से गरम गरम रोटी तवे पर स उतारकर हँसती हुई हमारी थाली म डाल देती। यह दश्य मैं वरसो के बाद देख रहा था और यह मेरे लिए किसी स्वप्न से भी अधिक सु दर और हृदयग्राही था। मुझ हेलन की सुध ही नही रही। मैं बिल्कुल भूले हुए था कि बठक म हलेन अकेली बठी मेरा इ तजार कर रही है। मुझे डर था कि अगर मैं रसाईघर मे से उठ गया ता स्वप्न भग हो जायेगा। यह सु दरतम चित्र टुकडे टुकडे हो जायगा। लेकिन तिलकराज की पत्नी उसे नही भूली थी। वह सबसे पहल एक तश्तरी म मक्की की रोटी और थोडा सा साग और उस पर थाडा सा मक्खन रखकर हेलन के लिए ल गयी थी। बाद म भी, दा एक वार बीच बीच म उठकर उसके पास कुछ न कुछ ले जाती रही थी।

खाना खा चुकन पर जब हम लाग रसोइघर म स निकलकर बठक म आय तो हेलेन कुर्सी म बठी बैठी सा गयी थी और तिपाई पर मक्की की रोटी ज्यो की त्या अछूती रखी थी। हमारे कदमा की आहट पाकर उसन आखें खाली और उसी शालीन शिष्ट मुस्कान के साथ उठ खडी हुई।

विदा लेकर जब हम लोग बाहर निकले ता चारो ओर सन्नाटा छाया था। नुक्कड पर हमे एक तांगा मिल गया। ताग म घूमे बरसा बीत चुके थ मैंन साचा हलन का भी इसकी सवारी अच्छी लगगी। पर जब हम लाग तांग म बठकर घर की आर जान लग ता रास्त म हलन बोली, 'तिनत दिन और तुम्हारा विचार जाल घर म रहन का है?'

'क्यो? अभी स ऊब गयी क्या? आज तुम्ह बहुत परेशान किया ना,

आई ऐम मारी।"

हलेन चुप रही, न हूँ, न हा।

'हम पजाबी लोग सरसा के साग के लिए पागल हुए रहते हैं। आज मिला तो मैंने सोचा जी भरकर खाओ। तुम्हे कैसे लगा?"

"सुनो, मैं सोचती हूँ मैं यहा से लौट जाऊ, तुम्हारा जब मन आये, चले आना।'

यह क्या कह रही हो हेलन क्या तुम्हें मेरे लोग पस द नही है?

भारत मे आने पर मुझे मन ही मन कई बार यह ख्याल आया था कि अगर हलेन और बच्ची साथ म नही आती तो मैं खुलकर घूम फिर सकता था। छुट्टी मना सकता था। पर मैं स्वय ही बडे आग्रह से उसे अपने साथ लाया था। मैं चाहता था कि हेलेन मेरा देश देखे, मेरे लोगो से मिले, हमारी नन्ही बच्ची के सस्कारो म भारत के सस्कार भी जुडें और यदि हो सके तो मैं भारत म ही छोटी मोटी नौकरी कर लू।

हेलेन की शिष्ट सन्तुलित आवाज मे मुझे रुखायी का भास हुआ। मैने दुलार से उसे आलिंगन मे भरने की कोशिश की। उसने धीरे से मेरी बाह को परे हटा दिया। मुझे दूसरी बार उसके इद गिद अपनी बाह डाल देनी चाहिए थी लेकिन मैं स्वय तुनक उठा।

'तुम तो बडी डीग मारा करती हो कि तुम्हे कुछ भी बुरा नही लगता और अभी एक घण्टे मे ही कलई खुल गयी।'

तागे म हिचकोले आ रहे थ। पुराना फटीचर-सा तागा था जिसके सब चूल ढीले थे। हलेन को तागे के हिचकोले परेशान कर रहे थे। ऊबड खाबड गड्ढो से भरी सडक पर हेलेन बार बार सँभलकर बैठन की कोशिश कर रही थी।

'मैं सोचती हू, मैं बच्ची को लेकर लौट जाऊगी। मेरे यहा रहते तुम लोगो से खुलकर नही मिल सकते। उसकी आवाज म औपचारिकता का वसा ही पुट था जसा सरसो के साग की तारीफ करते समय रहा होगा, झूठी तारीफ और यहाँ झूठी सद्भावना।

'तुम खुद सारा वक्त गुमसुम बैठी रही हो। मैं इतने चाव से तुम्हे अपना देश दिखाने लाया हूँ।

'तुम अपने दिल की भूख मिटाने आये हो, मुझे अपना देश दिखाने नही लाये" उसने स्थिर समतल, ठण्डी आवाज म कहा, 'और अब मैंने तुम्हारा देश देख लिया है।"

मुझे चाबुक सी लगी।

"इतना बुरा क्या है मेरे देश म जो तुम इतनी नफरत स उसके बारे म बात रही हो ? हमारा देश गरीब है तो क्या, है तो हमारा अपना।'

'मन तुम्हार देश के बार मे कुछ नहीं कहा।'

'तुम्हारी चुप्पी ही बहुत कुछ कह देती है। जितनी ज्यादा चुप रहती हो, उतना ही ज्यादा विष घोलती हो।'

वह चुप हो गयी। अन्दर-ही अन्दर मरा हीनभाव जिसस उन दिनो हम सब हिन्दुस्तानी ग्रस्त हुआ करते थे, छटपटाने लगा था। आक्रोश और तिलमिलाहट के उन क्षणो मे भी मुझे अन्दर ही अन्दर कोई रोकने की कोशिश कर रहा था। अब बात और आगे नहीं बढाओ, बाद मे तुम्हे अफसोस होगा, लेकिन मैं बेकाबू हुआ जा रहा था। अँधेरे मे मैं यह भी नही देख पाया कि हेलेन की आखें भर आयी है और वह उन्हे बार बार पोंछ रही है। तागा हिचकोले खाता बढा जा रहा था और साथ साथ मरी बौखलाहट भी बढ रही थी। आखिर तागा हमारे घर के सामने जा खडा हुआ। हमारे घर की बत्ती जलती छोडकर घर के लोग अपने अपन कमरा म आराम से सो रह थे। कमरे म पहुँचकर हलेन ने फिर एक बार कहा 'तुम्हे किसी हिन्दुस्तानी लडकी स शादी करनी चाहिए थी। उसके साथ तुम खुश रहते। मेरे साथ तुम बँधे बँध महसूस करते हो।'

उसने वैसी समतल भावनाशून्य आवाज मे य शब्द कहे जस अन्य बाता के बारे मे टिप्पणी किया करती थी।

हेलेन ने आख उठाकर मरी ओर देखा। उसकी नीली आखें मुझे काच की बनी लगी ठण्डी कठोर भावनाहीन, 'तुम सीधा क्या नहीं कहती हो कि तुम्हे एक हिन्दुस्तानी के साथ ब्याह नही करना चाहिए था। मुझ पर इस बात का दोष क्या लगाती हो ?'

मैंने ऐसा कुछ नहा कहा वह बोली और पार्टीशन म पीछे कपडे बदलने चली गयी।

दीवार के साथ एक ओर हमारी बच्ची पालन म सो रही थी। मेरी आवाज सुनकर वह कुनमुनायी इस पर हलन भट से पार्टीशन के पीछे म लौट आयी और वच्ची का थपथपाकर सुलाने लगी। वच्ची फिर स गहरी नीद मों गयी। और हलेन पार्टीशन की ओर वढ गयी। तभी मैंने पार्टीशन का ओर जाकर गुस्स म कहा, 'जब स भारत आय हैं, आज पहले दिन कुछ दोस्तो मे मिलने का मौका मिला है तुम्ह वह भी बुरा लगा है। लानत है एसी शादी पर!

मैं जानता था पार्टीशन के पीछे स कोइ उत्तर नही आयगा। बच्ची सो रही हो तो हलन कमरे म चलनी भी दब पाँव थी। बोलने का तो सवाल ही नहीं उठता।

पर वह उसी समतल आवाज मे धीर म बोली तुम्ह मेरी क्या परवाह। तुम तो मजे स अपन दोस्त की बीवी के साथ फ्लट कर रह थे।"

"हलेन!' मुझे आग लग गयी, क्या बक रही हो।'

मुझे लगा जसे उसन एक अत्यन्त पवित्र अत्यन्त कोमल और सुन्दर चीज को एक झटके से तोड दिया हो।

"तुम समझती हो म अपन मित्र की पत्नी के साथ फ्लट कर रहा था?'

'मैं क्या जानू तुम क्या कर रह थे। जिस ढग म तुम सारा वक्त उसकी ओर दख रहे थ "

दूसर क्षण मैं लपककर पार्टीशन के पीछे जा पहुचा और हेलेन के मुह पर सीधा थप्पड द मारा।

उसन दोनो हाथो स अपना मुह ढाप लिया। एक बार उसकी आखें टेढी होकर मेरी ओर उठी। पर वह चिल्लायी नही। थप्पड पडने पर उसका सिर पार्टीशन स टकराया था जिससे उसकी कनपटी पर चोट आयी थी।

मार लो, अपने देश म लाकर तुम मरे साथ ऐसा व्यवहार करोगे मैं नही जानती थी।

उसके मुह से यह वाक्य निकलने की दर थी कि मेरी टागें लरज गयी और सारा शरीर जस ठण्डा पड गया। हलेन ने चेहरे पर स हाथ हटा लिये थे। उसके गाल पर थप्पड का गहरा निशान पड गया था। पार्टीशन के पीछे वह केवल शमीज पहने सिर झुकाये खडी थी क्योंकि उसन फ्राक उतार दिया

था। उसने मुझसे बात [illegible] उसके [illegible]।

यह मैं क्या कर बैठा था? यह मुझे क्या हो गया था? मैं आँखें फाड़े उसे [illegible]। और [illegible] जा रहा था और [illegible] हुआ जा रहा था। मेरे मुँह से [illegible] हुआ [illegible], [illegible] और [illegible] अनुभव [illegible] में ही [illegible] हो आया था। मैं [illegible] निकलकर बाहर आँगन में चला गया। यह मुझसे क्या हो गया है? यही [illegible] मन में बार-बार [illegible] रहा था

इस घटना के तीन दिन बाद [illegible] लिया। मैंने मन ही मन निश्चय कर लिया कि अब लौटकर [illegible] आऊँगा। उस दिन जालन्धर छोड़ा तो फिर लौटकर नहीं गया

सीढ़ियों पर कदमों की आवाज आयी। उसी वक्त रसोईघर की ओर से हुमन भी तपाक से चली आयी। सीढ़ियों की ओर से हँसने-खेलने और तेज तेज सीढ़ियाँ चढ़ने की आवाज आयी। ज़ोर से दरवाज़ा खुला और हँसती-खेलती दो युवतियाँ—लाल साहिब की बेटियाँ—अन्दर दाखिल हुईं। बड़ी बड़ी ऊँची लम्बी थी उसके बाल काले थे और आँखें स्लेटी रंग की। छोटी के हाथ में किताबें थीं, उसका रंग कुछ कुछ साँवला था, और आँखें में नीली नीली झाइयाँ थीं। दोनों ने बारी बारी से माँ और बाप के गाल चूमे फिर झट से चाय की तिपाई पर से केक के टुकड़े उठा उठाकर खाने लगीं। उनकी माँ भी कुर्सी पर बैठ गयी और दोनों बेटियाँ अपने माँ बाप को दिन भर की छोटी मोटी घटनाएँ अपनी भाषा में सुनाने लगीं। सारा घर उनकी चहकती आवाज़ों से गूँजने लगा। मैंने लाल की ओर देखा। उसकी आँखों में भावुकता के स्थान पर स्नेह उतर आया था।

"यह सज्जन भारत से आये हैं। यह भी जालन्धर के रहनेवाले हैं।'

बड़ी बेटी ने मुस्कराकर मेरा अभिवादन किया। फिर चहककर बोली 'जालन्धर तो अब बहुत-कुछ बदल गया होगा। जब मैं वहाँ गयी थी, तब तो वह बड़ा पुराना पुराना-सा शहर था। क्या माँ?" और खिलखिलाकर

हँसने लगी।

लाल का अतीत भले ही कैसा रहा हो, उसका वतमान बडा समद्ध और सुन्दर था।

वह मुझे मेरे हाटल तक छोडने आया। खाडी के किनार ढलती शाम के सायो मे देर तक हम दानो टहलते बतियात रह। वह मुझे अपने नगर के बारे मे बताता रहा, अपने व्यवसाय के बारे मे इस नगर मे अपनी उपलब्धियो के बारे मे। वह बडा समभदार और प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति निकला। आते जाते अनेक लोगो के साथ उसकी दुआ मलाम हुई। मुझे लगा, शहर मे उसकी इज्जत है। और मैं फिर उसी उधेडबुन मे खो गया कि इस आदमी का वास्तविक रूप कौन सा है ? जब वह यादा मे खोया अपने दश के लिए छटपटाता है या एक लब्धप्रतिष्ठ और सफल इजीनियर जो कहा से आया और वहा जाकर बस गया और अपनी मेहनत स अनक उपलब्धिया हासिल की ?

विदा हात समय उसने मुझे फिर बाहो मे भीच लिया और देर तक भीचे रहा, और मैंने महसूस किया कि भावना का ज्वार उसके अ दर फिर से उठने लगा है और उसका शरीर फिर से पुलकने लगा है।

'यह मत समभना कि मुझे कोई शिकायत है। जिन्दगी मुझ पर बडी मेहरबान रही है। मुझे कोई शिकायत नही है अगर शिकायत है तो अपने आपस " फिर थोडी देर चुप रहन के बाद वह हँसकर बाला, 'हा, एक बात की चाह मन मे अभी तक मरी नही है, इस बुढापे मे भी नही मरी है कि मडक पर चलते हुए कभी अचानक कही से आवाज आय 'ओ हराम जाद !' और मैं लपककर उस आदमी को छाती से लगा लू", कहत हुए उसकी आवाज फिर से लडखडा गयी।

ओ ह

# साग-मीट

साग मीट बनाना क्या मुश्किल है। आज शाम खाना यहीं खाकर जाओ मैं तुम्हारे सामने बनवाऊँगी सीख भी लेना और खा भी लेना। रुकोगी ना? इन्हें साग मीट बहुत पसन्द है। जब कभी दोस्तों का खाना करते है तो साग मीट जरूर बनवाते हैं। हाय साग मीट तो जग्गा बनाता था। वह होता तो मैं उससे साग मीट बनवाकर तुम्हे खिलाती। उसके हाथ म बडा रस था। वह उसम दही डालता, लहसुन डालता, जान क्या क्या डालता। बडे शौक स बनाता था। मेरे तो तीन तीन डिब्बे घी के महीने मे निकल जाते हैं। नौकरो के लिए डालडा रखा हुआ है, पर कौन जाने, मुए हमे डालडा खिलाते हो और खुद अच्छा घी हडप जाते हो। आज के जमाने मे किसी का एतबार नही किया जा सकता। मैं ताले तो नही लगा सकती। मुझसे ताले नही लगते। मैं कहती हूँ खाते हैं तो खायें। कितना खा लेंगे! मुझसे अपनी जान नहीं सभाली जाती, अब ताले कौन लगाये? यह मथरा सात रोटियाँ सवेरे और सात रोटियाँ गिनकर शाम को खाता है। बीच म इसे दो बार चाय भी चाहिए और घर मे जो मिठाई हो, वह भी इसे दो। पर मैं कहती हूँ, 'टिका हुआ तो है, आजकल किसी नौकर का भरोसा थोडे ही है। किसी वक्त भी उठकर कह देते हैं—मैं जा रहा हूँ।'

ये भी मुझे यही कहते हैं, कुत्ते के मुह मे हड्डी दिये रहो तो नही भूकेगा। सत्तर रुपये पर इसे रखा था अब सौ लेता है। फिर भी इसके तेवर चढे रहते हैं।' पर जग्गा बडा नेक आदमी था। बडा नमकहलाल। वह नौकर थोडे ही था वह तो घर का आदमी था। वह इन्हे बहुत मानता था। एक बार ये कुछ कह दें, तो मजाल है वह पूरा न करे। बडा वफादार

था। ये भी तो नौकर का नौकर नही समझते। घर का आदमी समझते है। जब कभी सौ पचास की उसे जरूरत होती झट से निकालकर दे देते। कही कोई लिखत नही कोई हिसाब नहीं।

जग्गा बीवी ब्याह कर लाया, तो दो जोडे और एक गम कोट सिलवाकर दिया। मैं इनसे कहूँ जी, क्यो पैसे लुटाते हो। नौकर किसी के अपने नहीं होते। इसी को पाच रुपय कहीं से ज्यादा मिल गये, तो यह पीठ फेर लगा।' ये कहते 'तू अपना काम देख पानी निकालने से कुएँ खाली नही होते। यह हमे साग मीट खिलाता रहे मुझसे जो मागेगा, दूगा। इस जैसा बावर्ची तो शहर भर म नही होगा।

मुझे वह दिन याद है जब जग्गे को लेकर आये थे। बाहर से ही आवाज लगायी ले सुमित्रा तेरे लिए नौकर ले आया हूँ। तब भी ये मुझसे कह, इस चाय के साथ खाने के लिए जरूर कुछ दे दिया कर। एक मठरी ज्यादा दे देने से तेरा नुकसान नहीं होगा। इसे घर से मोह पड गया, तो वर्षों तक तेरे साथ बना रहेगा। तेरा सारा काम कर दिया करेगा।

और जग्गा भी ऐसा जैसे जगल से हिरन पकड लाये हो। बडी बडी उसकी आखें, हिरन की तरह हैरान सा देखता रहता। वही बात हुई। जग्गे का मोह हो गया। पर यह छोटी उम्र मे होता है। बडे बडे मुसटडे नौकर, जो सडको पर घूमते हैं इन्हे क्या मोह होगा। बच्चे कोमल होते हैं, जैसा सिखाओ, सीख जाते है। जानवर सीख जाते है तो ये क्या न सीखेंगे? इन्हे बस मे करने के बडे ढग आते है।

तुम्हे जकी याद है ना? हाय, तुम्हे जैकी भूल गया है? जकी कुत्ता जिसे ये एक दोस्त के घर से उठा लाये थे। सभी को भूकता फिरता था। पर इन्होने उसे ऐसा हाथ मे किया, इन्ही के कदमो मे चक्कर काटता फिरता था। उसे भी ऐसा ही मोह पड गया था इनके साथ। मैं तुम्हे क्या बताऊँ। दफ्तर से इनके लौटने का वक्त होता तो जैकी के कान खडे हो जाते। बाहर सारा वक्त दसियो मोटरें दौडती रहती है पर जिस वक्त इनकी मोटर आती तो इसे झट से पता चल जाता और भागकर बाहर पहुँच जाता। सीधा गेट पर जा पहुँचता। वही पर एक दिन अपनी ही गाडी के नीचे कुचल गया। यह मोह बहुत बुरी चीज है।

य कांट कहां स बनवाये है ? बडे खूबसूरत हैं। हीरे कितन के आय ? सच्चे है ना ? आजकल हर चीज को आग लगी हुई है। मैंने यह नाक की लौंग बनवायी इतना छोटा सा हीरा इसम लगा है पर पूरे सात सौ खुल गय। अब तो मुझे पहनते भी डर लगता है। जब जग्गा था, तो मेरी जेवरो की पिटारी भी बाहर पडी रहती थी। कभी दो पस भी इधर-उधर नहा हुए। ऐसी भुलक्कड हूँ, कभी चेन गुसलखाने म रह जाती, कभी तिपाई पर रह जाती जग्गा उठाकर द देता। पर अब तो ऐसे नौकर आय हैं, हरे राम मैंने सारे जवर उठाकर बक्स म रख दिय हैं।

मथरा स पहले एक नौकर था मसा नाम का। ऊपर से बडा शरीफ। लगता उसके मुह म जबान ही नही है। पर एक दिन मैं पिछवाडे की तरफ से घर आ रही थी ता क्या देखती हूँ, मसा छत पर खडा है और गली मे खडे आदमी को ऊपर स एक एक करके कपडे फेंक रहा है। मुझे देखते ही दानो चम्पत हो गय। मसा गली मे कूद गया और वही से भाग गया। आजकल नौकर रखने का जमाना नही है। मैं तो घर के बाहर भी जाऊँ, तो डर लगा रहता है कि पीछे नौकर कही घर की सफाई ही न कर जायें। जग्गा था, तो मुझे कोई भी चिन्ता नही होती थी। वह हाथ का बडा साफ था।

तू कुछ खा भी ना। तू तो कुछ भी नही खाती। गम चाय मँगवाऊँ ? इसे छोड दे, यह ठण्डी पड गयी होगी, यह केक का टुकडा ले। बाजारी है पर बहुत अच्छा है। केक ता बनाती है कमला की सास एक से एक बढिया। कभी उसम काकनट डालती है कभी कुछ, कभी कुछ। 'वेंगर' से लन जाओ तो जा केक मुए अठारह रुपये मे बेचत है, कमला की सास पाच रुपये म बना लेती है। बीच मे अण्डे भी दूध चीनी भी, किशमिश और बादाम भी जान क्या-क्या। मुझसे अपनी जान नही सँभाली जाती, मैं क्या करूँगी। केक जग्गा भी बहुत अच्छे बनाता था। पर उसकी किस्मत खोटी थी नही तो आज तुम्हें उसी के हाथ का बना केक खिलाती। हर तीसरे चौथ दिन केक बनाता था पर खुद कभी नही खाता था। मैं उससे कहूँ तू भी एक टुकडा खा ले पर नही।' वह कहता, बीबीजी, यहा केक खाऊँगा तो बाहर मुझे केक कौन दगा ?'
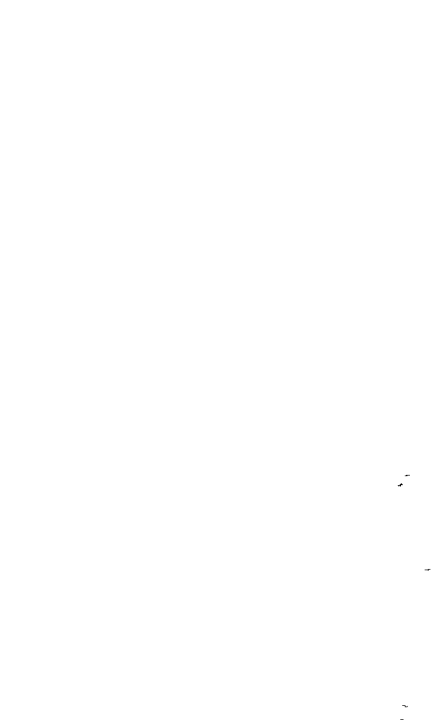
गारी इतनी, हाथ लगाये मली हाती थी। यह कलमुहा किसी वहान दफ्तर स भाग जाता था और उसकी कोठरी मे जा घसता था। उस दिन मेरी नजर पड गयी। असील सी गाव की लडकी, सहमी सहमी सी इस चक्र मे आगे क्या बोलती ?

धीरे बोल इनके घर म बदचलनी बहुत है। ये ही एक शरीफ ह। इनके चाचा ने भी दो दो रखल रखी हुई थी। इनकी चाची, बुढिया, दोपहर को अपने एक नौकर से पाव दबवाती थी। मैंने खुद देखा है। खाना खाने के बाद अपने कमर मे घुस जाती और पीछे पीछे मुस्टडा शकर पहुँच जाता।

अब ऐसी बातें छिपी तो नही रह सकती ना। एक दिन जग्ग ने ही देख लिया। इन्होने थमस मँगवाने के लिए जग्ग को घर पर भेजा। मैंने उसे थमम दी और वह अपनी कोठरी की तरफ चला गया। अचानक मैंने खिडकी के बाहर झाककर देखा। विक्की वही काला सूट पहन जग्गे की कोठरी म स बाहर निकल रहा था। 'विक्की बाबू !' जग्गे ने कहा। फिर उसका मुह जसे बन्द हो गया। फटी फटी आखो से उसे देखता रह गया। उधर विक्की बिना उसकी ओर देखे चुपचाप वहा से निकल गया। मेरा दिल धक धक करने लगा। मैंन कहा 'अब इसकी घरवाली की खर नही। यह उस धुन देगा। क्या मालूम जान म ही मार डाल। इन लोगो का कुछ पता थोडे ही लगता है। पर कोठरी के अन्दर से न हू न हा।

मै नहीं जानती जग्गा कितनी दर तक अन्दर रहा। उसने अपनी बीवी से कुछ कहा, या नहीं कहा। म तो जाकर लट गयी, पर मैंने मन ही मन कहा कि आज रात मैं इनसे बात करूँगी। या तो जग्गे का चलता करें, या उससे कह कि अपनी घरवाली को गाँव छोड आये। यहा इसका रहना ठीक नहा।

लेटे लेटे भी मेरे कान कोठरी की ओर लगे रहे। अभी वहा स रोने-चिल्लान, पीटने रोने की आवाज आयेगी। पर वहा बिल्कुल चुप ! मैंने मन ही मन कहा एसा शरीफ आदमी भी किस काम का जो अपनी घरवाली को काबू म नही रख सकता। दो लप्पड उसके मुह पर लगाता वह अपने आप सीधे रास्ते पर आ जाती। दस तरीके है औरत का सीधा

रास्त पर लाने के। पर यहा न हूँ, न हाँ।

पलग पर लेटे लेटे ही मुझ ऐसी घबराहट हुई, कि मुझे बाथरूम जाने की हाजत हो आयी। मुझे मुई कब्जी भी तो रहती है ना। राज रात का ईसबगोल की भूसी दूध मे डालकर लती हू तब जाकर सुबह पट साफ होता है। कभी कभी तो जान इतनी घबराती है कि क्या बताऊँ। एक बार पूरे पाच दिन तक कब्ज रही। ये मजाक करत थे। कहत थे कि अब बाथरूम जाआगी ता बाथरूम साफ करना मुश्किल हा जायेगा। हाय, अब ता हँसा भी नही जाता। हसती हूँ तो सास फूलन लगती है। मुझे बवासीर की शिकायत भी ता रहती है ना। यहाँ एक मुसीबत थाडे है। एक नही बीस दवाइया खा चुकी हूँ।

डॉक्टर कहता है, चला फिरा करा।' अब इस शरीर के साथ कौन चल फिर सकता है? थोड सा भी चलू, तो सास फूलन लगती है। डाक्टर कहता है, मिठाई मत खाया करा पर मुझस हाथ रोका ही नही जाता। घर मे दा तीन डिब्बे मिठाई के हर वक्त मौजूद रहते ह, पर बर्फी का टुकडा मुह मे डालने की दर है कि पेट म गुड गुड होने लगती है। डाक्टर मुआ बार बार कहता है मिठाइ खाना छोड दो।' पर एक टुकडा भी मुह मे न डालू तो फिर जगलो म जा बठू, दुनिया से फिर क्या लना है? मै डाक्टर से कहती हूँ, डाक्टर जी मुझे बठे-बैठे ही ठीक कर दा। न मेरी मिठाई बन्द करा न मुझे घूमन को कहा। अगर मुझे सर करके ही दुरुस्त होना है ता मुझे तुम्हारी क्या जरूरत है? जब आते हो, पच्चास पच्चास रुपय ले जाते हो। हम तुम्हे इतन पसे भी दें फिर भी तुम ठीक नही कर सको, ता फिर फीस किस बात की लेते हा? हम पाडी मजूर थोडे है कि घूमते फिरें।

मैंने डाटकर कहा ता डॉक्टर अपन आप सीधा हा गया। कहने लगा काई बात नही, खाना खान के बाद दो बडे चम्मच इस दवाई के पी लिया करो।' मैंने कहा अब आया ना सीधे रास्त पर! अब दो चम्मच राज पी लेती हूँ। डकार आनी तो बन्द हा गयी है पर कोई बात इधर उधर की हा जाय और मन घबरान लग, ता बाथरूम की हाजत हान

उस दिन क्लब मे गयी, तो हरचरन की बीवी औरतो

गाँठ रही थी। वह रही थी, मैं गात गालियाँ रोज खाती हूँ।' मन सुना, पर चुप रही, मैंने कहा यह भी कोई टेंशन की बात है? भगवान अहकार न बुलवाय पन्द्रह पन्द्रह गालियाँ भी रोज खायी हैं, पर बाहर जाकर ढिंढोरा नही पीटा कि दवाई की पन्द्रह गोलियाँ रोज खाते हैं। डॉक्टर घर का पक्का रखा हुआ है तीन सौ रुपया बँधा बँधाया उसे हर महीने देते है, घर म कोई बीमार हो या नही हो, अभी भी खानेवाले मेज पर जाकर देखो, कुछ नही तो दस दवाइयों की शीशियाँ वहाँ पर रखी होगी, कुछ ताकत की गोलियाँ कुछ हाजम की और तरह तरह की। जग्गा को सब मालूम था कि कौन सी गोली मुझे किस वक्त चाहिए। अपने आप लाकर दे दिया करता था। वह गया, तो दवाइयो का सारा सिलसिला ही खराब हो गया। तुम कुछ लो ना तुम तो कुछ भी नही खा रही हो।

उस दिन जो शाम को ये घर आये तो आते ही कहने लगे 'कहाँ है जग्गा? उससे कहो पाँच आदमी रात को खाना खाने आयेंगे, बढ़िया तरकारियाँ बनाये और साग मीट बनाये। जग्गा आया, तो गुमसुम इनके सामने आकर खडा हो गया। चेहरा ऐसा पीला जैसा मुर्दे का होता है। इन्होंने बडे लाड से पूछा, 'क्या जग्गे क्या बात है इतना चुप क्यो है? क्या गाँव से कोई बुरी खबर आयी है? पर जग्गा चुप, न हूँ न हाँ। इन्हें कहता भी तो क्या? इनसे कैसे कहता कि आपका भाई मेरी घरवाली से मुँह काला कर रहा है। कोई गरत भी तो होती है। इनके आगे तो वह आँख उठाकर भी नही देखता था। पर इनकी तबीयत को तो तुम जानती हो बिगड जायें, तो सख्त बिगडते है आगा पीछा नही देखते। और तो और मुझे भी नौकरो के सामने बेइज्जत कर देते है।

जब जग्गा कुछ नही बोला तो इन्हे गुस्सा आ गया। जग्गा पत्थर की मूरत बना खडा था। जाने उसके मन मे क्या था। बोल देता तो अपने दिल का गुबार तो निकाल लेता। मगर वह चुप!

ये उसे डाटने लगे तो मैने रोक दिया। मैंने कहा जी, मेहमान आने वाले है अभी सारा काम पडा है जा जग्गा, तू रसोइघर मे चल। वह उसी तरह गुमसुम रसोईघर मे चला गया। थोडी देर बाद मैं रसोईघर मे गयी कि खाने वाने का देखूँ तो यह वैसे का वैसा गुमसुम खडा था। रसोई-

घर के बीचाबीच पत्थर की मूरत बना हुआ। मैंने कहा इसकी बुद्धि पथरा गयी है, यह कोई काम नहीं कर पायगा। मैं उन्हीं कदमों लौट आयी। मैंने इनसे कहा, जी, इसे तो कुछ हो गया है। यह बोलता नहीं मुझे तो डर लगता है। तुम बाहर से खाना मँगवा लो और इसे आज के दिन छुट्टी दे दो।

मैंने इनसे कहा, तो ये खुद उठकर रसोईघर की तरफ चले गये। और बजाय उसे छुट्टी देने के, उसे फटकारने लगे। मैं थर थर काँपने लगी। क्या मालूम, जग्गे ने कोई छुरा नेफे में छिपा रखा हो। इन लोगों का क्या भरोसा? 'बदजात बोलता क्यों नहीं?' ये ऐसे चिल्लाये जैसे मैंने इन्हें कभी चिल्लाते नहीं सुना। मेरा तो ऊपर का साँस ऊपर और नीचे का नीचे। मैं करूँ तो क्या करूँ? मैं भागकर इनके पास गयी। मैंने सोचा, इन्हें खींचकर बाहर ले आऊँगी, पर इन्होंने मेरा हाथ झटक दिया। 'कमीने मैं बार बार पूछ रहा हूँ बता क्या बात है और तू बोलता तक नहीं। तेरी जबान घिसती है, मुझे जवाब देने में? निकल जा यहाँ से अभी चला जा, मेरी आँखों से दूर हो जा।' और जग्गे को कान से पकड़कर रसोईघर के बाहर ले आये। मैं इन्हें समझाने लगी, कुछ न कहो जी घण्टे दो घण्टे में मेहमान आनेवाले हैं और अभी तक कुछ भी नहीं बना। यह चला जायगा तो खाना कौन बनायेगा। जा जग्गा, जा, तू रसोईघर में जा। और मैं इन्हें जैसे तैसे खींच लायी।

रात को जब मेहमान चले गये हाँ जी, बनाया जग्गे ने, सारा खाना बनाया। बड़ा अच्छा खाना बनाया, पर रहा गुमसुम मुँह से एक लफ्ज नहीं बोला खाना खाते खाते इनका दिल भी पसीज गया! मेहमानों के सामने ही उससे कहने लगे, 'जग्गे! जा तेरी दस रुपये तरक्की! राय साहब कहते हैं साग मीट बहुत अच्छा बना है, शाबाश! जा तेरा कसूर माफ किया। ये देने पर आयें, तो मुँहमाँगी मुराद पूरी करते हैं। इनका दिल तो समन्दर है।

रात को मुझसे नहीं रहा गया। मैंने कहा, जी, बिक्की बड़ा हो गया है, अब इसकी शादी की फिक्र करो। तो कहने लगे, तुम्हें इसकी शादी की क्या पड़ी है अभी इसकी उम्र ही क्या है अभी तो इसके मुँह पर से

दूध भी नही सूखा । मैंन कहा, जी, शादी नही कराग ता छूटा तुडाय साँड की तरह जगह जगह मुह मारेगा। मैं गोल माल नज्ग म कहा। पर विक्की स उन्हें बहुत प्यार है इस अपन बच्चा की तरह इन्हान पाला है। उसकी बुराइ य नही सुन सकते। मैंने फिर स उसकी शादी की बात चलायी, तो कहन लगे, 'मार त जितना मुह मारता है, अभी उसकी उम्र ही क्या है दो दिन हँस खेल ले, ब्याह के बन्धन म ता एक दिन बँध ही जायगा।

मैंन कहा जी, जवान लडका है गलत रास्त पर भी पड सकता है। इसका ता जितनी जल्दी हा, ब्याह कर दो। इस पर कहने लगे, 'अभी तो इसन पढाई भी पूरी नही की। कुछ नही तो तीस चालीस हजार इसकी पढाई पर खच कर चुका हूँ। इसकी शादी करूँ, तो कम-से कम यह रकम ता वसूल हा। और अभी इसन बी ए पास भी नही किया।'

मद लोग बडे समझदार हाते हैं, इन्ह तो दस बातो का ध्यान रहता है। अब मैं और आगे क्या कहती मैंन इतना भर कहा आप इसके कान खीचत रहा कीजिए जवानी बडी मस्तानी होती है। इस पर ये बिगड उठ तुम्हे कुछ मालूम है क्या ? बोलती क्या नही हो ?' ये इतनी रुखाई से बोले कि मैं चुप हो गयी। मैंने सोचा, फिर कभी मौका मिलेगा तो बात करूँगी इन्ह आराम स समझाऊँगी पर मुझ क्या मालूम था कि दूसर ही दिन गुल खिलनवाला है।

दूसरे दिन सुबह यही आठ-साढे आठ का वक्त हागा मैं पिछले बरामद मे बठी बाल सुखा रही थी। वहा धूप अच्छी पडती है। मैंने सोचा बाल सूख जायें तो उन्हे काला करूँ। जग्गे की घरवाली बडे सँवारकर मेरे बाल बनाती थी। मैंन सोचा, बाल सूख जायें तो उस बुला लूगी। यही आठ साढे आठ का वक्त होगा। उमी वक्त फ्रटियर मेल आती है। घर के पिछवाडे थोडी दूर पर ही तो रेलवे लाइन है। अगर गाडियो को सिगनल नही मिल तो यही पर रुक जाती है, फिर धीरे धीरे आगे बढती है। पर फ्रटियर मेल यहा नही रुकती। वही एक गाडी है जा यहा खडी नही होती।

जग्ग न पहले से ही सब कुछ साच रखा होगा। उधर से गाडी आयी,

तो जग्गा अपनी कोठरी म से निकला। मैंने कहा, जग्गे सुरस्तों को मेरे पास भेज दे। पर मुझे लगा, जसे उसने सुना ही नही। वह भागकर पिछवाडे की दीवार फाद गया और रेलवे लाइन की ढलान चढने लगा। यह सब पलक मारते हो गया। उसने मुडकर पीछे देखा ही नही, मेरी भी अक्कल मारी गयी, मुझे सूझा ही नही कि वह क्या भागा जा रहा है। मैंने सोचा, किसी काम से जा रहा होगा। गाडी का तो मुझे खयाल ही नही आया। वरना मैं उस रोक नही देती ? ढलान चढन के बाद मैंने नही देखा कि वह कहा गया है किस तरह गया है !

झूठ क्या बोलू शाम का वक्त है। बस, फिर मुझे नजर नही आया। मुझे तो खटका तब भी नही हुआ, जब गाडी धम धम करती आयी और कुछ ही दर बाद पहिए घसीटती रुक गयी। पहिए घिसटने की आवाज आती है ना, जस किसी ने चेन खींची हो। पर मैंने खयाल नही किया, यहाँ रोज गाडिया रुकती है। मैंने सोचा किसी ने चेन खीची होगी। थोडी देर मे माली भागा भागा आया। कहने लगा, कोई हादसा हो गया है और वह भी पिछवाडे की दीवार फादकर ढलान चढन लगा। मुझे फिर भी शक नही हुआ। थोडी देर बाद पडोसवाले नौकर ने चिल्लाकर कहा, जग्गा मारा गया है। जग्गा गाडी के नीचे कुचला गया है।

मेरा दिल बुरी तरह से धक धक करने लगा। उसके साथ उस थी ना। वह तो जसे घर का आदमी था कोई पराया थोडे ही था। ये तो उसके साथ बेटे जैसा सुलूक करते थे। वह भी इ‍ह बाप की तरह मानता था। यही चीज उसे अ‍दर-ही अन्दर खा गयी। मैं तो अब भी कहती हूँ, अगर जग्गा बोल पडता, तो बच जाता। ये जरूर कोई न कोई रास्ता ढूढ निकालते। ये सब तरकीबें जानते हैं। बडे समझदार है। पर वह बोला ही नही।

वह दिन तो ऐसा बुरा बीता, ऐसा बुरा कि तुम्ह क्या बताऊ ! बार-बार टेलिफोन आयें, तीन बार तो पुलिस का इन्स्पेक्टर आया। बार बार इ‍ह बुलाता, बार-बार कोठरी मे झाँककर देखता। अ‍दर बठी थी, वह कुलच्छणी ! मौका देखने के बहाने इ‍स्पेक्टर बार-बार अ‍दर जाये। मद तो भेडिये की तरह औरत को घूरते है ना। और वह अ‍दर बेहोश पडी थी। उसे बार बार गश आ रहे थे। अब मैं किस काम की ! मुझमे अपनी

जान नहीं सँभाली जाती। दो एक बार मन में आया भी कि जाऊँ, मुरम्ताँ को देख आऊँ। पर इन्होंने मना कर दिया। ये कहने लगे, फौजदारी का मामला है इससे दूर ही रहो। जब तक पुलिस अपनी कारवाई न कर ले, कोठरी में कदम नहीं रखना। मर्द समझदार होते हैं ना, उन्होंने दुनिया देखी होती है। पुलिस ने इनसे पूछा, तो इन्होंने कहा, 'वह पिछले दिन से ही पगलाया पगलाया सा लग रहा था। मियाँ बीवी की आपस में कोई बात हुई हो, तो हम नहीं जानते। नौकरों की अन्दर की बातों से मालिकों का क्या काम?' एक बार अन्दर आये, तो मैंने इनसे कहा, 'जी, तुम बिक्की को वहीं बाहर भेज दो। मैं कहूँ, इन्हें मालूम नहीं, पर आस पास के किसी आदमी को मालूम हुआ, तो बखेड़ा उठ खड़ा होगा।' पर इन्होंने समझदारी की। बिक्की को बाहर नहीं भेजा। मर्द लोग समझदार होते हैं बिक्की लापता हो जाता, तो पुलिस को शक पड़ सकता था, ना।

एक मठरी और लो! लो ना! तुमने तो कुछ खाया ही नहीं। खाओगी तो सेहत बनी रहेगी, बस मुटियाना नहीं। मेरी तरह मोटी नहीं होना, मोटी देह किस काम की। तुम आ गयीं, तो घण्टा, आध घण्टा, मन बहल गया। कभी-कभी आ जाया करो ना। तुम दूर तो नहीं रहती हो। कहो तो मोटर भेज दिया करूँ? अकेले में तो घर भाँय भाँय करता है। ये तो दफ्तर से आते हैं, तो सीधे ब्रिज खेलने चले जाते हैं। जब तक तीन-चार घण्टे ब्रिज न खेल लें, इन्हें चैन नहीं मिलता। यह ताश तो मेरी सौतन आयी है, इस घर में जब से ब्याही आयी हूँ यह मेरा पीछा नहीं छोड़ती। रोज शाम को इन्हें उड़ा ले जाती है। हाय, अब तो हँस भी नहीं सकती हूँ। हँसती हूँ तो सांस फूलने लगता है। छाती में शाँ शाँ होती है। मैं इनसे कहूँ तुम ताश बहुत न खेला करो जी। अपनी सेहत का भी कुछ खयाल किया करो। जानती हो, क्या कहते हैं? कहने लगे इसी ताश के तुफल ही से तो मेरे दस काम सँवरते हैं। पुलिस का बड़ा अफसर ताश का साथी था, तभी जगेवाला मामला रफा दफा हो गया, वरना घर में से कोई खुदकुशी करे तो पुलिसवाले क्या घरवालों को परेशान नहीं करेंगे?' मैंने कहा ठीक है, मर्द लोग जानें हम क्या जानें।' बस, वही दिन हमारा बुरा गुजरा। इनको दिन के वक्त सोने की आदत है, थोड़ा सो न लें, तो बदन

भारी भारी महसूस करने लगता है, पर कोई सोन द ता ! उस दिन वह भी नही हुआ। सोन के लिए लेटें, तो कभी टलिफोन की घण्टी बजन लगे, तो कभी कोई सरकारी आदमी आ जाय। पर दूसरे दिन से चन हा गया। फिर कोई नही आया।

जब मामला रफा दफा हा गया, तो एक दिन मैंने बिक्की की सारी करतूत इ हे बता दी। ये कहने लग 'मुझे तो पहले दिन से मालूम था।' मैं हक्की बक्की इनके मुह की ओर दखने लगी। जवानी मे सभी बेवकूफिया करत हैं, इसने कर ली तो क्या हुआ। मैंने कहा जी, बिक्की का समझा तो दिया होता।' कहन लग, 'काई वेसवा के पास तो नही गया काई बीमारी तो नही ले आया, हो गयी बात जो होनी थी, आगे के लिए इसे खुद कान हो जायेंगे।' मैंने कहा, 'जी, पर बात तो अच्छी नही ना, ऐसा बिक्की का करना तो नही चाहिए था ना। बिक्की ने एसा नही किया होता, तो जग्गा जान पर तो नही खेल जाता ना। तो कहने लगे, 'तुम क्या चाहती हो भाई को पुलिस म दे देता ?' 'पर जी उसने जुर्म तो बहुत बडा किया है ना।' ये और भी बिगड उठे। उसका जुम देखता या उसकी जान बचाता ? तुम क्या चाहती हो उसे काल काठरी मे भिजवा देता ?'

फिर थोडी देर बाद धीमे से बोले, मुझे समझाने लग, औव्वल ता कौन जाने बिक्की अपन आप अन्दर गया था या जग्गे की घरवाली उसे इशारे करती रही थी। ताली एक हाथ से तो नही बजती। औरत बढ़ावा देती है, तभी मद बहकता है। लडकी इशारा भी कर दे, तो आदमी बौरा जाता है कोठरी के बाहर पदा लगा रहता है। क्या मालूम पर्दे की आट मे उसे इशारे करती रही हो। औरत खुद न चाहती, हो क्या मजाल थी कि बिक्की उसके कमरे मे जाता। ऐसे ही कोई किसी के कमरे मे घुस जाता है ? इतनी ही शरीफजादी थी, तो अन्दर से कमरा बन्द करके क्यो नही बठती थी ? अन्दर से साकल लगाकर बठती। तेरा मद बाहर काम पर गया है तू कोठरी म अकेली है, तू अन्दर से कोठरी बन्द करके बठ। दरवाजा खालकर बठने का तरा क्या मतलब है ? दिन के वक्त तेरे पास आ सकती थी। उस किसी ने मना किया था ?'

मैं सुनती रही, मैं भी सोचू किसी के दिल की कौन जानता है लडकी

के दिल म चोर था, या विक्की के दिल म, भगवान जान।

आखिर म जी, इन्हान सारा मामला सँभाल लिया, इनम सब सन्तुष्ट हा गय। इन्ह भगवान ने ऐसी समभनारी दी है इनकी काई कसम तक नही खाता। सभी इनके सामन हाथ जोडत है। य जल्दी घबरा नही जाते ना यही इनकी सबस बडी खूबी है। काई दूसरा हाना, तो घबरा जाता। जग्ग का भाई गाँव स आया, बहुत रोया धोया, उस इन्होंने दा सौ रुपय निकालकर द दिये। जग्गे की घरवाली का बाप आया। उम भी इन्हाने पसे दिये। मैंने इनस कहा, 'जी, मामला रफा दफा हो गया है अब य हमारे क्या लगते हैं तुम पस लुटा रहे हो। पर नही, य कहने लग, 'जग्गे ने दस साल तक हमारी सवा की है। इस हम कसे भूल सक्त हैं।' कहन लग, सौ पच्चास दे दो, तो गरीब का मुह बन्द हो जाता है। य सबका भला सोचत हैं, किसी का बुरा नही सोचत। हर किसी की मदद हो करेंगे।

यह जरा घण्टी तो बजाना। मुए जानत भी हैं रात पड गयी है, मगर मजाल है, जो अपन आप आकर बत्ती जलायें। बार बार घण्टी बजानी पडती है। काना म तेल डाले पडे रहते हैं। अब आयी हो तो खाना खाकर जाना। य जाने कब लौटेंगे। कभी दस बजे आत हैं कभी खाना खाकर आत हैं। मैं दिन भर अकेली बठी कौब्वे उडाती रहती हूँ। अब खाना खाये बिना तो मैं तुम्हें जान ही नहीं दूगी। तुम आ गयी, तो घडी भर दिल बहल गया। हमने अपनी बातें तो अभी तक की ही नही। दोना बठी बातें करेंगी। तुमने साग मीट का पूछा तो बीच म मुए जग्गे की बात चल पडी। मैं तुम्हे खाना खाये बिना तो जाने नहीं दूगी

# पिकनिक

आज गौरी सिर पर खाट उठा लायी है। पूरा सन्तुलन बनाये चली आ रही है किसी सरकस के नट की भांति। खाट को सिर पर उठा रखा है, दूर से लगता है खाट अपनी टांगों के बल चली आ रही है। खाट के नीचे, बायें कन्धे पर उसकी सबसे छोटी बच्ची चिपकी बैठी है। दूसरा बच्चा दायीं ओर बगल में है। तीसरे बच्चे को बायें हाथ की उंगली से लगाये हुए है, और चौथा दस कदम पीछे घिसटता आ रहा है। वास्तव में यह चौथा बच्चा गौरी का अपना बच्चा नहीं है यह उसकी मां का सबसे छोटा बेटा है, गौरी का सगा भाई है। और सच तो यह है कि यह उसकी मां का भी सबसे छोटा बच्चा नहीं है, नाली के किनारे थिगलियों में लिपटा पीला-सा एक और बच्चा भी इसके साथ कभी-कभी पड़ा देखा गया है। वह उसकी मां का सबसे छोटा बच्चा है। गौरी के अपने तीन ही बच्चे हैं और चौथा पेट में है।

गौरी मुहल्ले में पहुँच गयी है। अभी सुबह के सात बजे हैं, हवा में ठिठुरन है, गौरी समेत सबकी नाक बह रही है। बाबू हरगोपाल के घर के सामने पहुंचकर गौरी रुक गयी है। खड़े-खड़े ही गौरी ने दो बच्चों को उंडेलकर जमीन पर डाल दिया है और फिर दोनों हाथों से खाट सिर पर से उतारकर नीचे पटक दी है। गौरी के सिर पर उलझे रूखे बालों का घोंसला खाट के बोझ के नीचे दबकर पिचक गया है और घिसटती मैली धोती और ज्यादा उरक गयी है।

गौरी अपने सबसे छोटे बच्चे को कन्धे पर से उतारकर बाबू हरगोपाल के घर के सामनेवाली चौड़ी सूखी नाली में डालने जा रही थी जब वह ठिठक गयी। कुछ दिनों से वह इसे यहीं डाल दिया करती थी क्योंकि एक

बार बच्चे को नाली म डाल दो तो वह नाली म स निकल नही सकता, इसान का बच्चा होने के कारण छिपकली की तरह रेंगकर बाहर नही आ सकता, और गौरी निश्चित होकर घरो मे चौका बतन करत चली जाती थी। पर आज उसने देखा कि बाबू हरगोपाल ने नाली और घर की दीवार के बीच, अपनी दूकान के अनेक बक्स, एक के ऊपर एक, फिर से लगा दिय है। कल भी ऐसा ही हुआ था, और वह बच्चे को यहा स उठाकर काने वाल डाक्टर साहिब के घर के सामने डाल गयी थी। पर वहा पर नाली नही थी, इसी कारण बच्चा बार बार घिसटता हुआ सडक के बीच तक चला गया था, और गौरी का बार बार काम छोडकर उसके पीछे भागना पडा था। यही परेशानी थी। इसीलिए आज गौरी खाट उठा लायी है। खाट पर पडा रहगा तो घिसटता हुआ सडक तक ता नही जायेगा। पर सबसे अच्छा यही है कि नाली म पडा रहे। नाली के किनारे रखे बक्सो के बावजूद, उसन दो एक बार बच्चे को नाली म डाला, फिर उठाया, फिर डाला, फिर उठाया, बस ही जैसे नहलाते समय बच्चे को हाउज म डालते निकालत हैं पर फिर, बक्सा के उखडे कील नाली के किनार तक बढे हुए थ। होनहार नाली म स न भी निकल पाये ता भी इन कीलो स उस खरोच लग सकती है, उसका बदन छिल सकता है। गौरी समझ गयी कि बाबू हरगोपाल नही चाहते कि गौरी अपने बच्चा को यहा छोड जाया करे, इसीलिए वह कल स यहा खाली बक्स डलवान लगे हैं। गौरी ने अपनी बच्ची को उठाया और अपनी फौज का साथ लिये खाट घसीटती हुई डाक्टर साहिब के घर की ओर जाने लगी, पर वह फिर ठिठक गयी। वहाँ दीवार के साथ डाक्टर साहिब ने आज अपनी कार खडी कर दी थी। कल तक तो डाक्टर साहिब अपनी कार घर के अन्दर आगन म खडी किया करत थे पर आज सुबह सवेरे ही उन्होने कार बाहर खडी कर दी। जाहिर है वह भी नही चाहत कि गौरी अपन बच्चा के साथ उनके घर के बाहर डेरा जमा ले।

गौरी बच्चे का उठाय खाट घसीटती हुई सडक के पार वकील साहिब के घर क सामन ले गयी जहाँ नीम का ऊँचा पेड है। सुबह सुबह उसे बच्च को यहाँ डालना ठीक नही लगता क्योकि नीम के पड के नीचे ठण्ड होती है। मगर इस वक्त गौरी का कोई और जगह सूझ ही नही रही थी।

खाट बिछ गयी है। ठिठुरता भास का लोथडा उस पर डाल दिया गया है, और गौरी पास ही जमीन पर टागें फनाकर बठ गयी है और बीडी मुनगाकर लम्बे लम्बे कश लेन लगी है।

आगन म वठे वकील साहिब न उस खाट बिछाते दखा है उनके मन को खटका भी हुआ है, पर फिर, देखा अनदेखा करके, वह अखबार बाचन मे लग गये ह।

दिन का काम शुरू करन से पहले गौरी रोज बीडी पीती है। बीडी पीते समय वह बच्चो की ओर भी नही देखती। कही गहर म खोकर वह बीडी के कश लगाती है। धुआ सीधा कलेजे को चाटकर लौटता है। बीडी के कश लगाते समय गौरी की आखें सिकुड जाती है, और लगता है जसे वह कही दूर देख रही है और गहरे विचारा मे खो गयी है। पर वास्तव मे गौरी कुछ भी नही सोच रही है। वह सिर पर खाट रखे दो बच्चो को उठाकर मील भर का रास्ता तय करके आयी है, और काम शुरू करने स पहले ही थक गयी है, इसी कारण उसकी आखें मुद रही है।

कभी-कभी काम पर जाने से पहले गौरी सडक के ही किनारे बच्चे को दूध पिलाने लगती है और दूध पिलाते पिलाते ही सा जाती है। एसा कई बार होता है। तब उसकी छाती उघडी की उघडी रह जाती है, और वह सडक के किनारे बेसुध पडी सो रही होती है, और बच्चा उसकी छाती पर पडा सो रहा होता है। और गौरी के नगे स्तना पर आने जानवालो की नजर पडने लगती है तो कुछ शरीफजादे ता बार-बार चक्कर काटन लगते है, और इस भद्र मुहल्ले के कुछ भद्रजन झरोखो, खिडकियो और आँगन की दीवारा के पीछे से उनकी झलक लेने लगते हैं।

"अबे ओ! लौट! इधर आ, नही तो जूता मारूँगी तरे सिर पर।"

गौरी न ढेला फेंका है। वह अपन मँझले नौनिहाल पर चिल्लायी है, जा अभी से सीधा सडक पर जा पहुँचा है, और वहा दोनो हाथ फलाय, सडक के बीचाबीच गाल गोल घूमन लगा है।

हरामजादे लौट आ! अभी मोटर आयगी, नीचे कुचला जायेगा।'

हरामजादा नही लौटा, अभी भी मुस्कराये जा रहा है और गाल-गाल चक्कर का खेल खेले जा रहा है और अब तीसरा पिल्ला भी उसके

साथ जा मिला है और दोनो सडका के बीचोबीच गोल गोल चक्कर खेलन लग हैं।

पर चौथा पिल्ला—गौरी का भाई—इस बीच आंखा स ओझल हो गया है। कल रात बारिश हुई थी, जिस कारण जगह-जगह पानी के पोखर बन गय हैं। इसे कही स खाली सिगरेटो की डिब्बियां मिल गयी हैं। पोखर के किनार सिगरेट की चांदी, गँदले पानी म भिगो भिगोकर अपन माथे पर लगा रहा है। इसे देखकर सामने के फ्लैट के छज्जे पर खडी गिडवानी की पत्नी अपन बट को बुला लायी है।

'देख गरीबो के बच्चे कितने मजबूत होते हैं। इतनी ठण्ड म भी पानी से खेल रहा है। इन्ह जुकाम नही होता, पर तुम्ह हर तीसरे दिन जुकाम हो जाता है।'

उधर गौरी का भाई अब पोखर के किनारे लेट गया है, और पोखर के पानी मे मुह डाल दिया है। गिडवानी की पत्नी और अधिक प्रभावित हो उठी है।

'देखा ? गन्दे पोखर का पानी पी रहा है। इस कुछ नही होगा। इधर मैं एक एक चीज को धोकर तुम्ह खिलाती हूँ फिर भी हर दूसरे दिन तू बामार पड जाता है।''

जाहिर है, गौरी ने इस मुहल्ले म शिशु पालन की मिसाल कायम कर दी है।

इधर आकर बठो, अपनी बहिन के पास। अगर यहां स उठे तो टागें तोड दूगी।'

गौरी फिर से चिल्लायी है। दोना बच्चे खाट के पास लौट आय हैं और पालथी मारकर खाट के पास बैठ गय है। खाट पर बच्चे माम की पीली पीली टागें मली मी कथरी मे से झाक रही हैं और गौरी फटी सी साडी का पल्लू कमर म खासती हुई, सडक पार के सामन उपरवाले फ्लट म झाडू बतन करन चली गयी है।

आज खाट उठा लायी है गौरा ?'

सीढिया के पास प्राफेसर की गोल मटाल पत्नी खडी थी।

'क्या करूँ बीबी, कलमुही कल बार बार सडक के बीच तक चली

गयी। खाट पर से अब उतरेगी नही।

'अब और बच्चे नही लेना गौरी यही बहुत है।" इस पर गौरी हँस दी।

'मैं कहा चाहती हूँ बीवी, पर मेरा घरवाला माने तो। ये लाग सुनते थोड़े ही हैं।"

"अब तुम्हे कुछ पसे वैसे भी देता है, या पहले की तरह तुम्ही से ऐंठता रहता है ?"

"एक कौड़ी नही दता बीवी, मारा खच मैं चलाती हूँ। इसे तो खुद खान की लत है। सारा वक्त पीछे पड़ा रहता है, आज पकौडियाँ खिला आज दाल छौंककर खिला। परमा मैं ऊपरवाली बीवी स पाच रुपय पेशगी मागकर ले गयी, वह भी मुझसे छीनकर ले गया। एसा हरामी है बीबीजी अपन लिए चन ल आयेगा। मरे सामने मुह चलाता रहेगा मुझसे पूछेगा भी नही।"

प्राफेसर की बीवी न गौरी को सिर स पाव तक देखा ता वितष्णा से बाली

'तने अपनी क्या हालत बना रखी है गौरी कैसी मैली कुचली बनी रहती है ? कुछ तो साफ सुथरा रहा कर।'

बीवी वक्त किसके पास है साफ सुथरा बनने का ? मली हूँ, फिर भी मुए इतना परेशान करते हैं, बन-सँवरकर रहूँ ता जीने ही नही देंग।"

और गौरी सीढिया चढ गयी।

वकील की पत्नी ने फाटक खोला तो घर के सामने खाट पड़ी देखी।

"ला जी, इसन तो यही पर डेरा डाल दिया है।

वकील साहिब न अखबार पर स सिर उठाया।

कौन ? किसन डेरा डाल दिया है ? वकील ने दगा अनदेखा करत हुए कहा।

"गौरी न और किसन ? अपना सारा लश्कर यहा उठा लायी है।'

'पडा रहने दो तुम्हारा क्या लेती है ? '

"कैसे पडा रहन दू ? दिन भर इसके बच्चे यहा गन्द डालेंग। दोपहर को सोने का थोडा मन हाता है, इधर इसके बच्च ऊधम मचायेंग। इन्हे

एक बार टील द दो तो ये टलते ही नहीं। मैं तो इन्हें यहां नहीं बठने दूगी।

"अच्छा तुम उन्हें कुछ मत कहना मैं खुद उन्हें समझा दूगा।"

'तुम क्या समझाओगे? तुम उस डॉक्टर वालत ता यहां बठती ही नहीं। मुहल्ले म और भी कोई घर है जिसके सामने इन लोगों न इस तरह डेरा डाल रखा हो? सिन्धी व्यापारी के घर के सामन बठत थे ना उसने उठा दिया। ठेकेदार के घर के सामने मद्रासी नौकरों का टोला बठता था उसन पुलिस को बुलवाकर उन्हें उठवा दिया।"

"बरसों की जान पहचान है, इसे तुम कैसे उठा सकती हो?"

"क्या नहीं उठा सकती? जान पहचान है तो क्या, अपना घर तो गन्दा नहीं करवा सकती! मैं तो इसे यहां नहीं बठने दूगी। '

वकील की पत्नी फाटक खोलकर बाहर आ गयी। सीधी खाट के पास पहुची एक ओर स खाट को उठाया और उसे घसीटती हुई सडक के पार ले गयी और डाक्टर के घर के बाहर मोटर के पास छोड आयी। तीनों बच्चे उसके पीछे पीछे चलत हुए खाट के पास जा खडे हुए। वकील की पत्नी लौट आयी और फाटक बन्द कर दिया। खाट खीचने से बच्ची जाग गयी है और जोर जोर स रोने लगी है। इस पर गौरी की तीन साल की मझली बेटी अपनी बहन को फिर स सुलाने के लिए खाट पर चढ गयी है, और अपनी मा की नकल करते हुए बच्ची को अपनी गोद म बठाने के लिए उसकी टाग खीचने लगी है। इस कोशिश मे वह स्वय खाट पर लुढ़क गया है, और अब अपने शरीर का सारा बोझ बच्ची पर डाले उसे दबोचती मथती जा रही है। पर बहिन के शरीर की गर्माहट पाकर बच्ची सचमुच चुप हो गयी है।

सडक पर चहल पहल शुरू हो गयी है। कुछ लोग धन कमाने निकल पडे हैं। मुहल्ले मे एक 'फिएट' कार आयी है, हर रोज सुबह आठ बजे आती है। एक सिन्धी सज्जन पूरी की पूरी एक डबल रोटी हाथ मे उठाये, एक एक स्लाइस गरीब बच्चों मे बाट रहे है क्योंकि उनके अपना बच्चा नहीं हुआ है। गौरी का लडका भी भागकर पहुच गया ह उसके सामने हाथ फलाने और माथे पर उल्टा हाथ रखकर बार बार सलाम करने लगा है। गौरी की तीन साल की बेटी की आंखों म अभी से भिखमगों का सा

भाव उतर आया है। सामने के फ्लैटवाली मिसेज गिडवानी भी दो बासी रोटियों पर तीन दिन पुराना मक्खन डालकर घर के बाहर चबूतरे पर रख आयी है, क्योंकि उसमें से बास आने लगी थी। इसे कोई गाय खा जाय तो भी ठीक किसी कुत्ते के मुंह में पड़ जाये तो भी ठीक, और जो गौरी के बच्चे उठाकर खा लें, तो भी ठीक। और गौरी के बच्चे सचमुच लपककर पहुँच गये हैं जिन्हें देखकर मिसेज गिडवानी फिर से अपने बेटे को सीख देने लगी है

'देखा? कैसी भूख में खाना खाते हैं! तुझे तो भूख ही नहीं लगती। बात बात पर नखरे करता है, यह नहीं खाऊँगा, वह नहीं खाऊँगा। देख तो लगता है जैसे पिकनिक कर रहे हैं।'

इसी बीच खाट पर पड़ी नन्ही बच्ची रेंगती हुई खाट की पाटी तक पहुँच गयी है। उसकी एक टांग खाट की पाटी के नीचे लटकने लगी है। अगर थोड़ा और सरककर आगे आ गयी तो खाट के ऐन नीचे दो ईंटें पड़ी हैं। बच्ची लुढ़क गयी तो उसका सिर फट सकता है कुछ भी हो सकता है। बच्ची खाट की पाटी पर टंगी हो गयी है अभी गिरी कि गिरी। गौरी, मकानों की दीवारों के पीछे न जाने कहां खो गयी है जाने किस घर में झाड़ू लगा रही है। बच्चे मांस का लोथड़ा, नाक और मुंह पर भिनभिनाती मक्खियां, अब उसकी दोनों टांगें खाट के नीचे लटक रही हैं और वह जार जार से रोने लगी है। दूर से बच्चे का चिल्लाना सुनकर घर के अन्दर बैठी वकील की पत्नी ने अपने पति से कहा

'अब बताओ मैंने ठीक किया या नहीं? अभी यह हाल है तो दिन में क्या होगा?'

पर गौरी उस समय किसी घर में चौका बर्तन नहीं कर रही थी, वह तो यहीं से थोड़ी दूर नुक्कड़वाले ढाबे के सामने खड़ी अपने पति से उलझ रही थी। यह भी कोई नयी घटना नहीं है, मुहल्ले में रोज का वाक्या है। पति पत्नी के बीच छीना झपटी हो रही है, और तमाशबीनों की भीड़ इकट्ठी होने लगी है।

"नहीं दूंगी, ये राशन के पैसे हैं। मर भी जाऊं तो भी नहीं दूंगी।"

गौरी बिफरकर चिल्लाने लगी है। गौरी जब बिफरती है तो उसका

चेहरा पीला पड जाता है और वह आग की पीली लपट की तरह कांपने लगती है।

गौरी का पति कोई काम धन्धा नही करता पर उसे चाट खाने की लत है। सडकों पर घूमता घामता मुहल्ले मे पहुँच जाता है और गौरी स पसे ऐंठने लगता है।

''ला पसे दे दे मैं कह रहा हूँ।' गौरी का पति भी चिल्लाने लगा है।

नही दूगी ये मैंने राशन के लिए रखे हैं।'

पसे दे दे नही तो मुझस बुरा कोई नहीं होगा। घर म घुसने नहीं दूगा।

कर ले मरा जो करना है। मैं एक पसा नही दूगी।''

भीड म कोई आदमी बीच मे पडकर कह रहा है

औरत जात पर हाथ उठाते शरम नही आती ?'

भीड म अपना समथक पाकर गौरी उस सम्बोधन करने लगी है

' राशन के पसे दे दू तो बच्चो को क्या खिलाऊगी बाबूजी ? इस तो चाट लगी है ढावे पर खाना खाने की। कहता है घर म घुसने नही दूगा। घर है कहा जिसमें घुसने नहीं देगा ? एक सडी हुई कोठरी है सर्दी गर्मी बच्चा को लेकर बाहर सोती हूँ। यह घर म नही घुसने देगा घर इसके बाप का है ।'

गौरी के कान मे सहसा बच्ची के रोने की आवाज आयी है और उसे रोता सुन, वह हडबडाकर भागने लगी है ''करमजली गिर पडी होगी। इस मौत आये ।'' और भागती हुई खाट की ओर लपक रही है।

पर बच्ची नहीं गिरी। उसकी बहिन रगाइस खाते खाते वहा पहुँच गयी है और उसकी टागो को पकडकर खाट के ऊपर उसे धकेलने लगी है।

खाट के पास पहुँचते ही गौरी ने बच्ची को उठा लिया है।

'अरे यह खाट यहा कैसे आ गयी ?'

गौरी ने कहा और सीधी एक चपत अपनी मँझली बेटी के मुह पर जड दी, हरामजादी यहाँ पर खाट को क्या लाने दिया ?

और मझली मा की बात का समझे बिना ही रोने लगी है।

गौरी ने दोनो हाथ कमर पर रखे और दायें बायें देखा। वकील की

पत्नी न ही यह काम किया होगा। वकील की पत्नी का कोई भरोसा नही। यहा किसी भी बीवी का कोई भरासा नही। कभी तो घुल घुलकर बातें करती है, और कभी इतनी रुखाई स पश आती है।

गौरी खाट को घसीटकर फिर स वकील के घर के सामने ले आयी है, और बच्ची को गोद में लेकर दूध पिलाने लगी है। पास मे खडी मँझली लडकी बिसूरती जा रही है।

बच्ची का दूध पिलाने के बाद गौरी उसे खाट पर डालकर फिर से काम पर जाने को हुई कि उधर स वकील की पत्नी बाहर निकल आयी है।

"यह नही चलेगा गौरी मैंने कह दिया।'

'क्या नही चलेगा बीबीजी ?"

"तुम यहा से हट जाओ किसी दूसरी जगह जाकर बठो।'

'कहा जाऊँ बीबी, आप ही बताओ। मैं तो आज खाट उठा लायी थी कि खाट पर बच्चा पडा रहगा, पर बीबी, आपने तो खाट ही खीचकर हटा दी।"

'यहा बीसियो घर है किसी दूसरे के घर के सामने जा बैठो।'

'यह जगह सडक स थोडा हटकर है, बीबी ।"

"नही, मैंने कह दिया जहा मन आये इन्ह ले जाओ। मैं तो तुम्हें यहा नही बैठने दूगी।'

"हम इधर बैठते हैं तो आपका क्या लेते है ?' गौरी ने भी तुनककर कहा। उसका चेहरा फिर से पीला पडने लगा था और वह बिफरने लगी थी।

"घर गन्दा होता है। तुम्हारे बच्चे जगह जगह से कचरा उठाकर यहा फेंक जाते हैं। और शोर होता है। अभी अभी तेरे बच्चे चिल्ला रहे थे।"

"अगर गन्द डालेंगे तो मैं साफ करके जाऊँगी, बीबीजी।'

"नही मेरे साथ बहस नही करो किसी दूसरे घर के सामन जाकर बठो। हमन तुम्हारा ठेका नही ले रखा है। बस, मैंने कह दिया। तुम यहा से उठ जाओ।'

'क्यो उठ जायें ? आपका क्या लेत है ?"

'हमारा घर गन्दा होता है।"

'यह आपका घर नही है यह सडक है।

'तुम लोगो मे हमदर्दी का यह मतलब तो नही कि तुम लोग हमारा घर ग दा करते रहो और हम लाग कुछ कह भी नही।

हम आपके घर मे नही बठे है, सडक पर बैठ है सडक आपकी नहीं है।'

मै चाहूँ तो एक मिनट मे तुम्ह यहाँ से उठवा सकती हूँ। यह मत समझो कि हम तुम्ह उठवा नही सकते।"

'उठवा के देख लो दखें ता हमे कौन यहा से उठवाता है।"

गौरी फिर से बिफर उठी है आग की लपट की तरह फिर से कापन लगी है।

मैं पुलिस म कहकर तुम्ह उठवा सकती हू। एक मिनट म उठवा सकती हू।'

गौरी ठिठककर वकील की पत्नी के चेहरे की ओर देखने लगी है। उस आशा नही थी कि वकील की पत्नी पुलिस को बुलान की बात कहगी।

और वकील की पत्नी लपककर फिर आगे बढ आयी है और एक हाथ से खाट की पाटी को उठाये, खाट का घसीटती हुई सडक क ऐन बीचोबीच पटककर, बडबडाती हुई लौट आयी है 'देखती हूँ तू कैसे यहा बठती है।"

उधर गौरी भी बौखला उठी है। वकील की पत्नी के लौटते ही वह फिर से खाट खीचकर वकील साहिब के घर के सामने ले आयी है।

गौरी कुछ देर तक वहाँ डोलती रही है। एक एक करके तीनो बच्चो को पकडकर लायी, सभी के मुह पर तमाचे मारे, 'खबरदार जो यहा से हिले," कहती हुई उन्ह खाट के साथ जसे चिपकाकर फिर से काम पर चली गयी है। गौरी अभी तक केवल तीन घर निवटा पायी है, और दिन का यह वक्त आ गया है। सात सात रुपये महीनावाले चौका-बतन के पाच घर अभी और पडे हैं।

घर के अन्दर वकील की पत्नी, पति को समझाने लगी

तुमसे कई बार कहा है कि एक कुत्ता घर म रख लो। कुत्ता रहे तो किसी को घर के सामने नहीं बठने देता।'

'कुत्ता किसी को काट खाये तो? और लेने के देने पड जायें।' वकील साहिब बोले।

"काट खाय तो हमारी बला म ! एक दिन म ये लोग यहाँ से उठ जायेंगे। कुत्ते के भूकने मे ही लोग डर जाते हैं। तुम एक कुत्ता लेकर आओ तो। पीछे सरदारजी के घर के बाहर राजस्थानी नौकरो का टोला बैठता था। वह कुत्ता ले आये। एक दिन मे सभी नौकर वहा से उठ गये। या भी आज-कल चोरी चमारी बहुत होती है, कुत्ता रहे तो घर की हिफाजत रहती है।'

"अब मैं कुत्ते कहा ढूंढता फिरूँ ? तुम समझा बुझाकर काम निकालना तो जानती नही हो।"

'अब य लाग आँखें दिखाने लगे है, किसी के समझाये नही समझते। 'हम तुम्हारे घर म नही बैठे हैं' हम सडक पर बठे हैं। तुम कुत्ता ले आओ जी। दो दिन पहल पिछवाडे के कुमार साहिब कुत्ता लाये है, कुत्ता घर म रहे आदमी निश्चित हो जाता है।"

तभी वकील साहिब की पत्नी की नजर गेट पर पडी, और देखते ही उसे आग लग गयी। गौरी फिर से बच्ची की खाट उनके घर के सामने बिछाकर चली गयी थी, और उसके तीनो बच्चे खाट के आस पास ऊधम मचा रहे थे।

'वे फिर आ पहुँचे हैं। देखा ? अब मैं बार बार उसकी खाट खीचती फिरूँ ?"

तभी वकील की पत्नी को एक विचार सूझा

"सुनो जी मैं कुमार साहिब के घर से उनका कुत्ता माग लाती हूँ। कहूँगी एक दिन के लिए दे दें। कुत्ता गेट पर होगा तो गौरी यहा से उठ जायेगी।'

और वकील साहिब इस बारे मे कुछ कहते न कहते कि उनकी पत्नी पडोस म कुत्ता लेन चली गयी।

कुत्ता आ गया है और गेट पर जम गया है। साथ मे खासी लम्बी चेन भी है ताकि कुत्ता एक ही जगह पर खडा भूकता ही न रहे, आगे लपककर काटने की धमकी भी दे सके। मँझले कद का बडे बडे काले बालोवाला कुत्ता है उसे देखते ही बच्चे डरकर भाग जायेंगे। दबी नाक और लाल-लाल आखो के कारण भयानक नजर आता है। लेकिन कुत्ता अपनी नस्ल से इतना नही पहचाना जाता जितना अपने दातो से। वकील की पत्नी ने

गेट को अन्दर स बन्द किया है और घर के अन्दर लौट आयी हैं।

वकील की पत्नी रसोईघर मे चली गयी है, लेकिन उसके कान बाहर की ओर ही लगे है। अौव्वल तो उसे पूण विश्वास है कि कुत्ते को देखते ही गौरी खाट उठाकर ले जायगी और बच्चे अपने आप वहाँ से भाग खडे होंगे।

थोडी देर बाद उस गट की ओर से शोर सुनायी देने लगा। बच्चा का चिल्ल पा ऊँची होती जा रही थी। कही कुत्ते ने किसी बच्चे को काट ही न खाया हो ? काट खाया है तो क्या, कल स यहा नही बैठेंगे, वकील की पत्नी बडबडायी।

उसने खिडकी मे से झाककर देखा। खाट ज्यों की त्यो वही रखी थी। फिर वह भागकर बाहर निकल आयी। गेट के पास पहुँची तो जसे उस काठ मार गया हो। कुत्ता धोखा दे गया था गौरी के बच्चो को काटने के बजाय उनक साथ खेलन लगा था। गौरी की मॅझली बेटी ने कुत्ते के दोनो कान पकड रखे थे और कुत्ता उसका हाथ चाट जा रहा था। गौरी के तीनो बच्चे ही नही बल्कि आस पास के अनक बच्चे भी जमा हो गये थे और कुत्ते के साथ खेलने मे मस्त थे और बराबर किलकारियाँ भरे जा रहे थे। कोई उसकी आखो मे उँगली राम रहा था, तो काई उसकी पीठ पर बैठने की कोशिश कर रहा था।

वकील की पत्नी होठ काटकर रह गयी। शाम के साये घिरने लगे थे जब गौरी ने खाट उठायी, बच्चो को कधे से चिपकाया और मील भर का वापसी सफर तय करन के लिए मुहल्ल के बाहर जाने लगी। गेट पर बँधा कुत्ता देखकर समझ गयी कि यहाँ भी अब उसके लिए ठौर नही है।

नागदा से उज्जैन को जानेवाली गाडी देर से प्लेटफार्म पर खडी मुसाफिरो की राह देख रही थी। स्टेशन का यह हिस्सा अलग थलग और सूना सूना सा था जहाँ न खोमचवाले थे, न चाय का स्टाल, न बेंचो पर सोये मुसाफिर। केवल एक डिब्बे के सामने ऊँचे लम्बे कद का एक हवलदार खडा था। अधेड उम्र का, छरहरे बदन का सिपाही, खाकी वर्दी के ऊपर गहरे नीले रग की किश्ती टोपी लगाये था बाजू पर लगी तीन धारियो से ही जान पडता था कि लम्बी उम्र लाघ चुकने के बावजूद हवलदार के पद से सतुष्ट है। कन्धे पर से हथकडी लटक रही थी।

गाडी छूटने मे आधा घण्टा बाकी था, इसलिए किसी किसी वक्त कोई इक्का दुक्का मुसाफिर ही गाडी की ओर आता। एक पगडधारी किसान और उसकी पत्नी पुल की ओर से बढते हुए आये। गाव से आनेवाला हर मुसाफिर घबराकर ही गाडी की ओर लपकता है और जो डिब्बा नजर आये, उसी मे चढ जाने की कोशिश करता है। सिर पर गठर उठाये दोनो डिब्बे मे चढने लगे तो हवलदार ने हाथ बढाकर रोक दिया

"इधर नही, आगे जाओ।"

किसान और उसकी पत्नी हडबडाकर पीछे हट गये। एक बार डिब्बे के अन्दर झाककर देखा, फिर हवलदार की ओर देखा और बिना कुछ कहे अगले डिब्बो की ओर बढ गये।

डिब्बे के अन्दर पाच या छह मुसाफिर आराम से बैठे थे और लगभग सभी पान चबाते हुए सिगरेट के कश ले रहे थे। सभी पाजामा कुर्ता मे मलबूस थे जो हमारे देश मे साहित्यकारो की पोशाक बन गयी है। सफेद बालो और मसनूई दातावाले एक सज्जन ने गले मे दुपट्टा भी डाल रखा

था, जो हर कवि हमारे देश म बुजुग होने पर अपन आप डाल लेता है। क-धा का छूते वाल और आखो पर चश्मा यह सज्जन एक पत्रिका पढन म मशगूल थे। जब कभी बाहर खडा सिपाही किसी मुसाफिर को डाटकर आगे बढ जाने का हुक्म देता, तो बुजुग कवि पत्रिका पर स आख उठाकर देखत और अपन साथिया मे कहते, "है जीवटवाला! किसी को अ-दर नही आने देता।'

इतने म एक और मुसाफिर पाजामा-कुता पहने और क-धे पर से झोला लटकाये डिब्बे के पास पहुँचा, तो हवलदार ने पैनी नजर से उसकी ओर देखकर कहा 'आप कवि सम्मेलन मे जा रहे हैं साहिब?"

मुसाफिर ठिठका। साहित्यकार का यो भी सिपाही को देखकर दम खुश्क हाता है, इधर तो वह क-धे पर से हथकडी लटकाये खडा था।

'फरमाइए!" मुसाफिर ने झेंपकर पूछा।

'आप मेरे सवाल का जवाब दीजिए हुजूर! क्या आप कवि सम्मेलन मे जा रहे हैं?"

इतने मे डिब्बे के अ-दर से आवाज आयी

'अरे आओ, एहसान, सीधे अ-दर चले आओ! आओ, आओ!"

एहसान साहब ने डिब्बे के अ-दर झाककर देखा और अपने कवि मित्रो को पहचानते हुए हँसकर हाथ हिला दिया। हवलदार ने आगे बढकर डिब्बे का दरवाजा खोल दिया। 'एहसान साहब आओ आओ और शायराना हँसी मजाक के बीच, डिब्बे के अ-दर अपने दास्ता के साथ जमकर बठ गये।

हवलदार ने अपनी बत्तीसी दिखात हुए अ-दर झाककर कहा, "हम देखते ही समझ गये थे कि शायर हैं। क्यो साहिब, चाय मँगवाऊँ? आपकी सेवा करना हमारा फज है।'

फिर पीछे मुडकर प्लेटफाम पर जाते हुए एक रेल-कमचारी को डपट कर बोला

'चाय ले आ, सात जना के लिए। गरम, कडक चाय।'

रेल के मुलाजिम न एक नजर हवलदार पर डाली, फिर एक नजर डिब्बे के अ-दर झाककर देखा कि पसे कौन देगा कोई देगा भी या नहीं! एक बार फिर सहमी सी नजर से हवलदार को देखा और चाय लाने

चला गया।

"हम हुक्म है हुजूर, आपको पलको पर बठाकर ले चलेंगे।" और बतियाने का लाभ सवरण न कर पाते हुए हवलदार दरवाजा खोलकर डिब्बे के अदर आ गया।

"ग्राप विद्वान लोग हैं, आलिम फाजिल हैं। आपकी सेवा का पुण्य कमा रहा हूँ। इसमे मेरा क्या है, मैं तो दास हूँ।" फिर हवलदार सीट पर बैठते हुए हाथ बाँधकर बोला "आपकी दया से दास के सब काम सुभीते से हो जात हैं। भगवान की नजर हो तो मालिक, कोई काम टेढा नही हाता। बडा बटा बी ए पास करके कारखान म अच्छे ओहदे पर लग गया है। छोटा अभी पढ रहा है। उसे भी, सुपरिटेंडेंट साहिब कहते है, कही लगवा देंगे। एक कुलच्छणी बेटी भी घर मे आयी थी। आपकी दया से उसके हाथ भी पीने कर दिये हैं। उस मालिक मे विश्वास हाना चाहिए। मालिक सब काम करवाता है।" हवलदार ने उत्तेजित सी आवाज मे कहा। कुछ कवियो ने एक दूसरे की ओर कनखियो से देखा और मुस्करा दिये।

'वह देखा साहिब, उधर, स्टेशन के जँगले के पार, मैदान के पीछे। देखा आपने ?"

सभी कवियो ने गर्दनें घुमाकर खिडकी के बाहर देखा। स्टेशन की रैलिंग के पार बीहड-सा मैदान था, जिसमे कही कहीं कुछ पौधे उग रहे थे, वरना बारिश के कारण कीच ही कीच था और मदान के पार धूसर, टूटे-फूटे कस्बई मकानो का झुरमुट था और उस झुरमुट के पीछे किसी मदिर का कलश नजर आ रहा था। कवियो की समझ मे नही आया कि हवलदार क्या दिखाना चाहता है।

"यह मदिर आपके दास न बनवाया है। हवलदार कह रहा था, 'मैंने कहा दुनिया मे आकर भगवान के नाम का मदिर नही बनवाया ता क्या किया। इस पुण्य काम मे पाच साल लग गये। और सच बताऊ आपको मुझे कुछ भी नही करना पडा। सब काम उस मालिक न करवाया। उमन तजनी आकाश की ओर उठाते हुए कहा, 'मैंने एक पसा किसी से नही माँगा एक कौडी किसी से दान मे नही ली। और मदिर खडा हो गया है।" और हवलदार ने फिर हाथ जोड दिये, कुछ मत पूछो साहिब

मालिक का ... /५८

ढेर रखे हैं। भगवान का हुक्म होता, उठा लाओ दस स्लीपर, और मैं दिन हो या रात, जब तक दस स्लीपर उठवाकर मंदिर के आगन मे नही डलवा लेता, उस वक्त तक दम नही लेता था। मालिक का हुक्म हो, तो मैं बैठा कैसे रह सकता हूँ।"

कविगण उसकी बातें सुन रहे थे और कनखियो से एक दूसरे की ओर देखकर मुस्करा रहे थे।

"कभी किसी ने तुम्हे रोका नही ?"

"कौन रोकेगा ? भगवान के काम मे कौन रोक सकता है ? मैं अपने घर पर तो लकडी सीमेंट नही डलवा रहा हूँ, रोकेगा कौन ?" कहते कहते हवलदार की आवाज फिर ऊँची हो गयी, "एक रात स्टेशनमास्टर घर पर आया। मैं उसी वक्त खाना खाकर बाहर बीडी पीने के लिए खाट पर बैठा था। कहने लगा 'भाई रतनसिंह, डिविजनल आफिसर साहिब से किसी ने शिकायत की है कि सीमेंट उठ रहा है। मैं नही चाहता, तुम पर कोई आच आये। यह सरकारी माल है—' मैंने उसी वक्त उसे गले से पकड लिया," हवलदार ने स्वयं अपना गला पकडते हुए कहा, 'मैंने कहा, 'सुन स्टेशन मास्टर यह माल न सरकार का है न तेरे बाप का है यह माल भगवान का है। जितना माल भगवान कहेंगे, मैं यहाँ से उठाऊँगा। भगवान का घर बन रहा है, मेरा घर नही बन रहा है।' मैंने एक ही बार जो स्टेशनमास्टर का गला दबाया, तो उसकी आखें निकल आयी। मैंने कहा, 'अब बैठो।' पर वह बैठा नहीं। उन्ही कदमो वापस लौट गया। मैंने पीछे से आवाज लगायी, कुछ चाय पानी तो पी जाते। पर उसने मुडकर देखा तक नही।' और आगे झुककर हवलदार फिर से अपने काले-काले हाथो के पंजे खोलते हुए बोला पाँच पाँच क्विंटल उठाये है इन हाथो ने। दिन दहाडे उठाये हैं। भगवान जो काम करवाते हैं उसके लिए हिम्मत भी देते हैं और सक्त भी देते हैं। हम तो साहिब एक ही बात मानते हैं, भगवान मे विश्वास होना चाहिए।'

हवलदार की आवाज बराबर ऊँची हो रही थी, वह अपनी रौ मे आ रहा था और जब मंदिर बनकर खडा हो गया, तो वाह-वाह साहिब देखते बनता था। जैसे जोत जल रही हो। पहली बार जब भोग लगा, तो

मैंने सभी को बुलाया। बडे बडे अफसरान वाला तशरीफ लाये। हमारे सुपरिंटेंडेंट साहिब भी तशरीफ लाये। आज उन्ही के हुक्म से हम आपको लिवाने आये हैं। कहने लगे 'रतनसिंह, तूने जो काम कर दिखाया है वह बडे-बडे नही कर सकते।' मैंने कहा, 'हुजूर, आपकी दुआ चाहिए, मैं तो चरणो का दास हूँ।' भगत को भगत का आसरा होता है। हमारे सुपरिंटेंडेंट साहिब भी बडे धरमप्रेमी सज्जन हैं, कवियो, विद्वानो का बडा मान करते हैं खुद भी कभी कभी कविता कहते हैं। कहने लगे, 'रतनसिंह, जनवादी कवि सम्मेलन हो रहा है, दूर दूर से कविगण आ रहे हैं। तुम उन्हे लिवा लाओ। देखना, उन्हे किसी बात की तकलीफ नही हो।' मैंने कहा 'हुजूर, पलको पर बैठाकर लाऊँगा।' भगवान ने चाहा, तो एक दिन सुपरिंटेंडेंट साहिब भी मंदिर खडा करेंगे।"

चाय आ गयी थी। रतनसिंह हवलदार ने सभी को गिलास उठा उठाकर दिये। खुद नही ली।

"नही, मालिक यह मेरे लिए नही है। यह आप मेहमानों के लिए है।' फिर रेल मुलाजिम को, जो चाय लाया था, डपटकर बोला 'बाहर ठहरो। चलो।"

कवि लोग समझ गये कि यह सरकारी चाय पिलायी जा रही है। इसके लिए उन्हे पैसे नही देने होंगे जो पैसे देने का प्रस्ताव किया, तो हवलदार बिगडेगा। उधर रेल मुलाजिम भी इस डपट से समझ गया था कि सरकारी चाय है जो पैसो के लिए इसरार किया तो लेने-के देने पड जायेंगे। इसलिए चाय पी चुकने पर न तो मेहमानो ने पैसो का जिक्र किया न हवलदार रतनसिंह ने, और न ही रेल मुलाजिम ने जो चुपचाप खाली गिलास उठाकर ले गया।

प्लेटफार्म पर मुसाफिरो की भीड बढने लगी थी। गाडी छूटने में अब ज्यादा देर नही थी। उज्जैन को जानेवाले मुसाफिर बराबर पुल पर से उतरकर सीधे गाडी की ओर लपके चले आ रहे थे। हवलदार रतनसिंह हथकडी को एक तख्ते पर रखकर फिर डिब्बे के बाहर अपनी ड्यूटी पर तैनात हो गया।

गाडी के पिछले डिब्बे या तो फर्स्ट क्लास के थे या खचाखच भरे थे। गठरियों और बच्चों से लदे ग्रामीण इसी डिब्बे की ओर भागे आते पर हवलदार की कडकती आवाज सुनकर हटबडाकर आगे बढ जाते।

तभी डिब्बे के बाहर शोर होने लगा। हगामा सा उठ खडा हुआ और लोग इकट्ठे होने लगे। कोई मुसाफिर हवलदार के मना करने के बावजूद डिब्बे के अन्दर बैठने का दुस्साहस कर रहा था। पत्रिका पर झुके बुजुर्ग कवि ने भी आँख उठाकर देखा, हवलदार पाँच सात आदमियो से घिरा खडा था और एक मुसाफिर ऊँची आवाज मे बोल जा रहा था

तुम मुझे बैठने मे नही रोक सकते। मेरे पास टिकट है।'

अधेड उम्र का कोट-पट पहने कोई मुसाफिर था जो मात्र टिकट के बल पर डिब्बे के अन्दर बैठने का दुस्साहस कर रहा था।

हवलदार चुपचाप खडा मुसाफिर की ओर घूरे जा रहा था।

'तुम कौन हो मना करनेवाले?' सफेदपोश ने बौखलाकर कहा 'यह डिब्बा मुसाफिरो के लिए है और इसमे बैठने की जगह है।'

हवलदार फिर भी बुत बना खडा रहा।

कोट-पटवाला मुसाफिर हवलदार को एक ओर को धकेलते हुए डिब्बे की ओर बढा।

"रिजर्व्ड है, तो बाहर लिखा होना चाहिए कि रिजर्व्ड है। इस पर कुछ भी नही लिखा है।"

इस पर प्लेटफार्म पर खडे एक और आदमी ने जोडा "रिजर्व नही है। टिकटवाले मुसाफिर को कोई नही रोक सकता।'

इस पर कोट पटवाले बाबू का हौसला और बढ गया "मैं तो बैठूगा। देखता हू, तुम कैसे रोकते हो। कहते हुए वह आगे बढा।

पर दूसरे क्षण हवलदार रतनसिंह ने उसे गलबहिया देकर ऐसा धक्का दिया कि वह लुढकता हुआ दस कदम दूर जा पहुँचा और मुश्किल से मुह के बल गिरते-गिरते बचा। इस पर बहुत से लोग बिगड उठे और हवलदार पर चिल्लाने लगे---

'तुम वर्दी मे हो तो इसका यह मतलब नही कि मुसाफिरो पर हाथ उठा सकते हो।'

'म इसी डिब्बे म बठूगा, वरना यह गाडी नही चलेगी।' कोट-पन्ट वाले का साहस फिर से लौट आया था और कुछ लागो से बढावा पाकर वह फिर से चिल्लाने लगा था।

हवलदार रतनसिंह ने फिर स हाथ जोड दिय, "श्रीमानजी यहा स चने जाओ। आगे डिब्बे बहुत है। यहा बैठन की कोशिश मत करो।"

इस पर बौखलाया हुआ कोट पटवाला मुसाफिर अपना टिकट हाथ मे झुलाता हुआ डिब्बे की ओर बढा, 'मैं यही बठूगा '

उसके कहन की दर थी कि हवलदार रतनसिंह ने आगे बढकर उस गले मे पकड लिया और उसे घसीटता हुआ डिब्बे के दरवाजे के पास ले आया।

'चलो अन्दर मैं तुम्हे डिब्बे मे बैठाता हूँ।" और धक्का देकर उसे डिब्बे के अन्दर घुसड दिया "बक बक बन्द करो और चलो अन्दर।' और मुसाफिर को इस जोर स धक्का दिया कि वह पहले ही की तरह गिरता पडता डिब्बे के कोन तक जा पहुँचा। हवलदार ने भी डिब्बे का दरवाजा बन्द किया और अन्दर आ गया।

बठो इधर। हवलदार न कडककर कहा और एक सीट की आर इशारा किया। कुछ कविजन एक ओर को खिसक गये और उसके लिए जगह बना दा।

मुसाफिर डिब्बे के अन्दर पहुँच गया था, और यही वह चाहता था लकिन जिस तरह अन्दर फेंका गया था, इसकी कल्पना उसन नही की थी। वह तो हवलदार को धता बताकर अन्दर आना चाहता था। वह अन्दर आया भी, पर अपमानित हाकर। वह अभी तक समझ नही पा रहा था कि उसकी जीत हुई है या हार। उसने खिसियायी सी नजर से डिब्बे मे बठे लागो का देखा पर य लोग उसकी दुगति देख चुके थे और उसके प्रति किसी ने भी सदभावना का सकेत तक नही दिया। वह अटपटा सा महसूस करता हुआ हाँफ रहा था। तभी उसकी नजर हवलदार के कन्धे पर से लटकती हथकडी पर पडी। हथकडी देखकर उसके माथ पर पसीना आ गया और चेहरा पीला पड गया। वह फौरन साट पर बैठ गया और फटी सी आँखा से हवलदार की आर देखन लगा। किसी ओर स कोई प्रोत्साहन

'जो आदमी इस डिब्बे के अन्दर घुसने की कोशिश करेगा, उसके साथ ऐसा ही सुलूक होगा।" रतनसिंह बोला और फिर हाथ बांध दिये, 'श्रीमानजी, मैं बार बार समझा रहा हूँ कि यह डिब्बा आपके लिए नहीं है।'

'इस पर कुछ भी नहीं लिखा है।' दूर खड़ा कोई आदमी चिल्लाया।

"श्रीमानजी, मैंने कह दिया यहां मैं किसी को नहीं बैठने दूंगा। मैं इल्तिजा कर रहा हूँ, यहां कोई नहीं बैठे।"

हवलदार के इल्तिजा करने का लहजा ऐसा था, मानो कत्ल करने की धमकी दे रहा हो।

डिब्बे पर कुछ भी नहीं लिखा है।' किसी ने फिर चिल्लाकर कहा।

'कुछ नहीं लिखा है, तो घुसकर देखो। मां का दूध पिया है, तो आओ।"

हवलदार के धक्के से कोट पटवाला मुसाफिर लुढ़कता हुआ जहां पहुँचा था, वहीं खड़े-खड़े हांफ रहा था। और अपनी छोटी छोटी आंखों से हवलदार को घूरे जा रहा था। फिर वह वहीं खड़ा खड़ा चिल्लाने लगा—

यह गाड़ी नहीं चलेगी। हाथ ऊँचा उठाकर जोर जोर से चिल्लाये जा रहा था, मानो नारा लगा रहा हो "यह गाड़ी नहीं चलेगी! मैं देखूंगा, कैसे चलेगी।' और हांफता हुआ फिर आगे बढ़ आया।

कुछ लोग हवलदार को समझाने लगे आप ही मान जाओ, हवलदार साहिब बैठने दो। एकाध आदमी के बैठने से क्या होता है।'

पर इस पर फौरन ही बुजुर्ग कवि जो गाहे-बगाहे पत्रिका पर से आंख उठाकर हालात की नजरसानी कर लेते थे, कहने लगे अपनी वजह का आदमी है! तुम चुपचाप देखते जाओ।

बाहर भीड़ अभी भी गांठ बनाये खड़ी थी कि कोट-पटवाला क्या करता है। हवलदार रतनसिंह इस बीच डिब्बे के अन्दर आया और तख्ते पर से लटकती हथकड़ी को जंजीर समेत उठाकर कन्धे पर डालता हुआ नीचे उतर गया।

"मैं इसी डिब्बे मे वठूगा वरना यह गाडी नही चलेगी। कोट-पट वाल का साहस फिर म लौट आया था और कुछ लागा स बढ़ावा पाकर वह फिर स चिल्लाने लगा था।

हवलदार रतनसिंह ने फिर से हाथ जोड दिय, "श्रीमानजी यहा म चल जाओ। आगे डिब्बे बहुत हैं। यहाँ बैठने की कोशिश मत करो।'

इस पर बौखलाया हुआ कोट पटवाला मुसाफिर अपना टिकट हाथ म भुनाता हुआ डिब्बे की ओर बढ़ा, 'मैं यही वठूगा

उसके कहन की देर थी कि हवलदार रतनसिंह न आगे बढकर उस गले स पकड लिया और उस घसीटता हुआ डिब्बे के दरवाजे के पास ले आया।

चला अन्दर मैं तुम्हे डिब्बे मे बैठाता हूँ।" और धक्का देकर उस डिब्बे के अन्दर घुसेड दिया, बक बक बन्द करो और चलो अन्दर।' और मुसाफिर को इस जोर स धक्का दिया कि वह पहले ही की तरह गिरता पडता डिब्बे के कोने तक जा पहुँचा। हवलदार ने भी डिब्बे का दरवाजा बन्द किया और अन्दर आ गया।

बैठो इधर। हवलदार ने कडककर कहा और एक सीट की ओर इशारा किया। कुछ कविजन एक ओर को खिसक गये और उसके लिए जगह बना दी।

मुसाफिर डिब्बे के अन्दर पहुँच गया था, और यही वह चाहता था, लेकिन जिस तरह अन्दर फेंका गया था, इसकी कल्पना उसन नही की थी। वह तो हवलदार को धता बताकर अन्दर आना चाहता था। वह अन्दर आया भी पर अपमानित होकर। वह अभी तक समझ नही पा रहा था कि उसकी जीत हुई है या हार। उसने खिसियायी सी नजर से डिब्बे मे बैठे लोगो को देखा, पर य लोग उसकी दुर्गति देख चुके थे और उसके प्रति किसी ने भी सदभावना का संकेत तक नही दिया। वह अटपटा सा महसूस करता हुआ हाफ रहा था। तभी उसकी नजर हवलदार के कन्धे पर से लटकती हथकडी पर पडी। हथकडी देखकर उसके माथ पर पसीना आ गया और चेहरा पीला पड गया। वह फौरन सीट पर बैठ गया और फैली-सी आखो स हवलदार की ओर देखने लगा। किसी ओर स कोई प्रोत्साहन

का पुण्य कमा रहे हैं।"

'गाडी छूटनेवाली है। अगर वह नही लौटा तो '

"उसका बाप भी लौटेगा," हवलदार रतनसिंह गुस्से मे बोला, "अगर नही आयगा, तो अगले स्टेशन पर हथकडी डालकर लाऊँगा।"

गाडी ने सीटी दी। प्लेटफार्म पर खडे मुसाफिर लपक लपककर डिब्बे म चढने लगे। हवलदार अब फिर स दरवाजे मे खडा पीछे की ओर देख रहा था, जिस ओर मुसाफिर अपना सामान लाने गया था।

"अब वह नही आयगा, हवलदार वह तुम्हारे डर के मारे गाडी पर चढा ही नही होगा। अपने घर चला गया होगा।"

"आयेगा हुजूर, अगर उसे जान प्यारी है, तो जरूर आयगा। तब वह एक मुसाफिर था साहिब, अब मुजरिम है। अब वह मेरी निगरानी मे बठेगा।

गाडी हौले हौले सरकने लगी। प्लेटफार्म पीछे छूटने लगा। हवलदार अभी भी दरवाजे म खडा था, लेकिन जब उसने पीछे की ओर देखना बन्द कर दिया था। बल्कि अब उसकी आखें सामने की ओर लगी थी, जहा कोचभर मैदान के पीछे नागदा की बस्ती फली थी। गाडी ने रफ्तार पकडी, बस्ती पीछे छूटती जा रही थी सहसा हवलदार ने कविजनो को सम्बोधन करके कहा—

'वह रहा हुजूर, मालिक का मन्दिर। साफ दिख रहा है ना! बीस मील दूर से भी इसका कलश चमचमाता है। गाव गाव स नजर आता है।'

कवियो ने खिडकियो स झाककर बाहर की ओर देखा। मटमले घरो के झुरमुट के पीछे सचमुच मन्दिर का कलश चमक रहा था, और उसका शिखर सिर उठाय खडा था। मन्दिर ऊँचे आसन पर बनाया गया था, जिसमे आसपास के टूटे फूटे मकानो के बीच वह प्रभावशाली लग रहा था। स्टेशन का सबसे बढिया सीमेंट और जयपुर का लाल पत्थर और रेल की पटरी के स्लीपर उसके निर्माण म लगे थे। कलाश के ऊपर पीतल का कलश अस्तप्राय सूय के प्रकाश मे या चमक रहा था, मानो साने का बना हो।

न पाकर वह निपट अकेला महसूस करने लगा। डिब्बे के अन्दर दहशत सी छा गयी थी जबकि डिब्बे के बाहर भीड़ छँट गयी थी और वे सब लोग जा चुके थे जो प्लेटफार्म पर उसका समर्थन करते रहे थे।

सहसा वह उठ खड़ा हुआ।

'मेरा सामान पीछे पड़ा है मैं अपना सामान ले जाऊँ।" उसने लड़खड़ाती सी आवाज में कहा।

हवलदार ने उसे सिर से पाँव तक देखा और फिर कड़ककर बोला जाओ और सामान लेकर फौरन यहाँ पहुँचो।

मुसाफिर लुढ़कता हुआ डिब्बे में से उतर गया।

मुसाफिर उतर गया था और सारी बात ही सिर से पैर तक बदल गयी थी। उसके चले जाने के बाद हवलदार रतनसिंह कवियों की ओर मुखातिब हुआ—

मालिक का हुक्म हो तो इस गाड़ी को तोड़कर रख दूँ। यह गाड़ी चीज ही क्या है मैं इसके टुकड़े टुकड़े कर दूँ। भगवान चाहेंगे, तो मैं घूँसे मार मारकर गाड़ी को तोड़ दूँगा। आप भगवान की ताकत को क्या समझते हैं!'

हवलदार रतनसिंह सचमुच महसूस कर रहा था कि भगवान की शक्ति उसके शरीर में आ गयी है और वह अपने दोनों हाथों से गाड़ी को तोड़-फोड़ सकता है।

"मैंने उसे समझाया उसकी मिन्नत की, श्रीमानजी, यहाँ विद्वान लोग बैठे हैं उनकी सेवा करना हमारा फर्ज है पर वह अपना टिकट ही भुनाये जा रहा था, अब भुलाये टिकट!'

फिर हवलदार ने खिड़की में से ऊपर नीचे देखा और उठकर दरवाजे के पास चला गया।

'साला अभी तक नहीं लौटा! पीछे की ओर गया था ना?'

तुमने उसे खूब खदेड़ा हवलदार वाह वाह क्या कहने हैं बड़े पहुँचे हुए आदमी हो ' बुजुर्ग दुपट्टेवाले कवि ने फिर से पत्रिका पर से आँखें उठाकर देखा।

हम तो विद्वानों की सेवा कर रहे हैं। आपके दास हैं। आपकी सेवा

का पुण्य कमा रहे हैं।'

'गाडी छूटनेवाली है। अगर वह नही लौटा तो '

"उसका बाप भी लौटेगा ' हवलदार रतनसिंह गुस्से से बोला, "अब नही आयेगा, तो अगले स्टशन पर हथकडी डालकर लाऊँगा।"

गाडी न सीटी दी। प्लेटफाम पर खडे मुसाफिर लपक लपककर डिब्बे म चढन लगे। हवलदार अब फिर से दरवाजे मे खडा पीछे की ओर देख रहा था जिस ओर मुसाफिर अपना सामान लाने गया था।

'अब वह नही आयेगा हवलदार वह तुम्हारे डर के मारे गाडी पर चढा ही नही होगा। अपन घर चला गया होगा।"

"आयगा हुजूर, अगर उसे जान प्यारी है, तो जरूर आयेगा। तब वह एक मुसाफिर था साहिब, अब मुजरिम है। अब वह मेरी निगरानी मे बठेगा।'

गाडी हौले हौले सरकन लगी। प्लेटफाम पीछे छूटन लगा। हवलदार अभी भी दरवाजे म खडा था, लेकिन अब उसन पीछे की ओर देखना बन्द कर दिया था। बल्कि अब उसकी आखें सामने की ओर लगी थी, जहा कीचभर मदान के पीछे नागदा की बस्ती फली थी। गाडी ने रफ्तार पकडी, बस्ती पीछे छूटती जा रही थी सहसा हवलदार ने कविजनो का सम्बोधन करके कहा—

'वह रहा हुजूर मालिक का मन्दिर। साफ दिख रहा है ना! बीस मील दूर से भी इसका कलश चमचमाता है। गाव गाव से नजर आता है।'

कवियो न खिडकियो स भाककर बाहर की ओर देखा। मटमैले घरो के झुरमुट के पीछे सचमुच मन्दिर का कलश चमक रहा था और उसका शिखर सिर उठाये खडा था। मन्दिर ऊँचे आसन पर बनाया गया था, जिससे आसपास के टूटे फूटे मकानो के बीच वह प्रभावशाली लग रहा था। स्टशन का सबस बढिया सीमेंट और जयपुर का लाल पत्थर और रल की पटरी के स्लीपर उसके निमाण म लगे थे। कैलाश के ऊपर पीतल का कलश अस्तप्राय सूय के प्रकाश म यो चमक रहा था, मानो सोने का बना हो।

हवलदार रतनसिंह ने दोनों हाथ जोडकर माथे पर रख, नतमस्तक हो मंदिर को नमस्कार किया। कंधे पर से लटकती हथकडी बज उठी। वह बार बार नमस्कार करता, हथकडी बार बार बज उठती।

लगा था। मैं यूनियन और पार्टी के काम मे जिन्दगी बसर करना चाहता था, जबकि वह सबसे पहले अपने व्यवसाय मे जम जाना चाहता था। मुझे उसका निर्णय गलत और उसे मेरा निर्णय गलत नजर आता था। 'हमारे समाज मे उन्ही लोगो की बात सुनी जाती है, जिनकी कोई पोजीशन हो।" वह कहा करता था, 'बडे-बडे डाक्टर, बडे-बडे वकील, बडे-बडे विद्वान अपनी पोजीशन के कारण जनता की सेवा भी ज्यादा अच्छी तरह स कर सकते हैं।"

मैं उससे झगडने लगता, मैं उसे यूनियन के प्रति गद्दार कहता, और वह मुझे परले दर्जे का बेवकूफ, आदर्शवादी और न जाने क्या-क्या कहा करता था।

सडक पर चलते हुए रह रहकर मन मे सवाल उठता, क्या सचमुच उसने जिन्दगी का सही रास्ता चुना था और मैंने गलत? क्या सचमुच मैं परले दर्जे का बेवकूफ साबित हुआ हूँ, और वह दानिशमन्द?

फिर मुझे वे दिन याद आने लगे जब हम दोनो पर यूनियन बनाने का जनून सवार था, और हम बिना किसी बात की चिन्ता किये एक जगह से दूसरी जगह, एक शहर से दूसरे शहर, घूमते फिरते थ। मुझे वह दिन याद आया, जब मैं पिछली बार उससे मिला था। मुसाफिरो से खचाखच भरे थर्ड क्लास के डिब्बे मे वह दब घुसडकर बैठा कोई पत्रिका पढ रहा था। मुझे याद नही कौन सा स्टेशन था और गाडी किस ओर जा रही थी। मन पर अमिट छाप छोडनेवाली घटनाएँ क्षणभर म घट जाती हैं। डिब्बे की मद्धिम-सी रोशनी म वह चुपचाप बैठा पत्रिका पढ रहा था और गोद म उसने पुस्तको का एक बण्डल रखा हुआ था। मुझे देखते ही वह लपककर बाहर आ गया था।

"बैठे रहो पागल नही बनो," मैं चिल्लाया था, 'एक बार सीट छोड दी तो फिर नही मिलेगी।'

पर वह बाहर पहुँच गया था। 'तुम चिन्ता नही करो', वह कह रहा था, 'ये लोग मुझे पलको पर बैठायेंगे, और अगर नही बैठायेंगे तो मैं खडा रहूँगा। बारह घण्टे का सफर ही तो है। मैं सात किताबें साथ म ले आया हू रातभर पढता रहूँगा। फिर अपना तकिया-कलाम दोहराता हुआ बोला

था, "लाले दी जान, तू परवाह नही कर। किसी बात की चिंता नही कर। अब चल, कही पर पकौडे खायें, बहुत मन कर रहा है। तीन दिन से पकौडे नही खाये।"

'लाले दी जान' और 'परवाह नही कर' उसका तकिया कलाम हुआ करता था, और पकौडे खाना उसका व्यसन। सडक पर चलते हुए उस कही भी पकौडो की ग ध आ जाती तो चप्पल झाडकर भाग खडा होता। "परवाह नही, देखा जायेगा ।

मुझे उसके कपडा की याद आयी और मैं खिलखिलाकर हँस दिया। अगर कुर्ता साफ होता तो पाजामा मला और पाजामा साफ होता तो कुर्ता मला। कहा करता था—'तू जानता है, मैं झग का रहनेवाला हूँ। झग का नाम कभी सुना है ? झग के लोग कभी पाजामा और कुर्ता एक साथ नही बदलते। पाजामा मैला होता है तो पाजामा बदल लेते हैं, कुर्ता मैला होता है तो कुर्ता। अब कभी मुझमे नही पूछना कि मैं धुला हुआ जोडा क्यो नही पहनता ।"

उसके घर का भी यही हाल था। चीजें बिखरी हुइ, दीवारो पर जाले, अपना बिस्तर तक नही बनाता था। रात के कपडे जहा उतारे, वही फश पर पडे हैं।

'यह घर है अस्पताल नही," वह कहा करता 'रात को फिर इन्ही कपडा को पहनता हूँ। मेरे पास इतना समय नही है कि पहले इन्हे खूटियो पर टागू और फिर पहनन के लिए खूटियो पर से उतारता फिरूँ। पाजामा जैसे जिस्म पर से उतरे, वैसे ही फश पर पडा रहे, 8 का अक बनाता हुआ। रात को तुम लौटो उसी 8 के अक पर खडे हो जाओ और पाजामा ऊपर खीच लो ।'

वडा हँसमुख, जिन्दादिल और उत्साही जीव हुआ करता था। उन दिनो हर तीसरे दिन झाला लटकाये मेर घर पहुँच जाता। दहलीज पर कदम रखत ही मेरी मा का पुकारकर कहता, माजी, दाल म थाडा और पानी डाल दें, मै आ गया हूँ।'

एसा हुआ करता था मेरा यार। अब न जाने कसा होगा ? मेरे बहुत से पुराने साथी जिन्दगी के बहुत से मोड काट चुके है जबकि मैं एक तरह

से, सीधी सपाट सडक पर ही चलता रहा हू और अब भी चल रहा हू। इसीलिए कभी कभी लगता है जैसे मैं खडा हू, और एन उसी जगह पर खडा हूँ, जहा आज से पच्चीस बरस पहले खडा था जबकि दुनिया तेजी से आगे बढती चली गयी है। पर कभी कभी बिल्कुल इसके उलट भास होने लगता है कि मैं तो चल रहा हू, पर मेरे साथी अपने-अपने स्थान पर पहुँच कर रुक गय हैं और उन्होंने चलना छोड दिया है। ऐसे समय म अक्सर मन मे सवाल उठा करता है 'क्या जिन्दगी म सचमुच मजिल नाम की कोई चीज होती है या सतत चलत रहने म ही जीवन की सार्थकता है ?'

पर उसके घर के निकट पहुँचने पर मुझे अजीब सा सकोच होने लगा। मैं बिना सूचना दिये उसके घर पर जा पहुँचूगा, क्या मालूम वह घर पर न मिले, क्या मालूम उसके घर पर मेहमान उतरे हुए हो। मैं जब थोला लटकाये उसके घर पर पहुचूगा तब वह क्या सोचेगा ? वह कुछ भी सोचे, मैं तो उसे बाहो म भर लूगा।

मैंने यदा कदा अखबारो म उसकी चर्चा पढी थी। उसके दो एक लेख भी पढे थे उनसे प्रभावित भी हुआ था। उसकी पोजीशन का मुझ पर रोब रहा हो, ऐसा नही था हाँ, उसकी विद्वत्ता का कुछ रोब जरूर रहा होगा, कि मैं सकोच महसूस करने लगा था।

जब मैं उसके घर पहुँचा, तब रात के नौ बज रहे थे। अपनी इन्स्टीट्यूट की बगल मे ही उसका बगला था। बजरीवाले रास्ते पर मैं उसके बगले की ओर बढ रहा था। आगे आगे लम्प उठाये उसके इन्स्टीटयूट का चौकीदार मुझे रास्ता दिखा रहा था। मैं बजरी पर चलता जा रहा था, जब मुझे लगने लगा जसे मेरे कपडो से बू आ रही है मुझे यहा आने से पहले स्नान करके आना चाहिए था और कपडे बदलकर आना चाहिए था। फिर मेरे अन्दर से ठहाका सा उठा। मैं उससे अपने लिए कुछ मागने तो नही जा रहा हूँ। मैं तरह तरह के अमीरजादो से, बडे बडे अफसरो स बेधडक मिलता हूँ। यूनियन के काम मे मुझे तरह-तरह के लोगो से मिलना पडता है पैसे मागने और चन्दे उगाहने पडते हैं। मुझे कभी ख्याल नही आया कि मेरे कपडे मैले हैं या उजले। फिर आज यह सकोच कसा ?

वह घर पर नही था। किसी मीटिंग मे भाग लेने गया हुआ था। मैं

बरामदे के बाहर ठिठका खडा रहा। चौडा बरामदा, जालीदार दरवाजे, बडे बँगले की चुप्पी। न दो कोठरियोवाला पुराना घर था और न पहले सी गरमा गरमी।

नौकर के साथ मुझे बात करते सुन, अन्दर से उसकी पत्नी चली आयी। मैंने अपना परिचय दिया तो वह बडे स्नेह से आगे बढ आयी।

'आइए न, आप बाहर क्या खडे हैं ?" वह बोली, और नौकर से मेरा झोला ले लेने को कहा। जाहिर है, घर मे मेरी चर्चा होती रहती होगी।

'इनका कोई वक्त नही, किसी मीटिंग मे गये हैं। कह गये है कि आठ बजे तक लौट आऊँगा, पर अब दस बजना चाहते हैं। आप बैठिए। अब तो आत ही होगे।'

और मुझे बैठक मे बिठाकर वह घर के अन्दर चली गयी। मैं आश्वस्त हो गया। पराये घर म नही अपने घर मे ही आया हूँ।

एक आसूदा आदमी के घर की बैठक थी, कालीन, सोफा, मेज-कुर्सिया! दरवाजे के पास, दायें हाथ, एक स्टूल पर एक ट्रे रखी थी, जिसमे बहुत स विजिटिंग-काड छितरे पडे थे। कमरे मे प्रवेश करते समय सबसे पहले उन्ही पर नजर जाती थी। मैं कुतूहलवश, उठकर उन्ह दखने लगा—गवनर के सेक्रेटरी का काड था, कुछ विदेशी व्यक्तियो के काड थे बडे बडे लोगो के काड थे। मैं मुस्करा दिया। इसने सब कार्ड सँभालकर रखे हुए है और ट्रे को ऐसी जगह पर रखा है कि बैठक मे प्रवेश करनेवाले की नजर सबसे पहले उन्ही पर जाय।

दीवारो पर अनेक चित्र टँगे थ। दायें हाथ की दीवार पर एक चित्र मे राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद के साथ मेरा मित्र खडा बातें कर रहा था। इस चित्र को सबसे बडे आकार मे फ्रेम करवाया गया था। बायें हाथ की दीवार पर एक मानपत्र फ्रेम म टगा हुआ था, जो इसे कभी भेंट किया गया था। खिडकी के पास एक मेज पर बढिया कलमदान रखे थे।

मैं अपने मित्र के वतमान जीवन से परिचय पा रहा था जब उसकी पत्नी फिर दरवाजे मे आकर खडी हो गयी।

"गुसल तयार है आप नहा धो लीजिए। वह आते ही होग।"

मैं उठ खडा हुआ।

"है तो मजे मे, मेरा दोस्त ?" मैंने उछाह से कहा।

"आप खुद देख लेना जी!" उसने मुस्कराकर कहा और इस आत्मीयता के प्रति मेरे अधिकार का जायजा लेने के लिए मुझे सिर से पांव तक देख गयी।

बैठक की बगल मे ही गुसलखाना था। मैंने अपने झोले मे से कुर्ता पाजामा निकाले और नहाने चला गया।

मैं नाहक ही सकोच कर रहा था। आदमी की पोजीशन भले ही बदल जाये, विचार नही बदलते। जवानी मे जिस लगन से काम किया करता था, उसे कैसे भूल पाया होगा। और फिर विचारो की समानता ही हमे एक दूसरे से जोडनेवाली कडी नही थी, गहरी मैत्री भी थी।

नल मे से पानी इस तेजी से बह रहा था कि कानो पडी आवाज सुनायी नही देती थी। तभी मुझे लगा जैसे कोई दरवाजा खटखटा रहा है। मैंने नल बन्द किया। बाहर से आवाज आयी—

"निकल बाहर! मैं कितनी देर से यहां बैठा हू!"

मेरे यार की आवाज थी। मेरा तनबदन पुलक उठा। मेरे सब भ्रम इस एक वाक्य ने दूर कर दिये।

मैं बाहर निकला तो हम गले लगकर मिले। वह पहले से दुबला गया था। अधिकाश बाल सफेद हो चुके थे, मुह थोडा पिचक गया था, पर चेहरे पर पहली-सी बशाशत थी।

"अब मैं तेरे साथ समझूगा, साले! तू समझता क्या है!" उसने कहा और मुझे गलबहियां देकर नीचे गिराने का अभिनय करने लगा।

"बैठ, तेरा चेहरा तो देखू! बता, इतने बरस कहा कहा ठोकरें खाता फिरा है?"

तभी उसकी पत्नी और जवान बेटा अन्दर चले आये और बडी दिलचस्पी से हमारी बातें सुनने लगे।

"वह दिन याद है, साले, जब अम्बाला शहर मे मीटिंग के बाद हम इतने थक गये थे कि वही पण्डाल मे बिछी दरियों पर सो गये थे! हाय, कैसे दिन थे! कुर्बान जाऊं वे दिन याद आते हैं तो जी चाहता है भागकर तेरे पास पहुंच जाऊं।"

वह भावुक हो रहा था।

"सुबह उठकर हमने दरिया लपटकर बलगाडी पर रखी और मेजा दरियो के अम्बार पर हम दोनो चढकर बैठ गय। और गलियो बाजारो मे से होते हुए बैलगाडी ग्यारह बजे के करीब सदर बाजार म पहुँची थी। याद है?"

फिर पत्नी की ओर घूमकर बोला 'कुसुम, बैलगाडी पर हम दानो सामान के ढेर पर बठ थ, और धीर धीरे गली-गली चले जा रह थे।"

उसकी पत्नी मुस्करा रही थी और मेरी ओर दख रही थी। 'हैं ज्जी, यह ठीक है?" मानो उसे विश्वास नही हो पा रहा हो कि उसका पति कभी बैलगाडी मे लदे मामान पर बैठा गली-गली घूमता फिरा था।

उस रात की याद मुझे भी आयी और मुझे अच्छा लगा लेकिन जिस भावुकता से वह उसे याद कर रहा था, वह मुझे थोडा अजीब सा लगा। मीटिंगें अब भी होती हैं और मैं अब भी कभी कभी थक जाने पर पण्डाल मे ही सो जाता हूँ। कल रात ही मैं एक जलसे के बाद देर तक दरियाँ उठवाता और छकडे पर लदवाता रहा था। इसमे भावुक होने की क्या बात है!

खाना खाने बठे तो मेज व्यजनो से भरी थी। मैं रात देर से पहुँचा, फिर भी उसकी पत्नी ने बडे चाव से खाना तैयार करवाया था। मुर्ग था, दो-तीन तरह की सब्जिया थी, दाल थी, सलाद था जाने क्या क्या था!

"इतना तरददुद करने की क्या जरूरत थी? हम तो रुखी सूखी खाने के आदी हैं।"

मैं उसके सामनेवाली कुर्सी पर बैठा था। उसकी आखें मुझ पर लगी थीं। मुझे लगा जस वह दूर मे देख रहा है और उसकी आखो मे तटस्थता का-सा भाव है। पर क्षण भर बाद ही उसकी आखें स्नेहसिक्त हो गयी।

"मेरी जिन्दगी के वे बेहतरीन दिन थे। ऐसे दिन कभी लौटकर नही आयेंगे।"

उसने भावविह्वल होकर कहा और उसकी आँखें भीग गयी।

'काश वे दिन लौट आयें!" उसने सिर हिलाकर कहा। उसने जरूर गहरी भावना से कहा होगा, लेकिन मुझे लगा जैसे उसने पहला झूठ

बोला है।

मेरे मित्र की आखें मेरी ओर देखती हुई फिर एक बार उचट गयी और लगा जसे वह मुझे दूर स देख रहा है, पर शीघ्र ही बाद वह फिर मेरे पास लौट आया।

"कोई फिक्र फाका नही था। बुचका उठात थ, कभी अमृतसर जा पहुँचते थे, कभी शिमला। मैंने कई बार रातभर खडा रहकर सफर किया है। एक बार तो मैंने आधा सफर, जनवरी महीने की सर्दी मे डिब्बे के पायदान पर खडे-खडे काट दिया था।"

अपनी यात्रो म वह डूबता जा रहा था। और मुझे कुछ कुछ अनोखा लग रहा था। इस तरह के सफर मरी रोज की जिदगी के आज भी अग हैं। क्या सचमुच यह फिर स यूनियन का काम कर पाने के लिए तरस रहा है ?

"अमृतसर स्टेशन के सामने उन दिनो बहुत-से ढावे हुआ करते थे। एक आने मे एक रोटी मिला करती थी, और दाल प्याज मुफ्त। यह और मैं चार चार राटियाँ फाडा करते थे, चवन्नी चवन्नी म काम चल जाया करता था।"

अब की बार उसकी पत्नी ने उचटती आंखो स मेरी ओर देखा, पर नजर मिलते ही बडे स्नेह स मुस्करा दी। उस वक्त न जाने क्यो, अपनी फटी चप्पलो का ख्याल आ गया। दायें पर के चप्पल का तला रास्ते मे उखड गया था और मैं उसे ठीक नही करवा पाया था और लगभग पैर घसीटता हुआ यहा पहुँचा था।

'अब ढाबो पर भी खाना महँगा हो गया है।" मैंने कहा 'पिछले मगल को मै अमृतसर मे था। मैं अब भी कभी-कभी ढावे पर खाना खाता हूँ। पौने दो रुपये लग गय थे।'

इस पर मरे मित्र ने अपनी पत्नी को सम्बोधन करके कहा 'इसकी शक्ल सूरत पर नही जाओ। यह बडा पहुँचा हुआ आदमी है। गणित म इसने एम ए पास किया था।'

उसकी पत्नी की मुस्कराती आखें वास्तव मे मुझे तौल रही थी, मेरी बिसात को तौल रही थी। पति की टिप्पणी सुनकर उसने सिर हिला

लिया।

"दरअसल इसमें पार्टी का दोष है। जो आदमी जिस काम के काबिल हो उसे उस काम पर लगाना चाहिए। अब हम से पोस्टर लगाने या मीटिंग का प्रबन्ध करवाना, उनसे दरियाँ उठवाना और इश्तहार बँटवाना तब भी गलत था और आज भी गलत है।"

आप लोग इश्तहार भी बाँटते थे?" उसकी पत्नी ने पूछा।

जरूर बाँटते थे। मैं खुद बाँटता रहा हूँ। अंग्रेजी अखबार का दफ्तर है ना? वह उन दिनों अम्बाला से निकला करता था। मैंने खुद एक बार उसकी दीवार पर दस बड़े-बड़े पोस्टर लगाये थे।

पत्नी की आँखें फैल गयीं।

पर आपने कभी बताया तो नहीं।

इस पर वह तर्जनी हिलाता हुआ आवेश में कहने लगा, "ठीक आदमी को ठीक स्थान पर लगाना चाहिए। तुम्हें जरूर उन्हें सक्रेटेरिएट में ले लेना चाहिए था।"

मैं चुपचाप सुन रहा था। प्रान्त भर की यूनियनों का मैं संचालक था। पार्टी की सर्वोच्च समिति का सदस्य भी था। लेकिन मैंने उसकी बात को काटना ठीक नहीं समझा क्योंकि मेरे काम में कोई मूल परिवर्तन नहीं आया था।

वह कह रहा था, "हम-तुम तो कोई भी काम कर लेते लेकिन निस्स्वार्थ सेवा से पार्टियाँ नहीं चलतीं, दल के काम नहीं होते। दल के कर्ण-धारों से भी एक बहुत बड़ी भूल हुई थी। उन्होंने कार्यकर्ताओं की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। उन्होंने समझा था कि वह अपने व्यक्तित्व के बल पर दल को आगे खींच ले जायेंगे। मैंने एक लेख भी इस मजमून को लेकर लिखा है— इण्डियन पॉलिटिक्स एन एस्सेसमेण्ट'। मैं तुम्हें पढ़ने के लिए दूँगा। मैंने उसमें भी यही बात उठायी है कि अगर हमारे राष्ट्रीय नेता कार्यकर्ताओं की ओर अधिक ध्यान देते तो कांग्रेस को सच्चे मानों में एक प्रभावशाली जमात बना देते।"

फिर उसने बेटे को सम्बोधन करके कहा, 'जाओ बेटा, मेरे कमरे में दायें हाथ की अलमारी में वह नीले कवरवाली किताब रखी है— न्यू एण्ड

रिव्यु उसी मे मेरा लेख है। मुझे उस लेख पर कुछ नही तो तीस-चालीस चिट्ठिया आयी होगी।'

लडका अनमने ढग स उठा पर उसकी मा ने रोक दिया।

"अभी क्या जल्दी है, खाना खा लो, बाद मे दिखा दना।"

जिस अनमन ढग से लडका उठा था, उसी अनमने ढग स बठ गया।

'पार्टी को चाहिए था कि तुम्हें किसी पत्रिका का सम्पादक बना देती, या तुम्ह केन्द्रीय कार्यालय मे रखती।" मै मुस्करा दिया। इस पर उसने तजनी हिलात हुए कहा पार्टी का नजरिया ठीक है, लेकिन कायरूप देन म वह बार बार भूलें करती है। मैंने पार्टी के प्रधान से इस बात का जिक्र भी किया था। एक मीटिंग मे हम दोना अध्यक्षमण्डल मे बैठे थे। ज्यादा बात तो नही हो सकी मौका एसा न था लेकिन दो एक बातें मैंने उनसे कह दी। एक तो मैंन उनसे कहा कि पार्टी के कायकर्त्ताओ की सद्धान्तिक सूझ अच्छी होनी चाहिए। मैंन उनसे कहा था कि इस दिशा मे एक व्याख्यान माला द सकता हूँ। दूसरे, किसी कायकर्त्ता को भी सारा वक्त शहर म नही रखना चाहिए, उस जरूर फक्टरियो म और दहात म भेजना चाहिए, ताकि उनकी जानकारी और अनुभव बढे।

वह कह जा रहा था। जिस आत्मविश्वास, स्पष्टता और निश्चयात्मकता से वह बात कर रहा था मुझे लगा जस उसन जीवन का सत्य पा लिया है, जिस मजिल की ओर आज स पच्चीस बरस पहले निकला था, उस पर वह कब का पहुँच चुका है और पहुँचते ही उसकी नजर म सब बात साफ हो गयी है कही कोई गुझल नही, कही कोई अडचन, कहीं कोई धुधलापन नही रह गया है। सारी बात साफ होकर हाथ की हथेली पर आ गयी है, और जीवन के बारे म इसका दशन भी बन गया है जिसम सब प्रश्नो के उत्तर और सब समस्याओ का समाधान मिल जाता है। डायरक्टर बनने के साथ-ही-साथ यह पथ प्रदशक बन गया है।

उसकी आवाज उत्तरोत्तर ऊँची होती जा रही थी। पर जब वह बडी प्रभावशाली आवाज म समाज के अन्दर पाय जानेवाले मूल अन्तर्विरोध की बात कर रहा था तब उसका बटा उठकर बाहर चला गया। कनखियो स उसन उस जाते दखा, क्षण भर के लिए ठिठका भी, लेकिन फिर अपना

चाहता कि मुझे बार बार उठना पड़े।'

पीछे खड़ी उसकी पत्नी सहसा बोल उठी "इसमें बैठते ही ऊँघने लगते हैं। जब भी मैं इस कमरे मे आयी हूँ इसमें बैठे सो रहे होते हैं।'

'अरे, अब ऊँघने के ही दिन हैं या जागते रहने के ? जितना काम जिन्दगी म मैंने किया है कोई माई का लाल करके तो दिखाये।" वह अपनी उपलब्धिया गिनाने जा ही रहा था, जब उसकी पत्नी एक अलमारी की ओर घूम गयी।

उसने मेज पर से वह पुस्तक उठायी जिसे निकाल लाने के लिए उसने अपने बेटे से कहा था। और उसमे से कुछ अंश पढ़कर सुनाने लगा।

सुनाते समय उसकी आवाज ऊँची होती गयी, और तर्जनी एक एक वाक्य पर झटका दे देकर हिलने लगी। मुझे लगा जैसे पिस्तौल की नली उसने मेरी छाती पर तान दी है और दनादन शब्दों की बौछार करने लगा है।

इस बीच उसकी पत्नी दबे पाँव कमरे मे से निकल गयी।

वह पढ़ रहा था और मेरे मन मे रह रहकर द्विविधा सी उठ रही थी—इससे कहूँ या न कहूँ ? बार-बार स्थिति की विडम्बना की ओर ध्यान जाता था और मन विचलित सा हो उठा था।

वह अंश पढ़ चुका था। पढ़ चुकने के बाद भी तर्जनी हिलाता व्याख्या करता रहा था। फिर उसने मोटे फ्रेमवाला चश्मा आँखो पर से उतारा और तोंद पर हाथ फेरता हुआ चमड़े की घुमाऊ कुर्सी मे बैठ गया।

मैंने आगे बढ़कर कहा, "मैं एक खास काम से तुम्हारे पास आया हूँ।"

"कहो, क्या है ? तुमने अभी तक बताया क्यो नही ?" उसने किताब मेज पर रखते हुए कहा।

"हमारे यहाँ बीस तारीख को एक जलसा है। 'आज की स्थिति और हमारा कर्त्तव्य' के विषय पर। हम चाहते हैं कि तुम जलसे की सदारत करो। मुझे इसीलिए तुम्हारे पास भेजा गया है।'

उसने अनमने भाव से मेरी ओर देखा, 'क्या इसी काम से मिलने आये हो ?"

"मुख्य काम तो तुमसे मिलना था पर साथ मे यह काम भी था।'

अब तुम आय हो तो मैं इकार नही कर सकता। कब है तुम्हारा यह सम्मेलन ?'

"बीस को।

"इसी महीने की ?'

'हा।'

"विषय कौन-सा है ?"

मैंने विषय दोहरा दिया।

'मेरा लेख इस विषय पर पढा था ?'

'नही मेरी नजर से नही गुजरा।"

'मैंने बुद्धिजीवियो के दायित्व पर बहुत कुछ लिखा है।

'मैं जरूर पढूगा।"

"और कौन-कौन लोग होंगे, इस सम्मेलन म ?'

आप अध्यक्षता करेंगे। और डा और डा और डा और डा ' मैंने नाम गिना दिय।

वह अपनी चमडेवाली कुर्सी को हल्के-हल्के घुमाने लगा।

'एक बात करना।

'कहो।"

"जलसे से दो दिन पहले याद-दहानी का तार मुझे भेज दना। अगर कोई मुझे आकर लिवा ले जाय तो थोडा आराम रहगा।"

'मैं खुद आकर तुम्हे लिवा ले जाऊँगा।'

नही तुम खुद क्यो तकलीफ करोगे ! किसी नौजवान कायकर्ता को भेज देना ! किराया विराया तो देते हो ना ? तुम जानते हो यह उम्र भटकन की तो नही है।

'जितनी हमारी तौफीक होगी जरूर देंगे।'

'आमतौर पर मैं हवाई-जहाज का किराया लेता हूँ, मगर तुम्हारी सस्था के पास इतने पसे कहाँ होगे ?'

सस्था जितनी हमारी है, उतनी ही तुम्हारी ' मैंने कहा 'हमसे जो बन पडा, हम जरूर करेंगे !"

मैं ठिठका खडा रहा। फिर दट निश्चय के साथ बोला 'तुम्हारी

इजाजत हो तो मैं चलूगा, मुझ दा एक काम और भी निबटान हैं।"

' यह क्या वदतमीजी है ? अभी तो हम दो बातें भी नही कर पाय। तुम इतनी दूर स आय हो ! '

जिस आग्रह से उसने मुझे रुकने को कहा, उसी स मुझे भास हो गया था कि वह दूसरी वार झूठ वोल रहा है।

मैंने वठक मे से झोला उठाया और खुली हवा मे आ गया। उसका वँगला पीछे छूटन लगा। मेरा मन उद्विग्न सा था। लगता था कही कुछ टूट गया है। पर साथ ही साथ इस वात का आश्वासन भी था कि उसने जलम की सदारत करना कवूल कर लिया है।

अतीत के मोह मे मतवाला बना घूम रहा है।

शरत की पत्नी का अतीत म काइ विशेष रुचि नही थी न मन्दिरो म, न इतिहास म। उस घूमने म रुचि थी फूलो के गुच्छे इक्टठे करने म। जहाँ कही काई कश्मीरी परिवार बैठा मिलता, उसके पास जा बैठती, उनकी समावार म से चाय लेकर पीती उनकी बाकरखानिया खाती। श्रीनगर पहुँचते न पहुँचत उसन कश्मीरी चलन की अनेक चीजें इकटठी कर ली थी। कभी-कभी किसी कश्मीरी बच्चे को उँगली से लगाये आ रही होती, कभी कश्मीरी युवतियो की पोशाक पहने हँसती चहकती ग्रा रही होती। वह इन्ही म मस्त थी। जिन दिनो हम श्रीनगर म रह रहे थ उन दिनो वह हमसे अलग घूमने निकल जाती। शिकारा लेकर भील म निकल जाती, और खुली भील म जाने की बजाय छोटे छोटे जल मार्गों म जा पहुँचती, कश्मीरियो के घरा म झाकती फिरती, तरह तरह के लोगो स दोस्ती गाठती फिरती।

मेरी कफियत इन दोनो से अलग थी। मेरा बचपन और लडकपन श्रीनगर म बीता था और अब मैं लगभग तीन वष के बाद श्रीनगर मे लौटा था। श्रीनगर म प्रवेश करते ही एक विचित्र सा उन्माद मुझ पर छाने लगा। और मैं गहरी भावनाओ के गत मे जस गिरने लगा। अमीराक-दल का पुल लाघकर हम मुशीबाग की ओर मुडे ही थे कि मेरा दिल बठने लगा। एक एक दुकान परिचित थी इस इलाके के चप्प चप्प से मेरी यादें जुडी थी। नानबाइयो की दुकानो की परिचित गन्ध स नदी के पानी स उठनेवाली विशेष गन्ध से। और मेरा रोम रोम व्याकुल हाने लगा। यदि किसी नगर म आपका बचपन बीता है तो भूलकर भी वर्षों बाद उसमे नही जाइए एक एक याद आपको तडपायगी। कभी काई याद फूल की महक की तरह सराबोर कर जाती कभी कोई याद काँटा बनकर दिल म चुभ जाती।

पुरान घर के अन्दर घुमन पर दिल म टीस उठी, मकान जजर हो रहा था। बरामदे के फश म दरारें पड गयी थीं। छता दीवारा खिडकिया और दरवाजो पर महाकाल क दाँतो के निशान थ। बाहरवाली पत्थर की दीवार के अन्दर जगह जगह घास उग आयी थी। मैं कहाँ पहुच गया हूँ?

यह वह घर ना नही है जहा मेरा बचपन बीता था। पर नही, वही घर था, केवल अब मा नही थी, भाई और बाप नही थे, छोटी बुआ नही थी जिसकी हँसी से ये घर गूजा करता था। काल का पिंजरा बना यह घर मेरे सामने खडा था।

मा घबराने लगी है। अभी बाप-बेटा मे बात बढ जायगी। "इस घर म कलह मुझे अच्छी नही लगती। मैं कहती हू बेटा, तुम्ही मान जाओ।'

इस पर सहसा पिताजी हँस देंगे।

'मैंने क्या कहा है ? मैंने कुछ भी नही कहा। जसे इसका मन आए बनवाये। हम कितने दिन इस घर मे बैठ रहना है। इनका घर है, इनकी दौलत है।"

मैं दरवाजा खोलकर अन्दर जाता हूँ। मेरे अन्दर कदम रखते ही जैसे सभी लोग—मा, पिताजी, भाई, छोटी बुआ—जैसे पख लगाकर उड गये हैं। कमरे म अँधेरा है, और जाले ही-जाले है और सीलन की बू आ रही है। मैं आगे बढकर खिडकी खोल देता हूँ। खिडकी पर अभी भी नीले रग के पर्दे टगे हैं। लेकिन मेरा हाथ लगने पर पर्दा भुरभुराकर फट गया है।

पासवाली दीवार पर छह खूटियो का फलक जिसे भाई ने डिजाइन किया था, एक कील के सहारे नीचे लटक रहा है। अब मैं इसे उठाकर दीवार के साथ लगाऊँगा भी तो नही लग पायेगा, क्योकि दीवार का पलस्तर टूट गया है।

दीवार म लगी अलमारी अधखुली पडी है। मैं उसका पल्ला खोलकर अन्दर देखता हूँ। एक लकडी की ट्रे रखी है। एक सिरा टूटा हुआ। उसमे धातु की बडी चायदानी रखी है। इसम से एक ही बारी मे दस-बारह प्याले चाय के निकल आया करते थे।

दरवाजे की चौखट पर अभी भी चाकू की खरोचें मौजूद हैं छोटी छोटी रेखाएँ एक के ऊपर दूसरी। मेरे जन्म दिन पर हर साल मुझे इस चौखट के साथ सटाकर खडा कर दिया जाता था, और एक नयी रेखा खोद दी जाती थी।

"बस जी, अब मुह धोकर रहा। इस साल तुम एक इच भी लम्बे नही हुए। अब जिन्दगी भर ठिगन ही बन रहोगे "

लगी है।

अतीत की यादा मे कोई शृखला नही, शरद के पत्तो की तरह सर-सराती एक ही रेले मे बढती चली जाती है। एक दृश्य उभरता है और उभरत ही खण्ड खण्ड हो जाता है। पर यादो के इस भँवर मे मै खो गया हूँ और खोता जा रहा हूँ।

पिछले बरामदे के बेंच पर कोई बैठा गा रहा है। धीमी धीमी खरज-सी आवाज। छोटी बुआ गा रही है। दानो टागें बेंच के ऊपर चढाय हुए।

बुआ बेपरवाह तबीयत की है। सारा वक्त हसती रहती है, लेकिन जब भी गाती है तो अवसाद भरा गीत गाती है।

*'किधरो आइया नी बेडियाँ, सौदागर राँझा*

किधरो आए मल्लाह, नी हीरे ?

पूर्वो आइया नी बेडिया, सौदागर राझा

पच्छमो आए मल्लाह नी हीरे "

वह गाती है तो सचमुच लगता है सौदागरो की नावें पूव की ओर स आकर पश्चिम की ओर चली गयी हैं कही पर भी उनका ठौर ठिकाना नही है। राझा और हीर भी कहाँ से आये थे, कहा चले गये ?

छोटी बुआ क्या इमीलिए इतना अवसाद भरा गीत गा रही है, क्योकि खुद चलने की तैयारी कर रही है ? क्या सचमुच इसे इस बात का भास हो गया है कि वह जा रही है ? नही उसे कुछ भी मालूम नही। वह आज भी सबके साथ घूमने जायेगी, घरवाला के लिए छोटे मोटे तोहफे खरीदती फिरेगी। वह किसी बात का बुरा नही मानता। उससे कुछ खो जाये, कुछ टूट जाये तो मा के गले से लिपटकर माफी माँग लेती है। उसके माथे पर कभी शिकन नही आयी। पर जब कभी वह अकेली बैठी गान लगती है तो मा दाँतो तले होठ दबा लेती है, क्याकि जब छोटी बुआ अपना दद बदाश्त नही कर सकती तो गाने लगती है।

मैं उसके पास जाऊगा तो वह गाना बन्द कर देगी और हसने लगेगी और साथ हसी मजाक करने लगेगी।

कभी-कभी मा उसके पास जा बैठती है और उस समझाने लगती है,

व्यवहार के सबक सिखाने लगती है।

"तू उसकी मान मनौवल करना छोड दे। आदमी की जितनी ज्यादा मान मनौवल करो उतना ज्यादा वह अकडता है। कभी-कभी रूठ जाया कर। उसके साथ बोला भी नही कर। कुछ देर के लिए घर से निकल जाया कर, उसे भी मालूम हो कि तू मान-अभिमानवाली लडकी है।"

छोटी बुआ, हिरनी-जैसी बडी-बडी आँखो से मा के चेहरे की ओर देख रही है।

"वह मेरे साथ बोले तो मैं बोलू भी नही ? मैं तो दिन भर उसकी राह देखती रहती हू। वह आये तो मैं घर से निकल जाया करू ? यह कैसे हो सकता है ?"

'तू तो पागल हुई जा रही है। मर्द को काबू मे करना सीख।" फिर माँ फुसफुसाकर कहती है, "रात को जब वह कभी तेरे पास आये तो पीठ मोड लिया कर।"

"हाय, वह थककर जो आता है। मैं इन्कार कैसे कर दू ? मैं कहती हू, इससे अगर इसे खुशी मिलती है तो मुझे सब मजूर है "

माँ ने लम्बा सास खीचा है और बार बार सिर हिला रही है।

'सारी जिन्दगी तडप-तडपकर गुजारेगी, अगर अपना भला नही सोचेगी।"

और धीमी आवाज मे छोटी बुआ कह रही है

"इससे ज्यादा और क्या तडपूगी। तुम क्या जानो इस तडपने मे कितना सुख है।"

मा फिर सिर हिला रही है।

"मर्द सिर को चढ गया है, तेरा अब कोई इलाज नही। तू अपना घर उजाडकर रहेगी।'

जवानी का प्रेम घुन की तरह बुआ का कलेजा चाट रहा था।

पर अब बेंच खाली है। इसका रग रोगन उड चुका है। हिलाओ तो इसकी सब चूलें हिलने लगती हैं। छोटी बुआ यहा पर नही है।

लगता, है रात हो गयी है। यहा पर खडे खडे वह कमरा दायी ओर गलियारे के पार पडता है, जिसमे बुआ अपने पति के साथ रहा करती थी।

खिडकी का पर्दा धीरे धीरे हिल रहा है और चारो ओर चादनी छिटकी है। क्या आज रात फिर बुआ बिस्तर पर से उठकर सोये सोये चलने लगेगी? कमरे म हरक्त है। काइ चल रहा है। बुआ ही है। सफद लम्बा कुर्ता पहने है और सोये सोये चलने लगी है। आकाश से उतरी अप्सरा सी लगती है। वह कुछ भी देख नही पा रही है। वह कमरा लाघ आयी है और अब गलियारा लाघ रही है। गलियारे की बडी बडी खिड किया खुली हैं। अगर बुआ नीद मे बायी ओर को जरा भी झुके तो सीधी नीच जा गिरेगी। लगता है बुआ अभी गिरी कि गिरी। वह सीढियो की ओर बढती जा रही है। जब भी वह नींद मे चलती है तो सदा सीढियो की ओर जाती है।

पर उसके पीछे कोई जा रहा है। कमरे म हरक्त है। छोट फूफा लपककर उसके पीछे जा रहे हैं। बुआ क पास पहुचकर रुक गये हैं और धीरे धीरे आगे बढन लगे हैं ताकि बुआ जाग नही जाये। पास पहुँचकर उन्होने बुआ को अपनी बाहो मे ले लिया है। बुआ न सोये सोये ही ठण्डी सास भरकर अपना सिर फूफा के कधे पर रख दिया है। पति के कधे पर सिर रखे छोटी बुआ, किसी मादक सपने मे खोयी-सी धीरे धीरे अपने बिस्तर की ओर आने लगी है। फूफा उसे बडे धैय से थामे लिये जा रहे हैं। पर जब बुआ फिर बिस्तर पर लेट गयी है तो फूफा न उसी का दुपट्टा लेकर उसे पलग के साथ बाध दिया है ताकि बुआ सोये-सोये फिर पलग पर से नही उठे।

दोनो के बीच कैसा नाटक चल रहा है विडम्बनापूण, दद भरा।

बुआ सुबह उठेगी और अपने को बँधा पायगी तो पहला सवाल पति से यही पूछेगी, "क्या तुम्ह रात को फिर मेरे कारण परेशान होना पडा था?" उसकी बडी बडी आँखें पति के चेहरे पर लगी होगी 'तुम रात को मुझे किसी कोठरी म बन्द कर दिया करो। वहाँ पर मैं उठू भी तो ठोकरें खा-खाकर जाग जाया करूँगी। तुम्ह मरे कारण परेशान नही होना पडेगा।"

मैं कमरे की ओर बढता हूँ। बुआ का कमरा खाली पडा है। न बुआ के कपडे पलग पर बिखरे हैं, न ही उसके व्यक्तित्व का प्रकाश कमरे म

छिटका है। यहाँ भी टूटा फूटा फर्नीचर पडा है एक दराजोवाली अलमारी, दो लम्बे लम्बे ट्रक जिनमे पुरानी चीजें भरी हैं। ठीक उस पलग के ऊपर जिस पर स उठकर रात का बुआ चलने लगती थी बुआ की एक तस्वीर टँगी है। इस पर का मुनहरा फ्रेम काला पड चुका है, और तस्वीर की दफ्ती फ्रेम के बाहर भाक रही है। बुआ के मरन के बाद फूफा न ही इसे सुनहरे फ्रेम मे जडवाया था।

लेकिन अब इस कमरे म जसे मौत के साथ डालने लगे हैं, छोटी बुआ की मौत के।

बुआ पलग पर बैठी मेरी माँ से कह रही है

मुझे गभ है। तीमरा महीना चल रहा है।'

"सच !

हाँ, तो।"

'तूने बताया क्या नही ? तेरे मुह म घी शक्कर। कितनी अच्छी खबर सुनायी है। किसी डाक्टर को दिखाया है ?"

"नही, इसमे डाक्टर को दिखाने की क्या जरूरत है !' फिर मा का बाजू पकडकर बडे आग्रह से कह रही है, "मैं खुद ही तुमसे कहनेवाली थी। तुम मुझे दवाई ला दो ना जिससे यह गभ गिर जाये।"

'हट पगली, ऐसी पागलो जैसी बातें नही करते।'

"इन्हे बच्चा होना पसन्द नहीं है। कहत हैं—अभी क्या जल्दी है, बाद मे ले लेंगे और इधर मेरे गभ हो गया है।"

'हट ! उसे प्यार करती है और उसी के बच्चे का मार डालेगी ? तू उसकी बात सुन छोडा कर। बच्चा आयेगा तो उसका मन भी तेरे बारे म बदल जायेगा।"

'मुझे नहीं मालूम। तू कही से दवा ला दे जिसमे गभ गिर जाय।"

'खबरदार जो ऐमी बात फिर मुह पर लायी।"

मा ने डाट दिया है। मा सिर से पाव तक काप रही है। छोटी बुआ के सामने अपने को लाचार समझती है और उसके बारे मे अन्दर-ही अन्दर भय खाने लगती है ।

बुआ आज फिर पलग पर पडे पडे गाने लगी है। उसका चेहरा पीला

पड गया है और वह दुबला गयी है।

"किधरो आइया नी वडिया सौदागर राझा
किधरो आए मल्लाह नी हीरे '

मा कहती है जहर सिर को चढ गया है और बार बार हाथ मलती है कि क्यो न वक्त रहते कुछ कर लिया। शायद बुआ बच जाती।

सीढियो पर किसी के चढने की आवाज आ रही है। शरत की पत्नी है रचना। ये लोग सीढिया भी चढते हैं तो दौडकर, हँसत चहकते हुए। रचना दूर स ही बालने लगी है।

"तुम्ह क्या हो गया है ? कश्मीर मे घूमने आय हो या सारा वक्त इस घर म पटे रहने के लिए ? मेरा ता यहा दम घुटता है। दो दिन और इस घर मे रही ता बीमार पड जाऊँगी।

फिर मुझे बुआ की तस्वीर की ओर देखते हुए पाकर उसने सिर उधर उठाया।

'ओ यही तुम्हारी बुआ हैं जिनकी तुम बातें सुनाया करत हो ?' फिर सिर झटककर बोली, "यह तो कोई खास सुन्दर नही है। तुम कहते थे बडी सुन्दर थी तुम्हारी बुआ। बाल भी कमे काढे हैं। बिल्कुल आर्या स्कूल की बहिनजी लगती हैं। पर चलो, तुम यहाँ से चलो, हम लोग आज गुलमग को जा रह हैं। हमने सारा इन्तजाम कर लिया है, निकलो यहा से ।"

काफी चटकीला सा ढेर इकट्ठा कर लिया गया था। कश्मीरी समावार, कागडी हरे और लाल रंग का एक फिरन जो कश्मीरी औरतें कपडो के ऊपर पहनती हैं। एक हुक्का भी उठा लायी है। छाल के जूते और न जाने क्या-क्या!

हफ्ता भर इस घर के बाहर घाटी मे घूमने के बाद हम इसी घर मे लौट आये। अब वापिस रवानगी के दिन थे। रचना अपनी मनपसन्दी की चीजें खरीद रही थी, और कमरे के एक ओर उनका ढेर लगाये जा रही थी। शरत अब दिन भर सग्रहालय म रहने लगा था, या फिर शहर के अन्दर किसी खण्डहर को देखने अकेला निकल जाता और शाम को लौटता।

आखिर सब सामान बाधा जाने लगा। हमने निश्चय किया कि एक

एक सूटकेस मे हम अपना अपना सामान बाध लें। अगर किसी के पास कम या ज्यादा सामान हुआ तो आपस म बाट लेंग।

मेरे सामान पर नजर पडन ही रचना खिलखिलाकर हस पडी।

'तुम यह सब ले जा रहे हो ?'

'हा, तो।'

यह कूड का ढेर तुमने कहाँ से जमा किया ? क्या सचमुच इसे अपने साथ ले जाओगे ?"

'क्या नही, तुम्हे क्या एतराज है ?"

पर वह हँसती हुई आगे बढ आयी और एक एक चीज उठाकर दखने लगी।

"ये टूटी हुई खूटियाँ ! इन्हे भी साथ ले जाओगे ?' और वह हँसी से लोट पोट होन लगी, 'ये किसलिए ? इनम से तीन के सिरे टूट हुए हैं। इन्हे क्या कराग ?'

फिर नीचे झुककर उसने ढेरी पर स घर की पुरानी चायदानी उठा ली।

"इसे क्या कराग ? इसमे तुम लोग चाय पिया करत थे ? मगर अब तो इसम छेद ही छेद हैं। इस भी ले चलोगे ?" और वह फिर जोर से हँस दी।

अब की बार झुकी तो नीचे छोटी बुआ की तस्वीर थी।

"इसे भी ले जाओगे ? फ्रेम टूट गया है और तस्वीर को जगह-जगह से कीडा खा गया है। इसे उठाने मे क्या तुक है ?' पर फिर मेरी ओर देख कर सँभल सी गयी। "तुम्हे इतनी ज्यादा प्यारी है तो बेशक ले चलो, मैं कुछ नही कहती। लेकिन पुरानी चीजें ढोने मे क्या तुक है ? कहा तक इन्ह ढोते फिरोगे ? यह घर भी तो कुछेक साल का मेहमान रह गया है।'

"यह मेरी बुआ की तस्वीर है, रचना तुम नही जानती।"

'मैं जानती हूँ, और हर घर मे एक न एक ऐसी बुआ रहती है और जब स दुनिया बनी है, रहती आयी है। तुम किस किस बुआ की तस्वीर टांगते फिरोगे ? और सच पूछो तो तुम्हारी बुआ के प्रति मेरे दिल मे बहुत श्रद्धा भी नही है। ऐसा प्यार भी क्या नाहक अपनी जान ले ली।

इसमे क्या तुक है ? पर खर, मैं कुछ नहीं कहती। ले जाना चाहते हो तो जरूर ले चलो। मैंने तो इसीलिए कहा था कि सूटकेस मे जगह कम होगी। कूडा ढोने से क्या लाभ ?"

तभी शरत कमरे मे आया। मुस्करा रहा था और दोनो हाथ पीठ पीछे किये हुए था। उसके होठो पर सारा वक्त उजली सी मुस्कान खेलती रहती है। पास आकर बोला

'आपको एक चीज दिखाऊँ ? बडी मुश्किल से मुझ मिली है।'

उसने हाथ आगे बढाया। किसी खण्डहर मे से उठाया हुआ पत्थर का एक फलक था। किसी मूर्ति का टुकडा था, जगह जगह से टूटा हुआ। किसी पुरानी दीवार मे सजावट के लिए बनाये गये किसी उत्खनन चित्र का टुकडा था। बडा कलापूर्ण, बडा सुन्दर, भले ही आकृति साफ नही थी। लगता था कोई प्रेमिका अपने प्रेमी पर झुकी हुई है।

"हाय इसे तो हम जरूर ले चलेंगे !" रचना चहककर बोली, "यह तुम्हे कहाँ से मिला ?"

'हारवन के पास से मिला है। बाढ मे बहुत कुछ कीच के नीचे दब गया है। लेकिन कुछेक पत्थर लुढककर नीचे आ गये जान पडते हैं। उन्ही मे यह फलक भी था। गुप्तकाल का है। किसी दीवार का पत्थर रहा होगा।"

'किसी ने देखा तो नही तुम्हे उठाते हुए ? तुम जानते हो, इसकी मनाही है।"

सडक के किनारे पडा था। जो मनाही थी तो उठाकर सग्रहालय मे रखते, वहा क्यो पडा रहने दिया ?"

'हाय, कितना सुन्दर है।" रचना उसे अभी भी बडे अचरज और विस्मय से देखे जा रही थी, "लेकिन भारी बहुत है। सूटकेस मे आयेगा नही। लेकिन कोई बात नही, इसे झोले मे डालकर हाथ मे ले लेंगे। फिर उसकी नजर मेरी चीजो पर पडी, तो झेंपकर सफाई देती हुई-सी बोली

"इसे तो ले जाना ही होगा ना। इसे नही छोड सकते ना।'

मैं चुप रहा। कहता भी तो क्या !

# वाड्चू

तभी दूर मे वाड्चू आता दिखायी दिया।

नदी के किनारे, लालमण्डी की सडक पर धीरे धीरे डोलता सा चला आ रहा था। धूसर रग का चोगा पहने था और दूर से लगता था कि बौद्ध भिक्षुओं की ही भाति उसका सिर भी घुटा हुआ है। पीछे शकराचार्य की ऊँची पहाडी थी और ऊपर स्वच्छ नीला आकाश। सडक के दोनों ओर ऊँचे ऊँचे सफेदे के पेडो की कतारें। क्षण भर के लिए मुझे लगा, जसे वाड्चू इतिहास के पन्नो पर से उतरकर आ गया है। प्राचीन काल म इसी भाति देश विदेश स आनेवाले चीवरधारी भिक्षु पहाडो और घाटियो को लाघकर भारत मे आया करते होंगे। अतीत के ऐसे ही रोमाचकारी धुधलके मे मुझे वाड्चू भी चलता हुआ नजर आया। जब स वह श्रीनगर मे आया था, बौद्ध विहारों के खण्डहरो और सग्रहालयो म घूम रहा था। इस समय भी वह लालमण्डी के सग्रहालय मे से निकलकर आ रहा था, जहा बौद्धकाल के अनेक अवशेष रखे है। उसकी मन स्थिति को देखते हुए वह सचमुच ही वतमान से कटकर अतीत के ही किसी कालखण्ड मे विचर रहा था।

'बोधिसत्वो से भेंट हो गयी ?" पास आने पर मैंने चुटकी ली।

वह मुस्करा दिया, हल्की टेढी सी मुस्कान जिसे मेरी मौसेरी बहन डेढ दात की मुस्कान कहा करती थी, क्योकि मुस्कराते वक्त वाड्चू का ऊपर का होठ केवल एक ओर से थोडा-सा ऊपर को उठता था।

"सग्रहालय के बाहर बहुत सी मूर्तियाँ रखी है। मैं वहीं देखता रहा।' उसने धीमे से कहा फिर वह सहसा भावुक होकर बोला, "एक मूर्ति के केवल पैर ही पैर बचे हैं

मैंने सोचा, आगे कुछ कहेगा परन्तु वह इतना भावविह्वल हो उठा

था कि उसका गला रुँध गया और उसके लिए बोलना असम्भव हो गया।

हम एक साथ घर की ओर लौटने लगे।

महाप्राण के भी पैर ही पहले दिखाय जाते थे।' उसने कांपती सी आवाज म कहा और अपना हाथ मेरी कोहनी पर रख दिया। उसके हाथ का हल्का सा कम्पन, धडकते दिल की तरह महसूस हो रहा था।

"आरम्भ म महाप्राण की मूर्तिया नही बनायी जाती थी ना! तुम तो जानते हो पहले स्तूप के नीचे केवल पर ही दिखाये जाते थे। मूर्तियाँ तो बाद म बनायी जाने लगी थी।'

जाहिर है बोधिसत्व के पैर देखकर उस महाप्राण के पर याद हो आये थे और वह भावुक हो उठा था। कुछ पता नही चलता था, कौन सी बात किस वक्त वाड् चू को पुलकाने लगे, किस वक्त वह गदगद होने लग।

'तुमने बहुत देर कर दी। सभी लोग तुम्हारा इतजार कर रहे है। मैं चिनारो के नीचे भी तुम्हे खोज आया हूँ।" मैंने कहा।

मैं सग्रहालय म था "

'वह तो ठीक है, पर दो बजे तक हमे हब्बाकदल पहुँच जाना चाहिए वरना जाने का कोई लाभ नही।

उसने छोटे छोटे झटको के साथ तीन बार सिर हिलाया और कदम वढा दिये।

वाड चू भारत में मतवाला बना घूम रहा था। वह महाप्राण के जन्म स्थान लुम्बिनी की यात्रा नगे पाव कर चुका था सारा रास्ता हाथ जोडे हुए। जिस जिस दिशा म महाप्राण के चरण उठे थे वाड चू मत्रमुग्ध सा उसी उसी दिशा मे घूम आया था। सारनाथ मे जहा महाप्राण ने अपना पहला प्रवचन किया था और दो मृगशावक म त्रमुग्ध से झाडियो में से निकलकर उनकी ओर देखते रह गये थे वाड चू एक पीपल के पेड के नीचे घण्टो नतमस्तक वठा रहा था यहा तक कि उसके कथनानुसार उसके मस्तक मे अस्फुट से वाक्य गूजने लगे थे और उस लगा था जैसे महाप्राण का पहला प्रवचन सुन रहा है। वह इस भक्तिपूर्ण कल्पना मे इतना गहरा डूब गया था कि सारनाथ मे ही रहने लगा था। गगा की धारा को वह दसियो शताब्दियो के धुधलके मे पावन जलप्रवाह के रूप म दखता। जब से

नगर म आया था वह म न्हे पहाडो की चोटियो की ओर देखते हुए अक्सर मुझसे कहता—वह रास्ता ल्हासा को जाता है ना उसी रास्ते बौद्धग्रन्थ तिब्बत म भेजे गये थे। वह उस पर्वतमाला को भी पुण्य पावन मानता था क्योंकि उन पर बिछी पगडण्डियों के रास्ते बौद्ध भिक्षु तिब्बत की ओर गये थे।

वाङ चू कुछ वर्षों पहले वद्ध प्रोफेसर तान शान के साथ भारत आया था। कुछ दिनो तक तो वह उन्ही के साथ रहा और हिन्दी और अग्रेजी भाषाओ का अध्ययन करता रहा, फिर प्रोफेसर शान चीन लौट गये और वह यहीं बना रहा और किसी बौद्ध सोसाइटी से अनुदान प्राप्त कर सारनाथ म आकर बैठ गया। भावुक काव्यमयी प्रकृति का जीव, जो प्राचीनता के मन मोहक वातावरण म विचरते रहना चाहता था। वह यहा तथ्यो की खोज करने नही आया था। वह तो बोधिसत्वो की मूर्तियो को देखकर गदगद होने आया था। महीने भर से सग्रहालयो के चक्कर काट रहा था लेकिन उसने कभी नही बताया कि बौद्ध धर्म की किस शिक्षा से उसे सबसे अधिक प्रेरणा मिलती है। न तो वह किसी तथ्य को पाकर उत्साह से खिल उठता न उसे कोई सशय परेशान करता। वह भक्त अधिक और जिज्ञासु कम था।

मुझे याद नही कि उसने हमारे साथ कभी खुलकर बात की हो या किसी विषय पर अपना मत पेश किया हो। उन दिनो मेरे और मेरे दोस्तो के बीच घण्टो बहसे चला करती कभी देश की राजनीति के बारे म कभी धर्म के बारे मे लेकिन वाङ चू इनमे कभी भाग नही लेता था। वह सारा वक्त धीमे धीमे मुस्कराता रहता और कमरे के एक कोने म दबककर बैठा रहता। उन दिनों देश मे वलवला का सैलाब सा उठ रहा था। स्वतन्त्रता-आन्दोलन जोरो पर था और हमारे बीच उसी की चर्चा रहती—काग्रेस कौन सी नीति अपनायगी आन्दोलन कौन सा रुख पकडेगा। क्रियात्मक स्तर पर तो हम नाम कुछ करते कराते नही थे लेकिन भावनात्मक स्तर पर उसके साथ बहुत कुछ जुडे हुए थे। इस पर वाङ चू की तटस्थता हमे अखरने लगती, तो कभी अचम्भे मे डाल देती। वह हमारे देश की

गतिविधि के बार म नहीं, अपने देश की गतिविधि म भी कोई विशेष दिलचस्पी नहीं लेता था। उसके अपने देश के बारे म भी पूछा, तो मुस्कराता सिर हिलाता रहता था।

कुछ दिनो से श्रीनगर की हवा भी बदली हुई थी। कुछ मास पहले यहाँ गोली चली थी। कश्मीर के लोग महाराजा के खिलाफ उठ खडे हुए थ। और अब कुछ दिनो स शहर म एक नयी उत्तेजना पायी जाती थी। नेहरूजी *श्रीनगर आनवाले थे और उनका स्वागत करने के लिए नगर को* दुल्हन की तरह सजाया जा रहा था। आज ही दोपहर को नेहरूजी श्रीनगर पहुँच रहे थ। नदी के रास्ते नावो के जुलूस की शक्ल म उन्हें लाने की योजना थी और इसी कारण मैं वाड्चू को खोजता हुआ उस ओर आ निकला था।

हम घर की ओर बढे जा रहे थ, जब सहसा वाड्चू ठिठककर खडा हो गया।

'क्या मरा जाना बहुत जरूरी है? जसा तुम कहो '

मुझे धक्का-सा लगा। ऐसे समय म जब लाखो लोग नेहरूजी के स्वागत के लिए इकट्ठे हो रह थे वाड्चू का यह कहना कि अगर वह साथ म न जाय तो कसा रह, मुझे सचमुच बुरा लगा। लकिन फिर स्वय ही *कुछ सोचकर उसने अपने आग्रह को दोहराया नहीं और हम घर की ओर* साथ साथ जाने लगे।

कुछ देर बाद हब्बाकदल के पुल के निकट लाखो की भीड मे हम लोग खडे थे—मैं, वाड्चू तथा मेरे दो तीन मित्र। चारो ओर जहा तक नजर जाती, लोग ही लोग थ—मकानो की छतो पर पुल पर, नदी के ढालवाँ किनारो पर। मैं बार-बार कनखियो स वाड्चू के चेहरे की ओर देख रहा था कि उसकी क्या प्रतिक्रिया हुई है, कि हमारे दिल म उठनेवाले वलवलो का उस पर क्या असर हुआ है। यो भी यह मेरी आदत सी बन गयी है, जब भी कोई विदेशी साथ मे हो, मैं उसके चेहरे का भाव पढने की कोशिश करता रहता हूँ कि हमारे रीति रिवाज हमारे जीवन-यापन के बारे म उसकी क्या प्रतिक्रिया होती है। वाड्चू अधमुंदी आँखो स सामने का दृश्य देखे जा रहा था। जिस समय नेहरूजी की नाव सामने आयी तो जसे

मकानों की छतें भी हिल उठीं। राजहंस की शक्ल की सफेद नाव में नेहरूजी स्थानीय नेताओं के साथ खड़े हाथ हिला हिलाकर लोगों का अभिवादन कर रहे थे। और हवा में फूल ही फूल बिखर गये। मैंने पलटकर वाङ्चू के चेहरे की ओर देखा। वह पहले ही की तरह निश्चेष्ट-सा सामने का दृश्य देखे जा रहा था।

"आपको नेहरूजी कैसे लगे?" मेरे एक साथी ने वाङ्चू से पूछा।

वाङ्चू ने अपनी टेढ़ी सी आँखें उठाकर उसके चेहरे की ओर देखा, फिर अपनी डेढ़ दाँत की मुस्कान के साथ कहा, "अच्छा, बहुत अच्छा!"

वाङ्चू मामूली सी हिन्दी और अंग्रेजी जानता था। अगर तेज बोलो, तो उसके पल्ले कुछ नहीं पड़ता था।

नेहरूजी की नाव दूर जा चुकी थी, लेकिन नावों का जुलूस अभी भी चलता जा रहा था जब वाङ्चू सहसा मुझसे बोला, "मैं थोड़ी देर के लिए संग्रहालय में जाना चाहूँगा। इधर से रास्ता जाता है, मैं स्वयं चला जाऊँगा।' और वह बिना कुछ कहे, एक बार अधमिची आँखों से मुस्कराया और हल्के से हाथ हिलाकर मुड़ गया।

हम सभी हैरान रह गये। इसे सचमुच जुलूस में रुचि नहीं रही होगी, जो इतनी जल्दी संग्रहालय की ओर अकेला चल दिया है।

'यार, किस बूदम को उठा लाये हो? यह क्या चीज है? कहाँ से पकड़ लाये हो इसे?" मेरे एक मित्र ने कहा।

'बाहर का रहनेवाला है, इसे हमारी बातों में क्या रुचि हो सकती है!' मैंने सफाई देते हुए कहा।

'वाह, देश में इतना कुछ हो रहा हो और इसे रुचि ही न हो!'

वाङ्चू अब तक दूर जा चुका था और भीड़ में से निकलकर पेड़ों की कतार के नीचे आँखों से ओझल होता जा रहा था।

'मगर यह है कौन?" दूसरा एक मित्र बोला, "न यह बोलता है, न चहकता है। कुछ पता नहीं चलता, हँस रहा है या रो रहा है! सारा वक्त एक कोने में दबककर बैठा रहता है!"

"नहीं, नहीं, बड़ा समझदार आदमी है। पिछले पाँच साल से यहाँ पर रह रहा है। बड़ा पढ़ा लिखा आदमी है। बौद्ध धर्म के बारे में बहुत कुछ

जानता है।' मैंने फिर उसकी सफाई देते हुए कहा।

मेरी नजर में इस बात का बड़ा महत्व था कि वह बौद्ध ग्रंथ बांचता है और उन्हें बांचने के लिए इतनी दूर से आया है।

अरे भाड़ में जाय ऐसी पढ़ाई! वाह जी, जुलूस को छोड़कर म्युजियम की ओर चल दिया है!"

सीधी सी बात है यार!' मैंने जोड़ा, 'इसे यहां भारत का वर्तमान खींचकर नहीं लाया, भारत का अतीत लाया है। ह्यूनत्सांग भी तो यहां बौद्ध ग्रंथ ही बांचने आया था। यह भी शिक्षार्थी है। बौद्ध मत में इसकी रुचि है।

घर लौटते हुए हम लोग सारा रास्ता वाङ्चू की ही चर्चा करते रहे। अजय का मत था कि अगर वह पांच साल भारत में काट गया है तो अब वह जिन्दगी भर यहीं पर रहेगा।

'अब आ गया है, तो लौटकर नहीं जायेगा। भारत में एक बार परदेशी आ जाये, तो लौटने का नाम नहीं लेता।'

"भारत देश वह दलदल है कि जिसमें एक बार बाहर के आदमी का पांव पड़ जाये तो वह धंसता ही चला जाता है, निकलना चाहे भी, तो नहीं निकल सकता!' दिलीप ने मजाक में कहा, 'न जाने कौन से कमलफूल तोड़ने के लिए इस दलदल में घुसा है!"

"हमारा देश हम हिन्दुस्तानियों को पसन्द नहीं, बाहर के लोगों को तो बहुत पसन्द है!' मैंने कहा।

'पसन्द क्यों न होगा! यहां थोड़े में गुजर हो जाती है, सारा वक्त धूप खिली रहती है, फिर बाहर के आदमी को लोग परेशान नहीं करते, जहां बैठा है वहीं बैठा रहने देते हैं। इस पर उन्हें तुम जैसे भुड्डू भी मिल जाते हैं जो उनका गुणगान करते रहते हैं और उनकी आवभगत करते रहते हैं! तुम्हारा वाङ्चू भी यहीं पर मरेगा..।'

हमारे यहां उन दिनों मेरी छोटी मौसेरी बहन ठहरी हुई थी, वही जो वाङ्चू की मुस्कान को इंडियन की मुस्कान कहा करती थी। चुलबुली-सी

लडकी यात-यान पर ठिटोली करती रहती थी। मैंने ला ग्र प्रार वान्चू को कनखियो से उसकी ओर देखते पाया था, लेकिन कोई विशेष ध्यान नही दिया, क्योकि वह सभी को कनखियो से देखता था। पर उस शाम नीलम मेरे पास आयी और बोली "आपके दोस्त ने मुझे उपहार दिया है। प्रेमोपहार!"

मेरे कान खडे हो गये, "क्या दिया है?'

'झूमरो का जोडा!"

और उसने दानो मुट्ठियाँ खोल दी, जिनमे चाँदी के कश्मीरी चलन के दो सफेद झूमर चमक रहे थे। और फिर वह दोनो झमर अपने कानो के पास ले जाकर बोली, 'कैसे लगते हैं?"

मैं हतबुद्धि-सा नीलम की ओर देख रहा था।

"उसके अपने कान कैसे भूरे भूरे हैं! नीलम ने हँसकर कहा।

'किसके?'

'मेरे इस प्रेमी के!"

'तुम्हे उसके भूरे कान पसन्द हैं?"

बहुत ज्यादा! जब शर्माता है तो ब्राउन हो जाते हैं, गहरे ब्राउन!' और नीलम खिलखिलाकर हँस पडी।

लडकियाँ कैसे उस आदमी के प्रेम का मजाक उडा सकती है, जो उन्हे पसन्द न हो! या कही नीलम मुझे बना तो नही रही है?

पर मैं इस सूचना से बहुत विचलित नही हुआ था। नीलम लाहौर मे पढती थी और वान्चू सारनाथ मे रहता था और अब वह हफ्तेभर मे श्रीनगर से वापस जानेवाला था। इस प्रेम का अकुर अपने आप ही जल-भुन जायगा।

नीलम, ये झूमर तो तुमने उससे ले लिये हैं, पर इस प्रकार की दोस्ती अन्त मे उसके लिए दुखदायी होगी। बन बनायगा कुछ नही!'

'वाह भैया, तुम भी कैसे दकियानूसी हो! मैंने भी चमडे का एक राइटिंग पैड उसे उपहार मे दिया है। मेरे पास पहले से पडा था मैंने उसे दे दिया। जब लौटेगा तो प्रेम पत्र लिखने मे उसे आसानी होगा!

वह क्या कहता था?'

"कहता क्या था सारा वक्त उसके हाथ कापते रहे और चेहरा कभी लाल होता रहा कभी पीला। कहता था, मुझे पत्र लिखना, मेरे पत्रों का जवाब देना। और क्या कहेगा, बचारा, भूरे कानोवाला!"

मैंने ध्यान मे नीलम की ओर देखा, पर उसकी आखो मे मुझे हसी के अतिरिक्त कुछ दिखायी नही दिया। लडकियाँ दिल की बात छिपाना खूब जानती है। मुझे लगा नीलम उसे बढावा दे रही है। उसके लिए यह खिलवाड था, लेकिन वाडचू जरूर इसका दूसरा ही अर्थ निकालेगा।

इसके बाद मुझे लगा कि वाडचू अपना सन्तुलन खो रहा है। उसी रात मैं अपने कमरे की खिडकी के पास खडा बाहर मशाल मे चिनारो की पात की ओर देख रहा था, जब चादनी म, कुछ दूरी पर पेडो के नीचे मुझे वाडचू टहलता दिखायी दिया। वह अक्सर रात को देर तक पेडो के नीचे टहलता रहता था। पर आज वह अकेला नही था। नीलम भी उसके साथ ठुमक ठुमक चलती जा रही थी। मुझे नीलम पर गुस्सा आया। लडकियाँ कितनी जालिम होती हैं! यह जानते हुए भी कि इस खिलवाड से वाडचू की बेचैनी बढेगी वह उसे बढावा दिये जा रही थी।

दूसरे रोज खाने की मेज पर नीलम फिर उसके साथ ठिठोली करने लगी। किचन म से एक चौडा सा एलुमीनियम का डिब्बा उठा लायी। उसका चेहरा तपे ताम्र जैसा लाल हो रहा था।

'आपके लिए रोटियाँ और आलू बना लायी हूँ। आम के अचार की फाँक भी रखी है। आप जानते हैं, फाँक किसे कहते हैं? एक बार कहो तो, 'फाँक'! कहो वाडचूजी, फाँक'!"

उसने नीलम की ओर खोयी-खोयी आँखो से देखा और बोला, 'वाँक!' हम सभी खिलखिलाकर हँस पडे।

'वाँक नही, फाँक!"

वाँक! फिर हँसी का फव्वारा फूट पडा।

नीलम ने डिब्बा खोला। उसमे से आम के अचार का टुकडा निकाल कर उसे दिखाते हुए बोली यह है फाँक फाँक इसे कहते हैं! 'और उसे वाडचू की नाक के पास ले जाकर बोली, 'इस सूघने पर मुह म पानी भर आता है। आया मुह मे पानी? अब कहो, 'फाँक'!'

"नीलम क्या फिजूल बातें कर रही हो! बैठो आराम से!" मैंने डाटते हुए कहा।

नीलम बैठ गयी, पर उसकी हरकतें बन्द नही हुइ। बडे आग्रह से वाङचू से कहने लगी, "बनारस जाकर हमे भूल नही जाइएगा! हमे खत जरूर लिखिएगा। और अगर किसी चीज की जरूरत हो, तो सकोच नही कीजिएगा।"

वाङचू शब्दो के अर्थ तो समझ लेता था लेकिन उनके पीछे व्यग्य की ध्वनि वह नही पकड पाता था। वह अधिकाधिक विचलित महसूस कर रहा था।

"भेड की खाल की जरूरत हो, या कोई नमदा, या अखरोट "

"नीलम!"

'क्यो भैया, भेड की खाल पर बैठकर ग्रन्थ बाचेंगे!"

वाङचू के कान लाल होने लगे। शायद पहली बार उसे भास होने लगा था कि नीलम ठिठोली कर रही है। उसके कान सचमुच भूरे रग के हो रहे थे, जिनका नीलम मजाक उडाया करती थी।

"नीलमजी आप लोगो ने मेरा बडा अतिथि सत्कार किया है। मैं बडा कृतज्ञ हूँ।"

हम सब चुप हो गये। नीलम भी झेंप सी गयी। वाङचू ने जरूर ही उसकी ठिठोली को समझ लिया होगा। उसके मन को जरूर ठेस लगी होगी। पर मेरे मन मे यह विचार भी उठा कि एक तरह से यह अच्छा ही है कि नीलम के प्रति उसकी भावना बदले, वरना उसे ही सबसे अधिक परेशानी होगी।

शायद वाङचू अपनी स्थिति को जानते समझते हुए भी एक स्वाभाविक आकर्षण की चपेट में आ गया था। भावुक व्यक्ति का अपने पर कोई काबू नही होता। वह पछाड खाकर गिरता है, तभी अपनी भूल को समझ पाता है।

सप्ताह के अन्तिम दिनो मे वह रोज कोई-न-कोई उपहार लेकर आने लगा। एक बार मेरे लिए भी एक चोगा ले आया और बच्चो की तरह जिद करने लगा कि मैं और वह अपना-अपना चोगा पहनकर एक साथ घूमने

जायें। सग्रहालय मे वह अब भी जाता था, दो एक बार नीलम को भी अपन साथ ले गया था और लौटने पर सारी शाम नीलम बाधिसत्वा की खिल्ली उडाती रही थी। मैं मन-ही मन नीलम के इस व्यवहार का स्वागत ही करता रहा, क्योकि मैं नही चाहता था कि वाटचू की कोई भावना हमारे घर म जड जमा पाये। सप्ताह बीत गया और वाटचू सारनाथ वापस लौट गया।

वाडच के चले जाने के बाद उसके साथ मरा सम्पक वसा ही रहा, जसा आम तौर पर एक परिचित व्यक्ति के साथ रहता है। गाह ब गाह कभी खत आ जाता, कभी किसी आत जाते व्यक्ति से उसकी सूचना मिल जाती। वह उन लोगो मे से था जो बरसो तक औपचारिक परिचय की परिधि पर ही डोलते रहते है, न परिधि लाघकर अन्दर आते है और न ही पीछे हटकर आँखो से ओझल होते हैं। मुझे इतनी ही जानकारी रही कि उसकी समतल और बँधी बँधायी दिनचर्या म कोई अन्तर नही आया। कुछ देर तक मुझे कुतूहल सा बना रहा कि नीलम और वाडचू के बीच की बात आगे बढी या नही, लेकिन लगा कि वह प्रेम भी वाडचू के जीवन पर हावी नही हो पाया।

बरस और साल बीतते गये। हमारे देश मे उन दिनो बहुत कुछ घट रहा था। आये दिन सत्याग्रह होते बगाल मे दुर्भिक्ष फूटा, 'भारत छोडो' का आन्दोलन हुआ सडको पर गोलियाँ चली, बम्बई मे नाविको का विद्रोह हुआ, देश म खूरेजी हुई, फिर देश का बँटवारा हुआ, और सारा वक्त वाडचू सारनाथ मे ही बना रहा। वह अपने मे सन्तुष्ट जान पडता था। कभी लिखता कि तन्त्रज्ञान का अध्ययन कर रहा है, कभी पता चलता कि कोई पुस्तक लिखने की योजना बना रहा है।

इसके बाद मेरी मुलाकात वाडचू से दिल्ली मे हुई। यह उन दिनो की बात है, जब चीन के प्रधान मन्त्री चू एन-लाई भारत-यात्रा पर आनेवाले थ। वाडचू अचानक सडक पर मुझे मिल गया और मैं उस अपने घर ले आया। मुझे अच्छा लगा कि चीन के प्रधान मन्त्री के आगमन पर वह सारनाथ से दिल्ली चला आया है। पर जब उसने मुझे बताया कि वह अपन

अनुष्ठान के सिलसिले मे आया है और यही पहुँचने पर उस चू एन-लाई के आगमन की सूचना मिली है, तो मुझे उसकी मनोवृत्ति पर अचम्भा हुआ। उसका स्वभाव वस-का वैसा ही था। पहले की ही तरह होते होले अपनी डेढ दाँत की मुस्कान मुस्कराता रहा। वैसा ही निश्चेष्ट, असम्पक्त। इस बीच उसने कोई पुस्तक अथवा लेखादि भी नही लिखे थे। मेरे पूछने पर इस काम म उसने कोई विशेष रुचि भी नही दिखायी। तन्त्रज्ञान की चर्चा करते समय भी वह बहुत चहका नही। दो एक ग्रन्थो के बारे म बताता रहा, जिनमे म वह कुछ टिप्पणियाँ लेता रहा था। अपने किसी लेख की भी चर्चा उसने की जिस पर वह अभी काम कर रहा था। नीलम के साथ उसकी चिट्ठी पत्री चलती रही, उसने बताया, हालाँकि नीलम कब की ब्याही जा चुकी थी और दो बच्चो की मा बन चुकी थी। समय की गति के साथ हमारी मूल धारणाएँ भले ही न बदलें, पर उनके आग्रह म परिवतन होता रहता है। अपने अध्ययन आदि की भी उसने चर्चा की, वहा भी आग्रह और उत्सुकता म स्थिरता सी आ गयी थी। पहले जसी भाव विह्वलता नही थी। बोधिसत्वो के पैरो पर अपने प्राण निछावर नही करता फिरता था। लेकिन अपने जीवन से सन्तुष्ट था। पहले की ही भांति थोडा खाता, थोडा पढता, थोडा भ्रमण करता और थोडा सोता था। और दूर लडकपन के झुटपुटे मे किसी भावावेश मे चुन गये अपने जीवन पथ पर कछुए की चाल मजे स चलता आ रहा था।

खाना खाने के बाद हमारे बीच बहस छिड गयी—"सामाजिक शक्तियो को समझे बिना तुम बौद्ध धम को भी कसे समझ पाओगे ? ज्ञान का प्रत्येक क्षेत्र एक दूसरे से जुडा है, जीवन से जुडा है। कोई चीज जीवन से अलग नही है। तुम जीवन स अलग होकर धम को भी कसे समझ सकते हो ?

कभी वह मुस्कराता, कभी सिर हिलाता और सारा वक्त दाशनिको की तरह मेरे चेहरे की ओर देखता रहा। मुझे लग रहा था कि मेरे कहे का उस पर कोई असर नही हो रहा, कि चिकने घडे पर मैं पानी उँडेले जा रहा हू।

'हमारे देश म न सही तुम अपने देश के जीवन मे तो रुचि लो !

इतना तो जानो समझो कि वहा पर क्या हा रहा है ! '

इस पर भी वह सिर हिलाता और मुस्कराता रहा। मैं जानता था कि एक भाई को छोडकर चीन म उसका कोई नही है। १६२६ मे वहाँ पर कोई राजनीतिक उथल पुथल हुई थी, उसम उसका गांव जला डाला गया था और सब सग सम्बन्धी मर गये थे, या भाग गये थ। ले-दकर एक भाई बचा था और वह पेकिंग के निकट किसी गांव म रहता था। बरसो से वाङचू का सम्पक उसके साथ टूट चुका था। वाङचू पहले अपने गाव के स्कूल म पढता रहा था बाद म पेकिंग के एक विद्यालय मे पढन लगा था। वही स वह प्रोफेसर शान के साथ भारत चला आया था।

"सुनो वाङचू, भारत और चीन के बीच बन्द दरवाजे अब खुल रहे हैं। अब दोना देशो के बीच सम्पक स्थापित हो रहे हैं और इसका बडा महत्त्व है। अध्ययन का यही काम जो तुम अभी तक अलग-थलग करते रहे हो, वही अब तुम अपने देश के मान्य प्रतिनिधि के रूप मे कर सकते हो। *तुम्हारी सरकार तुम्हारे अनुदान का प्रबन्ध करेगी। अब तुम्हं अलग थलग* पडे नही रहना पडेगा। तुम पन्द्रह साल स अधिक समय से भारत म रह रहे हो अग्रेजी और हिन्दी भाषाएँ जानत हो, बौद्ध ग्रन्थो का अध्ययन करते रहे हो, तुम दोना देशो के सास्कृतिक सम्पक म एक बहुमूल्य कडी बन सकते हा "

उसकी आंखो म हल्की सी चमक आयी। सचमुच उसे कुछ सुविधाएँ मिल सकती थी। क्यो न उनसे लाभ उठाया जाये ! दोना देशो के बीच पायी जानवाली सदभावना से वह भी प्रभावित हुआ था। उसने बताया कि कुछ ही दिनो पहले अनुदान की रकम लेने जब वह बनारस मे गया, तो सडको पर राह चलते लोग उससे गले मिल रहे थे। मैंने उसे मशविरा दिया कि कुछ समय के लिए जरूर अपने देश लौट जाये और वहा होनेवाले विराट परिवतना को देखे और समझे कि सारनाथ मे अलग थलग बठे रहने से उस कुछ लाभ नही होगा, आदि-आदि।

वह सुनता रहा, सिर हिलाता और मुस्कराता रहा, लेकिन मुझे कुछ मालूम नही हो पाया कि उस पर कोई असर हुआ है, या नही।

लगभग छह महीने बाद उसका पत्र आया कि वह चीन जा रहा है।

हुआ था और भी बहुत कुछ बदला था। पर यहाँ पर भी उसके लिए वैसी ही स्थिति थी, जैसी भारत में रही थी। उसके मन में उछाह नहीं उठता था। दूसरा का उत्साह उसके दिल पर से फिसल फिसल जाता था। वह यहाँ भी दर्शक ही बना घूमता था। शुरू शुरू के दिनों में उसकी आव भगत भी हुई। उसके पुराने अध्यापक की पहलकदमी पर उसे स्कूल में आमन्त्रित किया गया। भारत चीन सांस्कृतिक सम्बन्धों की महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में उसे सम्मानित भी किया गया। वहाँ वाङ्चू देर तक लोगों को भारत के बारे में बताता रहा। लोगों ने तरह-तरह के सवाल पूछे रीति रिवाज के बारे में, तीर्थों, मेलों-पर्वों के बारे में, वाङ्चू केवल उन्हीं प्रश्नों का सन्तोषप्रद उत्तर दे पाता, जिनके बारे में वह अपने अनुभव के आधार पर कुछ जानता था। लेकिन बहुत कुछ ऐसा था, जिसके बारे में भारत में रहते हुए भी वह कुछ नहीं जानता था।

कुछ दिनों बाद चीन में 'बड़ी छलांग' की मुहिम जोर पकड़ने लगी। उसके गाँव में भी लोग लोहा इकट्ठा कर रहे थे। एक दिन सुबह उसे भी रद्दी लोहा बटोरने के लिए एक टोली के साथ भेज दिया गया था। दिन भर वह लोगों के साथ रहा था। एक नया उत्साह चारों ओर व्याप रहा था। एक एक लोहे का टुकड़ा लोग बड़े गर्व से दिखा दिखाकर ला रहे थे और साझे ढेर पर डाल रहे थे। रात के वक्त आग के लपलपाते शोलों के बीच उस ढेर को पिघलाया जाने लगा। आग के इर्द गिर्द बैठे लोग क्रान्तिकारी गीत गा रहे थे। सभी लोग एक स्वर में सहगान में भाग ले रहे थे। अकेला वाङ्चू मुँह बाये बैठा था।

चीन में रहते धीरे धीरे वातावरण में तनाव सा आने लगा और एक झुटपुटा सा घिरने लगा। एक रोज एक आदमी नीले रंग का कोट और नीले ही रंग की पतलून पहने उसके पास आया और उसे अपने साथ ग्राम प्रशासन केन्द्र में लिवा ले गया। रास्ते भर वह आदमी चुप बना रहा। केन्द्र में पहुँचने पर उसने पाया कि एक बड़े से कमरे में पाँच व्यक्तियों का एक दल मेज के पीछे बैठा उसकी राह देख रहा है।

जब वाङ्चू उनके सामने बैठ गया तो वे बारी-बारी से उसके भारत निवास के बारे में सवाल पूछने लगे— तुम भारत में कितने वर्षों तक रहे ?"

वहा पर क्या करते थे ?' कहा कहा घूमे ?' आदि आदि। फिर बौद्ध धम के प्रति वाङचू की जिज्ञासा के बारे म जानकर उनमे से एक व्यक्ति बोला 'तुम क्या सोचते हो बौद्ध धम का भौतिक आधार क्या है ?"

सवाल वाङ चू की समझ मे नही आया। उसने आखें मिचमिचायी।

"द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी की दृष्टि म तुम बौद्ध धम को कसे आकते हो ?'

सवाल फिर भी वाङ चू की समझ मे नही आया लेकिन उसने बुद बुदाते हुए उत्तर दिया 'मनुष्य के आध्यात्मिक विकास मे उसके सुख और शान्ति के लिए बौद्ध धम का पथ प्रदशन बहुत ही महत्त्वपूण है। महाप्राण के उपदेश "

और वाङचू बौद्ध धम के आठ उपदेशो की व्याख्या करने लगा। वह अपना कथन अभी समाप्त नही कर पाया था जब प्रधान की कुर्सी पर बैठे पनी तिरछी आखोंवाले एक व्यक्ति ने बात काटकर कहा "भारत की विदेशनीति के बारे मे तुम क्या सोचते हो ?

वाङचू मुस्कराया अपनी डेढ दात की मुस्कान फिर बोला, "आप भद्रजन इस सम्बन्ध मे ज्यादा जानते है। मैं तो साधारण बौद्ध जिज्ञासु हूँ। पर भारत बडा प्राचीन दश है। उसकी सस्कृति शान्ति और मानवीय सद्भावना की सस्कृति है '

नेहरू के बारे म तुम क्या सोचते हो ?"

'नेहरू को मैंने तीन बार देखा है। एक बार तो उनसे बातें भी की है। उन पर कुछ कुछ पश्चिमी विज्ञान का प्रभाव अधिक है, परन्तु प्राचीन सस्कृति के वह भी बडे प्रशसक हैं।'

उसके उत्तर सुनते हुए कुछ सदस्य तो सिर हिलाने लगे कुछ का चेहरा तमतमाने लगा। फिर तरह-तरह के पने सवाल पूछे जाने लगे। उन्होने पाया कि जहा तक तथ्यो का और भारत के वतमान जीवन का सवाल है वाङचू की जानकारी अधूरी और हास्यास्पद है।

'राजनीतिक दृष्टि से तो तुम शून्य हो! बौद्ध धम की अवधारणाओ को भी समाजशास्त्र की दृष्टि से तुम आंक नही सकते! न जाने वहा बठे क्या करते रहे हो! पर हम तुम्हारी मदद करेंगे।'

पूछताछ घण्टो तक चलती रही। पार्टी अधिकारियों ने उसे हिन्दी पढ़ाने का काम दे दिया साथ ही पकिंग के संग्रहालय में सप्ताह में दो दिन काम करने की भी इजाजत दे दी।

जब वाङचू पार्टी दफ्तर से लौटा, तो थका हुआ था। उसका सिर भन्ना रहा था। अपने देश में उसका दिल जम नहीं पाया था। आज वह और भी ज्यादा उखड़ा उखड़ा महसूस कर रहा था। छप्पर के नीचे लेटा तो उसे सहसा ही भारत की याद सताने लगी। उसे सारनाथ की अपनी कोठरी याद आयी जिसमें दिन भर बैठा पोथी बांचा करता था। नीम का घना पेड़ याद आया जिसके नीचे कभी कभी सुस्ताया करता था। स्मृतियों की शृंखला लम्बी होती गयी। सारनाथ की कैंटीन का रसोइया याद आया, जो सदा प्यार से मिलता था, सदा हाथ जोड़कर कहो भगवन कहकर अभिवादन करता था।

एक बार वाङचू बीमार पड़ गया था, तो दूसरे रोज कैंटीन का रसोइया अपने आप उसकी कोठरी में चला आया था "मैं भी कहूँ चीनी बाबू चाय पीने नहीं आये दो दिन हो गये! पहले आते थे, तो दर्शन हो जाते थे। हम खबर की होती, भगवन तो हम डाक्टर बाबू को बुला लाते मैं भी कहूँ, बात क्या है।' फिर उसकी आँखों के सामने गंगा का तट आया, जिस पर वह घण्टों घूमा करता था। फिर सहसा दृश्य बदल गया और कश्मीर की झील आँखों के सामने आ गयी और पीछे हिमाच्छादित पर्वत फिर नीलम सामने आयी, उसकी खुली खुली आँखें मोतिया-सी झिल मिलाती दन्तपंक्ति उसका दिल बेचैन हो उठा।

ज्यों ज्यों दिन बीतने लगे भारत की याद उसे ज्यादा परेशान करने लगी। वह जल में से बाहर फेंकी हुई मछली की तरह तड़पने लगा। सारनाथ के विहार में सवाल जवाब नहीं होते थे। जहाँ पड़े रहो पड़े रहो। रहने के लिए कोठरी और भोजन का प्रबन्ध विहार की ओर से था। यहाँ पर नयी दृष्टि से धर्मग्रन्थों को पढ़ने और समझने के लिए उसमें धैर्य नहीं था जिज्ञासा भी नहीं थी। बरसों तक एक ही ढर्रे पर चलते रहने के कारण वह परिवर्तन से कतराता था। इस बैठक के बाद वह फिर से सकुचाने सिमटने लगा था। कहीं कहीं पर उसे भारत सरकार विरोधी वाक्य भी

सुनने को मिलने। सहसा वाङ चू बहुत अकेला महसूस करने लगा और उसे लगा कि जिन्दा रह पाने के लिए उसे अपने लड़कपन के उस 'दिवा स्वप्न' में फिर से लौट जाना होगा जब वह बौद्ध भिक्षु बनकर भारत में विचरने की कल्पना किया करता था।

उसने सहसा भारत लौटने की ठान ली। लौटना आसान नहीं था। भारतीय दूतावास से तो वीसा मिलने में कठिनाई नहीं हुई लेकिन चीन की सरकार ने बहुत से एतराज उठाये। वाङ चू की नागरिकता का सवाल था और अनेक सवाल थे। पर भारत और चीन के सम्बन्ध अभी तक बहुत बिगड़े नहीं थे, इसलिए अन्त में वाङ चू को भारत लौटने की इजाजत मिल गयी। उसने मन ही मन निश्चय कर लिया कि वह भारत में ही अब जिन्दगी के दिन काटेगा। बौद्ध भिक्षु ही बने रहना उसकी नियति था।

जिस रोज वह कलकत्ता पहुंचा उसी रोज सीमा पर चीनी और भारतीय सैनिकों के बीच मुठभेड़ हुई थी और दस भारतीय सैनिक मारे गये थे। उसने पाया कि लोग घूर घूरकर उसकी ओर देख रहे हैं। वह स्टेशन के बाहर अभी निकला ही था जब दो सिपाही आकर उसे पुलिस के दफ्तर में ले गये और वहां घण्टे भर एक अधिकारी उसके पासपोर्ट और कागजों की छानबीन करता रहा।

'दो बरस पहले आप चीन गये थे। वहां जाने का क्या प्रयोजन था?

'मैं बहुत बरस तक यहां रहता रहा था कुछ समय के लिए अपने देश जाना चाहता था।' पुलिस अधिकारी ने उसे सिर से पैर तक देखा। वाङ चू आश्वस्त था और मुस्करा रहा था—वही टेढ़ी सी मुस्कान।

आप वहां पर क्या करते रहे?

वहां एक कम्यून में मैं खेती बारी की टोली में काम करता था।'

मगर आप तो कहते हैं कि आप बौद्ध ग्रन्थ पढ़ते हैं?"

'हां पीकिंग में मैं एक संस्था में हिन्दी पढ़ाने लगा था और पीकिंग म्यूजियम में मुझे काम करने की इजाजत मिल गयी थी।

अगर इजाजत मिल गयी थी, तो आप अपने देश से भाग क्या आये ?' पुलिस अधिकारी ने गुस्से में कहा।

वाड चू क्या जवाब दे ? क्या कहे ?

मैं कुछ समय के लिए ही वहाँ गया था, अब लौट आया हूँ "

पुलिस अधिकारी ने फिर से सिर से पाँव तक उसे घूरकर देखा। उसकी आँखों में संशय उतर आया था। वाड चू अटपटा सा महसूस करने लगा। भारत में पुलिस अधिकारियों के सामने खड़े होने का उसका पहला अनुभव था। उससे जामिनी के लिए पूछा गया, तो उसने प्रोफेसर तान शान का नाम लिया, फिर गुरुदेव का पर दोनों मर चुके थे। उसने सारनाथ की संस्था के मन्त्री का नाम लिया शान्तिनिकेतन के पुराने दो एक सहयोगियों के नाम लिये, जो उसे याद थे। सुपरिण्टण्डेण्ट ने सभी नाम और पते नोट कर लिये। उसके कपड़ों की तीन बार तलाशी ली गयी। उसकी डायरी को रख लिया गया, जिसमें उसने अनेक उद्धरण और टिप्पणियाँ लिख रखे थे। और सुपरिण्टेण्डेण्ट ने उसके नाम के आगे टिप्पणी लिख दी कि इस आदमी पर नजर रखने की जरूरत है।

रेल के डब्बे में बैठा, तो मुसाफिर गोली-काण्ड की चर्चा कर रहे थे। उसे बैठते देख सब चुप हो गये और उसकी ओर घूरने लगे।

कुछ देर बाद जब मुसाफिरों ने देखा कि वह थोड़ी-बहुत बंगाली और हिंदी बोल लेता है, तो एक बंगाली बाबू उचककर उठ खड़े हुए और हाथ झटक झटककर कहने लगे, या तो कहो कि तुम्हारे देशवालों ने विश्वास घात किया है नहीं तो हमारे देश में निकल जाओ निकल जाओ निकल जाओ !

डेढ़ दाँत की मुस्कान जाने कहाँ ओझल हो चुकी थी। उसकी जगह चेहरे पर त्रास उतर आया था। भयाकुल और मौन वाड चू चुपचाप बैठा रहा। कहे भी तो क्या कहे ? गोली काण्ड के बारे में जानकर उसे भी गहरा धक्का लगा था। उस झगड़े के कारण के बारे में उसे कुछ भी स्पष्टतः मालूम नहीं था। और वह जानना चाहता भी नहीं था।

हाँ सारनाथ में पहुँ[illegible] ा हो उठा। अपना थैला रिक्शा में रखे जब [illegible] ेन का रसोइया

सचमुच लपककर बाहर निकल आया—"आ गये भगवन ? आ गये मेरे चीनी बाबू ! बहुत दिनो बाद दशन दिये ! हम भी कहे, इतना अरसा हो गया, चीनी बाबू नहीं लौट ! और कहिए, सब कुशल मगल है ? आप यहा नहीं थे हम कह जाने कब लौटेंगे ! यहा पर थे दिन म दो बातें हो जाती थी, भले आदमी के दशन हो जाते थे। इसमे बडा पुण्य होता है।" और उसन हाथ बढाकर थैला उठा लिया "हम दें पैसे, चीनी बाबू ?"

वाङ् चू को लगा जैसे वह अपने घर पहुच गया है।

'आपकी ट्रक, चीनी बाबू, हमारे पास रखी है। मन्त्रीजी से हमने ले ली। आपकी कोठरी मे एक दूसरे सज्जन रहने आये, तो हमने कहा, कोई चिन्ता नही यह ट्रक हमारे पास रख जाइए, और चीनी बाबू, आप अपना लोटा बाहर ही भूल गय थे ? हमने मन्त्रीजी से कहा यह लोटा चीनी बाबू का है, हम जानत हैं हमारे पास छोड जाइए।"

वाङ् चू का दिल भर भर आया। उसे लगा, जसे उसकी डावाडोल जिन्दगी मे सन्तुलन आ गया है। डगमगाती जीवन नौका फिर से स्थिर गति से चलने लगी है।

मन्त्रीजी भी स्नेह से मिले, पुरानी जान-पहचान के आदमी थे। उन्होने एक कोठरी भी खालकर द दी परन्तु अनुदान के बारे मे कहा कि उसके लिए फिर से कोशिश करनी हागी। वाङ् चू ने फिर से कोठरी के बीचोबीच चटाई बिछा ली खिडकी के बाहर वही दृश्य फिर से उभर आया। खोया हुआ जीव अपने स्थान पर लौट आया।

तभी मुझे उसका पत्र मिला कि वह भारत लौट आया है और फिर से जमकर बौद्ध ग्रन्थो का अध्ययन करने लगा है। उसन यह भी लिखा कि उस मासिक अनुदान के बारे मे थोडी चिन्ता है और इस सिलसिले म मैं बनारस मे यदि अमुक सज्जन का पत्र लिख दू तो अनुदान मिलने मे सहायता होगी।

पत्र पाकर मुझे खटका हुआ। कौन सी मृगतृष्णा इसे फिर से वापस खीच लायी है ? यह लौट क्या आया है ? अगर कुछ दिन और वहा बना

रहता, तो अपने लोगों के बीच इसका मन लगने लगता। पर किसी की सनक का कोई इलाज नहीं। अब जो लौट आया है, तो क्या चारा है। मैंने 'अमुक' जी को पत्र लिख दिया और वाड़ चू के अनुदान का छोटा मोटा प्रबन्ध हो गया।

पर लौटने के दसेक दिन बाद वाड़ चू एक दिन प्रात चटाई पर बैठा एक ग्रंथ पढ़ रहा था और बार-बार पुनक रहा था, जब उसकी किताब पर किसी का साया पड़ा। उसने नजर उठाकर देखा तो पुलिस का थानेदार खड़ा था हाथ में एक पर्चा उठाये हुए था। वाड़ चू का दिल बैठ गया। अब यह कौन-सी नयी परेशानी उठनेवाली है? वाड़ चू को बनारस के बड़े पुलिस स्टेशन में बुलाया गया था। वाड़ चू का मन आशंका से भर उठा था।

तीन दिन बाद वाड़ चू बनारस के पुलिस स्टेशन के बरामदे में बैठा था। उसी के साथ बेंच पर बड़ी उम्र का एक और चीनी व्यक्ति बैठा था, जो जूते बनाने का काम करता था। आखिर बुलावा आया और वाड़ चू चिक उठाकर बड़े अधिकारी की मेज के सामने जा खड़ा हुआ।

तुम चीन से कब लौटे?"

वाड़ चू ने बता दिया।

'कलकत्ता में तुमने अपने बयान में कहा कि तुम शान्तिनिकेतन जा रहे हो फिर तुम यहां क्यों चले आये? पुलिस को पता लगाने में बड़ी परेशानी उठानी पड़ी है।"

'मैंने दोनों स्थानों के बारे में कहा था। शान्तिनिकेतन तो मैं केवल दो दिन के लिए जाना चाहता था।

'तुम चीन से क्या लौट आये?"

मैं भारत में रहना चाहता हूँ।' उसने पहले का जवाब दोहरा दिया।

'जो लौट आना था तो गये क्यों थे?

यह सवाल वह बहुत बार पहले भी सुन चुका था। जवाब में बौद्ध ग्रंथों का हवाला देने के अतिरिक्त उसे कोई और उत्तर नहीं सूझ पाता था।

बहुत लम्बी इण्टरव्यू नही हुई। वाड चू को हिदायत की गयी कि हर महीने के पहले सोमवार को बनारस के बड़े पुलिस स्टेशन में उसे आना होगा और अपनी हाजिरी लिखानी होगी।

वाड चू बाहर आ गया, पर खिन्न सा महसूस करने लगा। महीने में एक बार आना कोई बड़ी बात नही थी लेकिन वह उसके समतल जीवन मे बाधा थी, व्यवधान था।

वाड चू मन-ही मन इतना खिन्न महसूस कर रहा था कि बनारस से लौटने के बाद कोठरी मे जाने की बजाय वह सबसे पहले उस नीरव पुण्य-स्थान पर जाकर बैठ गया जहा शताब्दियो पहले महाप्राण ने अपना पहला प्रवचन किया था और देर तक बैठा मनन करता रहा। बहुत देर बाद उसका मन फिर से ठिकाने पर आने लगा और दिल मे फिर से भावना की तरगें उठने लगी।

पर वाड चू का चैन नसीब नही हुआ। कुछ ही दिन बाद सहसा चीन और भारत के बीच जग छिड़ गयी। देश भर मे जैसे तूफान उठ खड़ा हुआ। उसी रोज शाम को पुलिस के कुछ अधिकारी एक जीप मे आये और वाड चू को हिरासत मे लेकर बनारस चले गये। सरकार यह न करती, तो और क्या करती? शासन करनेवालो को इतनी फुरसत कहा कि सकट के समय सवेदना और सदभावना के साथ दुश्मन के एक एक नागरिक की स्थिति की जाच करते फिरें?

दो दिनो तक दोनो चीनियो को पुलिस स्टेशन की एक कोठरी मे रखा गया। दोनो के बीच किसी बात मे भी समानता नही थी। जूते बनाने-वाला चीनी सारा वक्त सिगरेट फूकता रहता और घुटनो पर कोहनिया टिकाये बडबडाता रहता, जबकि वाड चू उदभ्रान्त और निढाल सा दीवार के साथ पीठ लगाये बैठा शून्य मे देखता रहता।

जिस समय वाड चू अपनी स्थिति को समझने की कोशिश कर रहा था, उसी समय दो तीन कमरे छोड़कर पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की मेज पर उसकी छोटी सी पोटली की तलाशी ली जा रही थी। उसकी गैर मौजूदगी मे

पुलिस के सिपाही कोठरी में से उसकी ट्रंक उठा लाये थे। सुपरिण्टेण्डेण्ट के सामने कागजों का पुलिन्दा रखा था, जिस पर कहीं पाली में तो कहीं संस्कृत भाषा में उद्धरण लिखे थे, लेकिन बहुत सा हिस्सा चीनी भाषा में था। साहब कुछ देर तक तो कागजों को उलटते पलटते रहे, रोशनी के सामने रखकर उनमें लिखी किसी गुप्त भाषा को ढूंढते भी रहे, अंत में उन्होंने हुक्म दिया कि कागजों के पुलिन्दे को बांधकर दिल्ली के अधिकारियों के पास भेज दिया जाय, क्योंकि बनारस में कोई आदमी चीनी भाषा नहीं जानता था।

पांचवें दिन लड़ाई बन्द हो गयी लेकिन वाङ चू को सारनाथ लौटने की इजाजत एक महीने के बाद मिली। चलते समय जब उसे उसकी ट्रंक दी गयी और उसने उसे खोलकर देखा, तो सकते में आ गया। उसके कागज उसमें नहीं थे जिन पर वह बरसों से अपनी टिप्पणियाँ और लेखादि लिखता रहा था और जो एक तरह से उसके सर्वस्व थे। पुलिस-अधिकारी के कहने पर कि उन्हें दिल्ली भेज दिया गया है वह सिर से पैर तक कांप उठा था।

"वे मेरे कागज आप मुझे दे दीजिए। उन पर मैंने बहुत कुछ लिखा है वे बहुत जरूरी हैं।"

इस पर अधिकारी रुखाई से बोला, "मुझे उन कागजों का क्या करना है, आपके हैं, आपको मिल जायेंगे।" और उसने वाङ चू को चलता किया। वाङ चू अपनी कोठरी में लौट आया। अपने कागजों के बिना वह अधमरा-सा हो रहा था। न पढ़ने में मन लगता, न कागजों पर नये उद्धरण उतारने में। और फिर उस पर कड़ी निगरानी रखी जाने लगी थी। खिड़की से थोड़ा हटकर नीम के पेड़ के नीचे एक आदमी रोज बैठा नजर आने लगा। डण्डा हाथ में लिये वह कभी एक करवट बैठता कभी दूसरी करवट। कभी उठकर डोलने लगता कभी कुएँ की जगत पर जा बैठता, कभी कटीन की बेंच पर आ बैठता कभी गेट पर जा खड़ा होता। इसके अतिरिक्त अब वाङ चू को महीने में एक बार के स्थान पर सप्ताह में एक बार बनारस में हाजिरी लगवाने जाना पड़ता था।

तभी मुझे वाङ चू की चिट्ठी मिली। सारा ब्यौरा देने के बाद उसने

लिखा कि बौद्ध विहार का मन्त्री बदल गया है और नये मन्त्री को चीन से नफरत है और वाङ्चू को डर है कि अनुदान मिलना बन्द हो जायगा। दूसरे, कि मैं जैसे भी हो उसके कागजों को बचा लूं। जैसे भी बन पड़े, उन्हें पुलिस के हाथों से निकलवाकर सारनाथ में उसके पास भिजवा दूं। और अगर बनारस के पुलिस स्टेशन में प्रति सप्ताह पेश होने की बजाय उसे महीने में एक बार जाना पड़े, तो उसके लिए सुविधाजनक होगा क्योंकि इस तरह महीने में लगभग दस रुपये आने जाने में लग जाते हैं और फिर काम में मन ही नहीं लगता सिर पर तलवार टँगी रहती है।

वाङ्चू ने पत्र तो लिख दिया लेकिन उसने यह नहीं सोचा कि मुझ जैसे आदमी से यह काम नहीं हो पायगा। हमारे यहाँ कोई काम बिना जान पहचान और सिफारिश के नहीं हो सकता। और मेरे परिचय का बड़े-से-बड़ा आदमी मेरे कालेज का प्रिंसिपल था। फिर भी मैं कुछेक संसद सदस्यों के पास गया एक ने दूसरे की ओर भेजा, दूसरे ने तीसरे की ओर। मैं भटक भटककर लौट आया। आश्वासन तो बहुत मिले, पर सब यही पूछते—'वह चीन जा गया था वहां से लौट क्यों आया?' या फिर पूछते—'पिछले बीस साल से अध्ययन ही कर रहा है?"

पर जब मैं उसकी पाण्डुलिपियों का जिक्र करता, तो सभी यही कहते, 'हां यह तो कठिन नहीं होना चाहिए।' और सामने रखे कागज पर कुछ नोट कर लेते। इस तरह के आश्वासन मुझे बहुत मिले, सभी सामने रखे कागज पर मेरा आग्रह नोट कर लेते। पर सरकारी काम के रास्ते चक्रव्यूह के रास्तों के समान होते हैं और हर मोड़ पर कोई न-कोई आदमी तुम्हें तुम्हारी हैसियत का बोध कराता रहता है। मैंने जवाब में उसे अपनी कोशिशों का पूरा ब्योरा दिया, यह भी आश्वासन दिया कि मैं फिर लोगों से मिलूंगा पर साथ ही मैंने यह भी सुझाव दिया कि जब स्थिति बेहतर हो जाय तो वह अपने देश वापस लौट जाय कि उसके लिए यही बेहतर है।

खत से उसके दिल की क्या प्रतिक्रिया हुई मैं नहीं जानता। उसने क्या सोचा होगा? पर उन तनाव के दिनों में जब मुझे स्वयं चीन के व्यवहार पर गुस्सा आ रहा था, मैं वाङ्चू की स्थिति का बहुत सहानुभूति के साथ नहीं देख सकता था।

उसका फिर एक खत आया। उसम चीनी नोट जाने का कोई जिक्र नही था। उसम केवल अनुदान की चर्चा की गयी थी। अनुदान की रकम अभी भी चालीस रुपये ही थी, लेकिन उसे पूर्वसूचना दे दी गयी थी कि साल खत्म होने पर उस पर फिर से विचार किया जायगा कि वह मिलती रहेगी या बन्द कर दी जायेगी।

लगभग साल भर बाद वाडचू को एक पुर्जा मिला कि तुम्हारे कागज वापस किये जा सकते है, कि तुम पुलिस स्टेशन आकर उन्हे ले जा सकते हो। उन दिनो वह बीमार पडा था, लेकिन बीमारी की हालत म भी वह *गिरता पडता बनारस पहुँचा। लेकिन उसके हाथ एक तिहाई कागज लगे।* पोटली अभी भी अधखुली थी। वाड चू को पहले तो यकीन नही आया, फिर उसका चेहरा जर्द पड गया और हाथ पैर कांपने लगे। इस पर थानेदार रुखाई के साथ बोला, 'हम कुछ नही जानते। इन्हे उठाओ और यहा से ले जाओ, वरना इधर लिख दो कि हम लेने से इन्कार करते हैं।"

कापती टाँगो से वाडचू पुलिन्दा बगल मे दबाये लौट आया। कागजो मे केवल एक पूरा निबन्ध और कुछ टिप्पणिया बची थी।

उसी दिन से वाडचू की आखो के सामने धूल उडने लगी थी।

वाडचू की मौत की खबर मुझे महीने भर बाद मिली, वह भी बौद्ध विहार के मन्त्री की ओर से कि मरने के पहले वाडचू ने आग्रह किया था कि उसकी छोटी सी टक और उसकी गिनी चुनी किताबें मुझे पहुँचा दी जायें।

उम्र के इस हिस्से मे पहुँचकर इन्सान बुरी खबरें सुनने का आदी हो जाता है और वे दिल पर गहरा आघात नही करती।

मैं फौरन ता सारनाथ नही जा पाया जाने मे कोई तुक भी नही थी, क्योकि वहा वाडचू का कौन बैठा था जिसके सामने अफसोस करता वहाँ तो केवल ट्रक ही रखी थी। पर कुछ दिनो बाद मौका मिलने पर मैं गया। मन्त्रीजी ने वाडचू के प्रति सद्भावना के शब्द कहे— बडा नेकदिल आदमी था सच्चे अर्थो मे बौद्ध भिक्षु था' आदि आदि। मेरे दस्तखत लेकर उन्होने टक मेरे हवाले की। ट्रक मे वाडचू के कपडे थे वह फटा-पुराना चोगा था,

जो किसी जमाने में उसने श्रीनगर में खरीदा था। छोटा सा कामदार चमड़े का पर्स था, जो नीलम ने उसे उपहारस्वरूप दिया था। तीन-चार किताबें थी, पाली की और संस्कृत की। चिट्ठियाँ थीं, जिनमें कुछ चिट्ठियाँ मेरी कुछ नीलम की रही होंगी, कुछ और लोगों की।

ट्रंक उठाये मैं बाहर की ओर जा रहा था, जब मुझे अपने पीछे कदमों की आहट मिली। मैंने मुड़कर देखा, कैंटीन का रसोइया भागता चला आ रहा था। अपने पत्रों में अक्सर वाङ्‌चू उसका जिक्र किया करता था

'बाबू आपकी बहुत याद करते थे। मेरे साथ आपकी चर्चा बहुत करते थे। बहुत भले आदमी थे '

और उसकी आँखें डबडबा आयी। सारे संसार में शायद यही अकेला जीव था, जिसने वाङ्‌चू की मौत पर दो आँसू बहाये थे।

"बड़ी भोली तबीयत थी। बेचारे को पुलिसवालों ने बहुत परेशान किया। शुरू शुरू में तो चौबीस घण्टे की निगरानी रहती थी। मैं उस हवलदार से कहूँ, भैया, तू क्या इस बेचारे को परेशान करता है? वह कहे, मैं तो ड्यूटी कर रहा हूँ ।"

मैं ट्रंक और कागजों का पुलिन्दा ले आया हूँ। इस पुलिन्दे का क्या करूँ? कभी सोचता हूँ, इसे छपवा डालूँ। पर अधूरी पाण्डुलिपि को कौन छापेगा? पत्नी रोज बिगड़ती है कि मैं घर में कचरा भरता रहता हूँ। दो-तीन बार वह फेंकने की धमकी भी दे चुकी है पर मैं इसे छिपाता रहता हूँ। कभी किसी तख्ते पर रख देता हूँ कभी पलंग के नीचे छिपा देता हूँ। पर मैं जानता हूँ, किसी दिन ये भी गली में फेंक दिये जायेंगे।

# अहं ब्रह्मास्मि

जाड़े की छुट्टियों में हम कभी-कभी सुबह सवेरे लम्बी सैर को निकल जाया करते। शहर की तंग गलियों में से निकलकर, नदी का पुल पार करते जो शहर को कन्टोनमेंट से अलग करता था, फिर पुल पार करके या तो सीधा मलिका विक्टोरिया के बुत की ओर मुँह कर लेते, या बायीं ओर को घूम जाते और दो-तीन मील का फासला तय करके पेड़ों के उस घने झुरमुट में जा पहुँचते, जहाँ अंग्रेज लोग गॉल्फ खेला करते थे, या घुड़सवारी करने आया करते थे या फिर अपनी प्रेमिकाओं की बगल में हाथ डाले चहलकदमी किया करते थे। शहर की घुटन भरी गलियों के बाद इन सड़कों पर घूमना बड़ा अच्छा लगता। आठ दस मील का लम्बा चक्कर काट चुकने के बाद हम कन्टोनमेंट में ही भाटिया के घर जा पहुँचते। यह सैर के कार्यक्रम का अभिन्न अंग हुआ करता था। सैर की मीठी मीठी थकान के बाद जब जूतों पर धूल की परत होती और पलकें भारी हो रही होतीं और बदन सुस्त रहा होता भाटिया के साफ-सुथरे, करीने से सजे सजाये फ्लैट में नाश्ता करने का अपना मजा था। फिर मन चाहा तो दोपहर तक वहीं पड़े रहे, और सिनेमा देखकर शाम को घर लौटे या अगर देखा कि भाटिया बहुत व्यस्त है, तो थोड़ी देर गप्प शप्प करने के बाद शहर की ओर चल दिये।

भाटिया मुझे तो बच्चा समझता था, लेकिन जितेन्द्र का अच्छा दोस्त था। और जितेन्द्र मेरा सम्बन्धी था और मुझसे वर्षों बड़ा था, लेकिन घूमने फिरने में हम एक दूसरे के साथी थे।

उस रात भी ग्यारह बजने बजते हम भाटिया के घर जा पहुचे। भाटिया किताबो की दुकान करता था और दुकान के पीछे ही दो-तीन कमरो मे रहता था। सफेद वर्दी और लाल कमरबन्द पहन एक खानसामे ने दरवाजा खोला और बडे अदब से सलाम किया। वास्तव मे, वह भाटिया की दुकान का कारिन्दा था लेकिन सुबह के वक्त रसोइये का हाथ बँटाने के लिए चला आया करता था और आते ही खानसामे की वर्दी पहन लिया करता था।

"आओ, जितेन्द्र आओ।" अन्दर से भाटिया की आवाज आयी।

ड्राइग रूम चमचमा रहा था और सोफे पर बैठा भाटिया हाथ बढाये हमारा स्वागत कर रहा था। मैं अन्दर घुसा, तो भाटिया ने उडती नजर से मेरे गर्द भरे जूतो की ओर देखा जिससे मैं खिसिया गया। पर भाटिया अपनी बत्तीसी दिखाते हुए बोला, 'कोई बात नही। जब तक तुम अपने जूते मेरी मेज पर नही रख देते, मुझे कोई एतराज नही।'

भाटिया अग्रेजी की किताबें बेचता था और कैन्टोन्मेंट मे रहता था, जहाँ अग्रेज बसते थे और सडको पर गोरे फौजी घूमते थे, इस कारण उसकी वजह-कतह अग्रेजो जैसी हो गयी थी। यो भी अग्रेजी की किताबें बेचनेवाला दुकानदार आम दुकानदारो से इस बात मे अलग होता है कि उसमे अपने-आप ही बुद्धिजीवी का पोज आ जाता है। वह नये नये लेखको का नाम जानता है तरह-तरह के विषयो पर बात कर सकता है। भाटिया साँवले रग का कुछ-कुछ कुरूप सा आदमी था, लेकिन उसकी भाव भगिमा मे एक अजीब चुस्ती थी। झट से घूम जाता, इस ढग से मुस्कराकर बात करता कि पूरी बत्तीसी झलक जाती। अग्रेज ग्राहको के सामने अजीब टेढे से ढग से झुकता, झट से पैतरा बदल लेता, पलक मारते दस दस किताबें उनके सामने रख देता और इस ढग से किताबो की बात करता कि लगता, उसने लायब्रेरियाँ पढ रखी हैं। यो भी उसकी रुचियो मे बौद्धिकता का पुट रहता था। उन दिनो वह अध्यात्म की बहुत बातें किया करता था और वेदान्त मे भी उसे दिलचस्पी थी, क्योकि उन्ही दिनो आल्डुअस हक्सले की किताबें छपकर आयी थी जिनमे भारतीय दर्शन की बडी प्रशसा की गयी थी।

थोडी देर तक सोफो पर बैठने के बाद भाटिया ने हमे, हस्ब मामूल,

खानेवाल कमरे की आर चलन को कहा। लगता था, वह पहले से हमारी राह देख रहा था।

दहलीज के पास वह आदत के मुताबिक तकल्लुफ स रुका पूरी बत्तासी के साथ मुस्कराया और जितेन्द्र को अन्दर चलने का आग्रह करने लगा, 'पहले तुम, जितेन्द्र ब्यूटी बिफोर द बीस्ट !"

यह उसका तकियाकलाम था। या उसके इस वाक्य म थोडी सच्चाई भी थी क्योकि उसके मुकाबले मे जितेन्द्र को सुन्दर कहा जा सकता था।

मुझे हमेशा ही भाटिया की मेज पर उठते हुए झेंप लगती थी। मैं अक्सर भूल जाता कि छुरी किस हाथ मे पकडनी चाहिए और काटा किस हाथ मे !

भाटिया मेज के सिरे पर अपनी जगह बठ गया और सर्वियट उठाकर अपन गले से लटका लिया। सर्वियेट, उन दिनो, कमीज के ऊपर खास लेने का चलन था। सब अग्रेज ऐसा ही करते थे। भाटिया के सामने चाँदी के पात्र रखे गय, जबकि हमारे सामन बरा साधारण चीनी के प्लेट और प्याले रख गया। यह भी भाटिया की सनक थी। वह हमेशा खाना चादी के बतनो मे खाता था, जबकि मेहमाना के सामने साधारण चीनी मिटटी के पात्र रखे जाते।

बरा लपक लपककर नाश्ता परोसने लगा। दो उबले हुए आलू भाटिया न चादी के डोंग मे से उठाकर अपनी प्लेट मे डाल लिये। फिर उन पर थोडा सा मेयोनेज डाला, फिर चान्दी की छुरी से उबले आलुओ के टुकडे किये और काटे छुरी से उन्ह खान लगा। भाटिया बहुत कम खाता था नाप तोलकर। गनीमत थी कि हमारे लिए हमारी रुचि के अनुसार आमलेट बनकर आये, वरना इतनी लम्बी सर के बाद अगर हमे उबले आलू ही खान थे तो भाटिया के घर जान मे क्या तुक थी ?

भाटिया की अग्रेजियत का हम पूरा पूरा लाभ उठाते। जाडा मे उसके कमरे मे अगीठी जलती और उसके पास बठे पोट वाइन की चुस्कियाँ लेत हुए हम गप शप करते। उसकी हर अदा अग्रेजो जसी थी। इतवार के दिन

वह सिगार पीता और कुत्ता लेकर घूमने जाता, और ऐसा कोट पहनकर जाता, जिसकी कोहनियो पर चमडे के झब्बे लगे रहते थ। गर्मी के मौसम म वह दिन म चार बार अपनी कमीज और दस बार बनियान बदलता था, और दिन मे तीन तीन बार अपने बेरे को 'गुसल लगाओ!' का हुक्म देता था। इतनी सफाई के बावजूद, जब एक बार वह बीमार पडा और बेहोशी म बडबडाया, तो अस्पताल की नर्स कानो पर हाथ रखे बाहर भाग आयी थी, "हे भगवान, मैं नही जानती थी कि एक अनब्याहा आदमी बेहोशी मे ऐसी लचर बातें बोल सकता है!"

अब सोचता हू, तो इस तरह के रहन सहन और अग्रेजियत का जरूर उसके मन पर बोझ सा बना रहता होगा क्योकि जमाना बदल रहा था और इस तरह के लोग बदलते परिवेश मे अटपटे मे नजर आने लगे थे और अग्रेज ग्राहको का रुख भी इनके प्रति, अन्य हिन्दुस्तानियो के प्रति उनके रुख से बहुत भिन्न नही था। मेरे सामने एक दिन, जब मैं उसकी दुकान के अन्दर खडा था, तो उसे एक अग्रेज महिला बुरी तरह से फटकार गयी थी, क्योकि उसने उसे कोई पुराना बिल भेजा था और उस पर 'प्लीज पे' का छपा हुआ लेबल लगा दिया था। वह औरत उस लेबल को देखकर बौखला उठी थी और यह सारा वक्त 'यस, मेडम, यस मेडम' कहता रहा था। वहा मेरे मौजूद रहने के कारण यह और भी ज्यादा परेशान हुआ था, क्योकि उस औरत के चले जाने के बाद कभी तो दबी आवाज म 'हॉरिबल वुमन!' कहता कभी मुझे अपनी बत्तीसी दिखाते हुए अपनी भूल स्वीकार करता "वह ठीक ही कहती थी। बिल भेजने का मतलब ही यह होता है कि पेमेट कर दो, उस पर अलग से लेबल लगाने म क्या तुक है!" उसे कोफ्त इस बात की थी कि काम करने का एक ढग होता है अग्रेजी ढग, और उसमे वह चूक गया था।

उबले आलू खा चुकने के बाद, काली कॉफी की चुस्कियाँ लेते हुए भाटिया अध्यात्म की बातें करने लगा, जितेन्द्र, जानते हो, हक्सले ने अह ब्रह्मास्मि' का अग्रेजी म क्या अनुवाद किया है?'

"क्या अनुवाद किया है?"

"अनुवाद है, आइ एम द डिवाइन फ्लेम!' बहुत बढिया अनुवाद है,

है ना ?"

फिर भाटिया ने गहरी दबी आवाज मे फिर से दोहराया, "आइ एम द डिवाइन फ्लेम ! सचमुच इस मन्त्र मे बडी शक्ति है। जब भी मैं इस दोहराता हूँ तो हर बार लगता है मेरे अन्दर शक्ति का सचार हो रहा है।" फिर भाटिया ने बठे ही बठे, दायें हाथ की मुट्ठी भीचते हुए, और गहरी, ऊची आवाज मे इस मन्त्र का उच्चारण किया, 'आइ एम द डिवाइन फ्लेम ! अह ब्रह्मास्मि !" अबकी बार उसकी आवाज मे पहले से भी ज्यादा कम्पन था। यह बार-बार इसे दोहराने लगा। हर बार 'आइ' पर पहले स ज्यादा जोर होता। हर बार उसकी आवाज और अधिक ऊँची उठ जाती। तीन चार बार वाक्य दोहराने के बाद मुझे लगा जसे वह वजूद मे आ गया है, आस पास की दुनिया को भूल गया है। उसके चश्मे के पीछे उसकी आँखें भी ज्यादा गहराने लगी थी, 'आइ एम द डिवाइन फ्लेम ! फॉर, आइ एम द डिवाइन फ्लेम ! अह ब्रह्मास्मि !"

देर तक दोहराते रहने के बाद वह मस्ती म ही चुप हो गया, और चुपचाप आखें बन्द किय बठा रहा। फिर धीरे-से उसने आँखें खोली, और फिर बन्द मुटिठया भी खोल दी।

"इस मन्त्र म बडा ओज है। जितेन्द्र जब कभी मैं परेशान होता हू, दुखी होता हूँ, तो मैं बार बार इस वाक्य को दोहराने लगता हूँ और मरे अन्दर स्फूर्ति और विश्वास और शक्ति जसे भरन लगती है। मुझे लगता है जैसे मेरा व्यक्तित्व फल रहा है और मैं जैसे ऊपर उठता चला जा रहा हूँ, मैं स्वय को सारे ब्रह्माण्ड का अग महसूस करने लगता हूँ। लगता है, चाँद सितारा और सहस्रों घूमते नक्षत्रो का मैं केन्द्र हूँ '

और भाटिया न फिर धीमी गहरी आवाज मे दो-तीन बार दोहराया, आइ एम द डिवाइन फ्लेम ! आइ एम द '

"अब केवल सस्कृत म कहकर देखो ! जितेन्द्र ने सुझाव दिया।

'सस्कृत मे वह बात नही है। फ्लेम शब्द म बडी शक्ति का भास होता है। "अह ब्रह्मास्मि !" उसन उच्चारण किया, 'नही, वह बात नही है। फुसफुसा सा लगता है। पर इस मन्त्र म बडी जान है। बडा ओज है। इसका उच्चारण करने स मन की सारी शिथिलता, सारा भय, सभी सशय,

त्रास दूर हो जाते हैं। मैं विश्व की सत्ता का अग बनने लगता हूँ। मेरा अस्तित्व आकाश की ऊँचाइयाँ छूने लगता है।" फिर भाटिया जस झूमकर बोला 'यह वह तन्तु है जिससे मैं भारत की आत्मा के साथ जुड जाता हूँ। मैंने अपने लिए वह तन्तु खोज निकाला है मैं डिक के सामने विस्तार से इसकी व्याख्या करूँगा। उसकी भी इसमे बडी रुचि है।

"डिक कौन ?" मेरे मुह से निकला।

'डिक ! तुम डिक को नही जानते ? तुम्हे शर्म आनी चाहिए।'

मैं झेंप गया। वास्तव म डिक, डिकी, डिकिन्सन सभी नाम एक ही व्यक्ति के थे, जो शहर का अग्रज डिप्टी कमिश्नर था। हमारे सामने उसकी चर्चा करता, तो भाटिया हमेशा डिक अथवा डिकी कहकर बुलाता था, लेकिन डिप्टी कमिश्नर के सामने 'मिस्टर डिकिन्सन' ही कहा करता था।

"उसे भी भारतीय दर्शन मे बडी रुचि है।' भाटिया ने कहा।

उन दिनो शायद हम सभी लोगो को ऐसे यूरोपीय लेखक पसन्द थे, जो भारतीय संस्कृति और दर्शनशास्त्र की प्रशंसा करते थे। इससे हमारा हीनभाव दूर होता था। जमाना बदल रहा था और नयी स्थिति के साथ अपना सन्तुलन बनाये रखने के लिए हर कोई अपनी पहली जगह से थोडा थोडा खिसक रहा था। कैंटोनमेंट के ही अनेक दुकानदार जहा अग्रेज अफ्सरो को डालिया भेजते थे, वहाँ छिपे लुके कांग्रेस को भी पैसे देने लगे थे। जितेन्द्र ऐसा पहनावा पहनने लगा था जो दूर से देखने पर शुद्ध खादी का बना नजर आता था। भारत की प्राचीन संस्कृति पर गर्व का भाव भी इसी प्रक्रिया का अग था। भाटिया को भी शायद इसीलिए भारत की आत्मा के दर्शन होने लगे थे। यो वह अग्रेजी हुकूमत को भारत के लिए वरदान मानता था और आये दिन अग्रेजो की इन्साफपसन्दी, उनके अनुशासन, उनकी जनतन्त्रात्मकता की तारीफ के पुल बाधा करता था। पर क्या मालूम वेदान्त दर्शन से सचमुच ही उसकी कोई आन्तरिक भूख, कोई आन्तरिक छटपटाहट शान्त होती हो।

तभी दूर कही मे ढोल बजने की आवाज सुनायी दी। भाटिया के कान खड हो गये। यह ढोल क टोनमेट मे बज रहा था इसी म इसकी भयावहता थी। उन दिनो आये दिन काग्रेस के जलस होत थ, और उनकी सूचना देनेवाले स्वयसवक ढोल बजा बजाकर गली गली, मुहल्ल मुहल्ले मुनादी किया करत थे। ढोल बजने की दर होती कि घरो की छतो पर, छज्जों पर, खिडकियो और झरोखो के पीछे लोग मुनादी सुनने के लिए इकटठ होने लगत। इस ढोल मे एक धडकन सी थी जो दिल पर अपना असर किये बिना नही रहती थी। लेकिन क टोनमेट मे यह ढोल पहली बार बज रहा था, और उस सुनते ही जैसे हमारे रोगटे खडे हो गये थे कि कौन कै टोनमेट म मुनादी करने का दु साहस कर पा रहा है।

"किसी जलसे की मुनादी है," जिते द्र बोला, ' कल बम्बई म गिरफ्तारियाँ हुई हैं शायद उसी सिलसिले म कोई जलसा हो रहा होगा।"

' लेकिन कै टोनमेट मे मुनादी करने से क्या लाभ ?" भाटिया ने कहा, "यहाँ तुम क्या अग्रेजो मे काग्रेस का प्रचार करने आये हो ?" उसने उत्तेजित होकर कहा।

ढोल की आवाज नजदीक आ रही थी।

"चलो बाहर चलकर देखते हैं।" मैंने सुझाव दिया।

"नही-नही, ऊपर चलकर खिडकी म से दख लेत है। सब कुछ नजर आ जायेगा। भाटिया ने जोडा।

मैं बाहर जाकर देखने को उतावला हो रहा था, लेकिन जिते द्र के समझाने पर कि ऊपर की मजिल से, खिडकी मे से दखना ही सही होगा, हम उपर चढ गये।

हम खिडकी के पास पहुँचे ही थे कि चौराहे की ओर से एक ताँगे ने मोड काटा और भाटिया की दुकान की ग्रोर बढने लगा। ताँगे के ऊपर तिरगा लहरा रहा था, और स्वच्छ नीले आकाश और क टोनमेट की हरियावल पृष्ठभूमि मे बडा सु दर और उजला उजला लग रहा था। उसी ताग मे से ढोल बजने की आवाज भी आ रही थी, धम धम् धम् धम्। सडक पर आते-जाते लोग ठिठककर रुकने लगे—बरे, छोटे दुकानदार, यहाँ तक कि स्कट पहने कुछ ऐंग्लो इण्डियन लडकियाँ, दो एक गोरे

सिपाही भी। सभी को शायद इस धृष्टता और दु साहस पर हैरानी हो रही थी कि काग्रेस का प्रचार करने कोई कैन्टोनमेंट म कैसे आ पहुँचा है।

तागा ऐन भाटिया की दुकान के सामने आकर खडा हो गया। और उसी क्षण भाटिया थाडा सरककर पीछे हो गया।

फिर एक दुबला पतला आदमी तागे की अगली सीट पर से उठकर खडा हो गया। पीला जद चेहरा, घर के धुले सफेद खादी के कपडे पर मुचडे हुए। उसके चेहरे पर पसीने की परत जस चमक रही थी। वह उठा और एक पैर तागे के बम पर रखकर, जिसस वह लहरात भण्डे के नीचे आ गया—मुनादी की इबारत बोलने लगा। उसने एक शेर पढा जो शायद शहीदो के बारे मे था फिर भावविह्वल सा होकर ऊँची आवाज म बोलने लगा, "साहिबान, आपने सुना हागा कि कल रोज बम्बई मे हमारे नेताओ को पकड पकडकर जेल मे डाल दिया गया है। सरकार की इस शमनाक कारवाई के विरुद्ध सभी भारतवासी अपनी आवाज उठायें। आज के दिन सभी बाजार, सभी दुकानें बन्द रहगी। मैं इस बाजार के दुकानदार भाइयो स भी दरख्वास्त करूँगा कि अपनी अपनी दुकानें बन्द कर दें और शाम को छह बजे कम्पनी बाग मे आम पब्लिक जलसा होगा "

फिर वह भाटिया की दुकान की ओर झाक झाककर देखने लगा। दुकान के बाहर काई कारिन्दा नही आया था। वहा किसी को न देखकर उसकी आँखें ऊपर को उठीं जहा खिडकी म हम तीना खडे थे। हमे देखकर उसने हाथ बाध दिये और दुकान बन्द करने का आग्रह करने लगा। भाटिया ने वहीं खडे खडे हाथ के इशारे से उसे आगे बढ जान को कहा, वैसे ही जैसे किसी भिखमगे को आग बढ जान का इशारा किया जाता है। पर इस पर भी जब वह बोलता गया, तो भाटिया पीछे हट गया और उसकी नजर से दूर हो गया।

थोडी देर बाद ढोल फिर से बजने लगा और तागा आगे बढने लगा। सडक पर खडे इक्के दुक्के लोग बिखरन और अपनी अपनी राह जाने लगे।

कितनी बडी बेवकूफी यह आदमी कर रहा है" भाटिया ने छूटते ही कहा, "इस तो फौजी अफसर गाली से उडा देंग। कन्टोनमट मे काग्रेस की मुनादी करना, क्या कोई मजाक है! और फिर, दुकानें बन्द करन को कह

तभी दूर कहीं से ढोल बजने की आवाज सुनायी दी। भाटिया के कान खड़े हो गये। यह ढोल कैंटोनमेंट में बज रहा था, इसी में इसकी भयावहता थी। उन दिनों आये दिन कांग्रेस के जलसे होते थे, और उनकी सूचना देनेवाले स्वयंसेवक ढोल बजा-बजाकर गली गली, मुहल्ले मुहल्ले मुनादी किया करते थे। ढोल बजने की देर होती कि घरों की छतों पर, छज्जों पर, खिड़कियों और झरोखों के पीछे लोग मुनादी सुनने के लिए इकट्ठे होने लगते। इस ढोल में एक धड़कन सी थी जो दिल पर अपना असर किये बिना नहीं रहती थी। लेकिन कैंटोनमेंट में यह ढोल पहली बार बज रहा था, और उसे सुनते ही जैसे हमारे रोंगटे खड़े हो गये थे कि कौन कैंटोनमेंट में मुनादी करने का दुःसाहस कर पा रहा है।

"किसी जलसे की मुनादी है," जितेन्द्र बोला, "कल बम्बई में गिरफ्तारियाँ हुई हैं शायद उसी सिलसिले में कोई जलसा हो रहा होगा।"

"लेकिन कैंटोनमेंट में मुनादी करने से क्या लाभ?" भाटिया ने कहा, "यहाँ तुम क्या अंग्रेजों में कांग्रेस का प्रचार करने आये हो?" उसने उत्तेजित होकर कहा।

ढोल की आवाज नजदीक आ रही थी।

"चलो बाहर चलकर देखते हैं।" मैंने सुझाव दिया।

"नहीं-नहीं, ऊपर चलकर खिड़की में से देख लेते हैं। सब कुछ नजर आ जायेगा।" भाटिया ने जोड़ा।

मैं बाहर जाकर देखने को उतावला हो रहा था, लेकिन जितेन्द्र के समझाने पर कि ऊपर की मंजिल से, खिड़की में से देखना ही सही होगा, हम ऊपर चढ़ गये।

हम खिड़की के पास पहुँचे ही थे कि चौराहे की ओर से एक ताँगे ने मोड़ काटा और भाटिया की दुकान की ओर बढ़ने लगा। ताँगे के ऊपर तिरंगा लहरा रहा था, और स्वच्छ नीले आकाश और कैंटोनमेंट की हरियावल पृष्ठभूमि में बड़ा सुन्दर और उजला उजला लग रहा था। उसी ताँगे में से ढोल बजने की आवाज भी आ रही थी, धम धम धम् धम्। सड़क पर आते जाते लोग ठिठककर रुकने लगे—बड़े, छोटे दुकानदार, यहाँ तक कि स्कर्ट पहने कुछ ऐंग्लो इण्डियन लड़कियाँ, दो एक गोरे

सिपाही भी। सभी को शायद इस धृष्टता और दुःसाहस पर हैरानी हो रही थी कि कांग्रेस का प्रचार करने कोई कैन्टोनमेंट में कैसे आ पहुँचा है।

तांगा एक भाटिया की दुकान के सामने आकर खड़ा हो गया। और उसी क्षण भाटिया खिड़की सरककर पीछे हो गया।

फिर एक दुबला पतला आदमी तांगे की अगली सीट पर से उठकर खड़ा हो गया। पीला जर्द चेहरा, घर के धुले सफेद खादी के कपड़े पर मुचड़े हुए। उसके चेहरे पर पसीने की परत जैसे चमक रही थी। वह उठा और एक पैर तांगे के बम पर रखकर, जिससे वह लहराते झण्डे के नीचे आ गया—मुनादी की इबारत बोलने लगा। उसने एक शेर पढ़ा जो शायद शहीदों के बारे में था फिर भावविह्वल सा होकर ऊँची आवाज में बोलने लगा "साहिबान, आपने सुना होगा कि कल रात बम्बई में हमारे नेताओं को पकड़-पकड़कर जेल में डाल दिया गया है। सरकार की इस शर्मनाक कारवाई के विरुद्ध सभी भारतवासी अपनी आवाज उठायें। आज के दिन सभी बाजार, सभी दुकानें बन्द रहेंगी। मैं इस बाजार के दुकानदार भाइयों से भी दरख्वास्त करूँगा कि अपनी-अपनी दुकानें बन्द कर दें और शाम को छः बजे कम्पनी बाग में आम पब्लिक जलसा होगा ..."

फिर वह भाटिया की दुकान की ओर झाँक झाँककर देखने लगा। दुकान के बाहर कोई कारिन्दा नहीं आया था। वहाँ किसी को न देखकर उसकी आँखें ऊपर को उठी जहाँ खिड़की में हम तीनों खड़े थे। हमें देखकर उसने हाथ बाँध दिये और दुकान बन्द करने का आग्रह करने लगा। भाटिया ने वहीं खड़े खड़े हाथ के इशारे से उसे आगे बढ़ जाने को कहा, वैसे ही जैसे किसी भिखमंगे को आगे बढ़ जाने का इशारा किया जाता है। पर इस पर भी जब वह बोलता गया, तो भाटिया पीछे हट गया और उसकी नजर से दूर हो गया।

थोड़ी देर बाद ढोल फिर से बजने लगा और तांगा आगे बढ़ने लगा। सड़क पर खड़े इक्के दुक्के लोग बिखरने और अपनी अपनी राह जाने लगे।

"कितनी बड़ी बेवकूफी यह आदमी कर रहा है," भाटिया ने छूटते ही कहा, "इसे तो फौजी अफसर गोली से उड़ा देंगे। कैंटोनमेंट में कांग्रेस की मुनादी करना क्या कोई मजाक है! और फिर, दुकानें बन्द करने को कह

तभी दूर कहीं से ढोल बजने की आवाज सुनायी दी। भाटिया के कान खड़े हो गये। यह ढोल कैंटोनमेंट में बज रहा था, इसी में इसकी भयावहता थी। उन दिनों आये दिन कांग्रेस के जलसे होते थे, और उनकी सूचना देनेवाले स्वयंसेवक ढोल बजा-बजाकर गली गली, मुहल्ले मुहल्ले मुनादी किया करते थे। ढोल बजने की देर होती कि घरों की छतों पर, छज्जों पर, खिड़कियों और झरोखों के पीछे लोग मुनादी सुनने के लिए इकट्ठे होने लगते। इस ढोल में एक धड़कन सी थी, जो दिल पर अपना असर किये बिना नहीं रहती थी। लेकिन कैंटोनमेंट में यह ढोल पहली बार बज रहा था, और उसे सुनते ही जैसे हमारे रोंगटे खड़े हो गये थे कि कौन कैंटोनमेंट में मुनादी करने का दुःसाहस कर पा रहा है।

"किसी जलसे की मुनादी है," जितेन्द्र बोला, "कल बम्बई में गिरफ्तारियां हुई हैं शायद उसी सिलसिले में कोई जलसा हो रहा होगा।"

लेकिन कैंटोनमेंट में मुनादी करने से क्या लाभ?" भाटिया ने कहा, "यहां तुम क्या अंग्रेजों में कांग्रेस का प्रचार करने आये हो?" उसने उत्तेजित होकर कहा।

ढोल की आवाज नजदीक आ रही थी।

"चलो, बाहर चलकर देखते हैं।" मैंने सुझाव दिया।

"नहीं-नहीं, ऊपर चलकर खिड़की में से देख लेते हैं। सब कुछ नजर आ जायेगा। भाटिया ने जोड़ा।

मैं बाहर जाकर देखने को उतावला हो रहा था, लेकिन जितेन्द्र के समझाने पर कि ऊपर की मंजिल से, खिड़की में से देखना ही सही होगा, हम ऊपर चढ़ गये।

हम खिड़की के पास पहुँचे ही थे कि चौराहे की ओर से एक तांगे ने मोड़ काटा और भाटिया की दुकान की ओर बढ़ने लगा। तांगे के ऊपर तिरंगा लहरा रहा था, और स्वच्छ नीले आकाश और कैंटोनमेंट की हरियावल पृष्ठभूमि में बड़ा सुंदर और उजला उजला लग रहा था। उसी तांगे में से ढोल बजने की आवाज भी आ रही थी, धम धम् धम् धम्। सड़क पर आते जाते लोग ठिठककर रुकने लगे—बैरे, छोटे दुकानदार, यहां तक कि स्कर्ट पहने कुछ ऐंग्लो इण्डियन लड़कियां, दो एक गोरे

सिपाही भी। सभी को शायद इस धृष्टता और दु साहस पर हैरानी हो रही थी कि काग्रेस का प्रचार करता कोई कन्टोनमेट म कस आ पहुँचा है।

ताँगा ऐन भाटिया की दुकान के सामने आकर खडा हो गया। और उसी क्षण भाटिया थाडा सरककर पीछे हो गया।

फिर एक दुबला पतला आदमी ताँगे की अगली सीट पर से उठकर खडा हो गया। पीला जद चेहरा, घर के धुले सफेद खादी के कपडे पर मुचडे हुए। उसके चेहरे पर पसीने की परत जस चमक रही थी। वह उठा और एक पर ताँगे के बम पर रखकर, जिसस वह लहराते भण्डे के नीचे आ गया—मुनादी की इबारत बोलने लगा। उसने एक नार पढा जो शायद शहीदो के बारे म था फिर भावविह्वल सा होकर ऊँची आवाज म बोलने लगा, "साहिबान, आपने सुना होगा कि कल राज बम्बई म हमारे नेताओ को पकड-पकडकर जेल म डाल दिया गया है। सरकार की इस दमनात्मक कारवाई के विरुद्ध सभी भारतवासी अपनी आवाज उठायें। आज के दिन सभी बाजार, सभी दुकानें बन्द रहेगी। मैं इस बाजार के दुकानदार भाइयो स भी दरख्वास्त करूँगा कि अपनी-अपनी दुकानें बन्द कर दें और शाम को छह बजे कम्पनी बाग मे आम पब्लिक जलसा होगा "

फिर वह भाटिया की दुकान की ओर झाँक झाँककर देखने लगा। दुकान के बाहर कोई कारिन्दा नही आया था। वहाँ किसी का न दखकर उसकी आँखें ऊपर को उठीं जहाँ खिडकी मे हम तीनो खडे थे। हम देखकर उसने हाथ बाध दिये और दुकान बन्द करने का आग्रह करने लगा। भाटिया ने वही खडे खडे हाथ के इशारे से उसे आगे बढ जाने को कहा, वैसे ही जैसे किसी भिखमगे को आगे बढ जाने का इशारा किया जाता है। पर इस पर भी जब वह बोलता गया, तो भाटिया पीछे हट गया और उसकी नजर से दूर हो गया।

थोडी देर बाद ढोल फिर से बजने लगा और तांगा आगे बढने लगा। सडक पर खडे इक्के दुक्के लोग बिखरने और अपनी अपनी राह जाने लगे।

'कितनी बडी बेवकूफी यह आदमी कर रहा है ' भाटिया ने छूटते ही कहा, "इसे तो फौजी अफसर गोली से उडा देंगे। कन्टोनमेंट म कांग्रेस की मुनादी करना, क्या कोई मजाक है ! और फिर दुकानें ब द करने को कह

रहा था।

बाद म हम पता चला कि वही मुनादी करनेवाला युवक हठ करके तांग का क टानमट मे ल आया था, यह जानते हुए भी कि क टानमट म जाना मौत के मुह मे जाना है। यह भी पता चला कि वह शहर के अपने साथिया स गले मिलकर आया था कि जाने अब कभी भेंट होगी या नही! और सच मुच फिर भेंट नही हुई थी, क्योकि उसी रात पुलिस के डण्डा से खोपडी फट जान पर उसने दम तोड दिया था। लेकिन इन सब बाता का पता हमें बाद म चला। उस वक्त तो लहराते तिरगे के साथ ढोल बजाता तांगा आगे मेसी गेट की ओर बढ गया था। उसके यो आ जाने से जो बिजली का सनसनाती लहर सी दौड गयी थी, वह अभी भी हम उद्वेलित कर रही थी।

"बडे साहस का काम है, इस तरह क टोनमेंट मे आकर मुनादी करना।" जिते द्र ने कहा।

"यह साहस नही, पागलपन है। तुम्हारी आवाज का यहाँ कौन सुनगा? क्या तुम गोरे फौजियो मे अपना प्रचार करने आये हो? क्या व हि दुस्तानी दुकानदार, जिनकी रोजी अंग्रेजो पर निभर करती है तुम्हारे प्रचार के चक्कर मे आकर अपनी दुकानें ब द कर देंगे? तुम आखिर किस मक्सद से यहा आये हो?"

भाटिया और जिते द्र के बीच बहस होने लगी। बात मुनादी से हटकर अहिंसा पर आ गयी, फिर गाधीजी की दाशनिक दष्टि पर, और इसी तरह परत दर परत सिद्धा त खुलने लगे।

इस बीच हमे ढोल की आवाज सुनायी देनी ब द हो गयी। शायद मेसी गेट के आगे निकल जाने पर आवाज बहुत धीमी पड गयी थी। धीरे धीरे वह आवाज वायुमण्डल म खो गयी और धीरे धीरे उसका स्प दन भी शा त होन लगा। बाद मे हम पता चला कि वही, मेसी गेट के ही थोडा आगे, जहा क टोनमेंट का बडा बाजार शुरू हो जाता है, एक जगह पर किसी ने तागे को रोका फिर किसी न बढकर मुनादीवाले के मुह पर थप्पड रसीद किया और उसे घसीटकर तागे पर से उतार लिया। फिर आनन फानन पुलिस आ गयी और झगडे की तह तक पहुँचन के लिए उस दुबले पतले युवक को हिरासत मे ले लिया और फिर हमार शहर म उसका

करने के लिए इण्टरवल की घण्टी बजते ही, गोरे सैनिक भागते हुए पेशाब घर की ओर लपकते थे। यहाँ भाटिया की जो गति हुई, उसे बयान करना आसान नहीं। इण्टरवल होते ही गोरों का रेला अन्दर आया। कुछेक ने अन्दर आने से पहले ही पतलून के बटन खोल लिये थे। सारा गोल चक्कर एक ही बारी में भर गया। अपने सामने सफेद कमीज और सफेद पतलून पहने काली गर्दनवाले एक हिन्दुस्तानी को खड़ा देखकर एक गोरे ने झट से उसे धक्का दिया और उसकी जगह स्वयं खड़ा हो गया।

'आइ बेग योर पार्डन!' भाटिया ने कहा और गोरे की ओर देखकर बत्तीसी निकालते हुए बड़ी शिष्टता से बायीं ओर वाले अगले पात्र के सामने जा खड़ा हुआ। गोरे फौजी बराबर अन्दर चले आ रहे थे और किसी को फुर्सत नहीं थी कि थोड़ा इन्तजार कर ले। एक और गोरे ने कोहनी से धकेलकर भाटिया को अपनी जगह से हटा दिया। भाटिया वह जगह छोड़कर तीसरी जगह लपककर जा खड़ा हुआ, जो उसी वक्त खाली हुई थी, पर वहाँ भी उसके साथ वैसा ही बर्ताव हुआ। अब तो भाटिया मजाक की चीज बन गया। गोरे जान-बूझकर उसे धक्के देने लगे—कभी बायें से, कभी दायें से। भाटिया की सिटटी पिटटी गुम हो गयी। भागने तक की उसमें हिम्मत नहीं रह गयी थी।

जब उसे होश आया, तो वह सिनेमाघर के पार्क के बीचोबीच खड़ा था, उसके हाथ में तर ब-तर रूमाल था जिससे वह अपने को बार-बार पोंछ रहा था। उसके मन की क्या दशा रही होगी, कौन-सी भावनाएँ उसके दिल को मथ रही होंगी—ग्लानि की आत्मग्लानि की, क्षोभ की, क्रोध की, मैं नहीं जानता!

हम लोगों को यह सारा किस्सा बाद में मालूम हुआ। उस वक्त हम लोग सिनेमाघर के अन्दर बैठे थे, और जब वह देर तक नहीं लौटा, तो मैं उसे बाहर देखने आया, लेकिन उस वक्त तक वह पार्क में जा चुका था।

जब मैं उसे ढूँढता हुआ उसके घर पहुँचा तो भाटिया अपने घर की छत पर खुले आसमान के नीचे खड़ा था। छत के बीचोबीच खड़ा वह धीमी गहरी आवाज में बुदबुदा रहा था "अहं ब्रह्मास्मि! आइ एम द डिवाइन फ्लेम! आइ एम द डिवाइन फ्लेम!" धीरे धीरे उसकी आवाज ऊँची

उठती जा रही थी, मुट्ठियां कस रही थीं और गर्दन और छाती धीरे धीरे सीधे होने लगे थे। "आइ एम द डिवाइन फ्लेम ! फार आइ एम द डिवाइन फ्लेम !"

उसने मुझे नहीं देखा। मेरे खड़े ही खड़े उसकी आवाज और ऊँची उठती गयी। जाहिर है, उसमें शक्ति का संचार हो रहा था। शायद मेरे पहुँचने के पहले ही उसकी चेतना में से उस शाम की घटना अपनी क्षुद्रता में सूखे पत्ते की तरह झरकर गिर चुकी थी और वह बत्र का अपमान, तिरस्कार, ग्लानि और क्षोभ के निम्नतम स्तर से ऊंचा उठ चुका था। और वह ऊपर उठता जा रहा था, और ऊँचा उठता जा रहा था।

अब सोचता हूँ तो शायद उसी समय, दो सड़कें पार कर, मेसी गेट के थाने में पुलिस के डण्डों की बौछार के नीचे अधमरा युवक 'भारत माता की जय !' 'महात्मा गांधी की जय !' बुदबुदा रहा था। और जब भाटिया की आत्मा ब्रह्माण्ड की बुलंदियां छू रही थी, जब वह आसपास की स्थूल दुनिया से ऊँचा उठ चुका था चाँद सितारों में से एक हो रहा था, लगभग उसी समय मुनादी करनेवाले पीले-दुबले युवक के मुंह से खून बहने लगा था और 'भारत माता की जय !' बुदबुदाते हुए वह थाने के फर्श पर लुढ़क गया था।

# राधा-अनुराधा

हवा मे गूजती हुई आवाज आयी

'रा धा !"

इतका मतलब है धोबी काम पर आ गया है और गली मे बैठकर इस्त्री गरम कर रहा है और उसकी बेटी राधा घरो मे झाडू बर्तन करने के लिए जाने लगी है। अब वह हर आध-पौन घण्टे के बाद अपनी इस्त्री के पास बठे बठे हाक लगायगा, जब तरह-चौदह बरस की राधा एक घर का काम निबटाकर दूसरे घर की ओर रवाना हो जायेगी। पिछले तीन चार रोज धोबी ने हाँक नही लगायी थी और राधा काम पर नही आयी थी। अकेला धोबी कपडे इस्त्री करता रहा था। धोबी की हाँक राधा को बुलाने के लिए इतनी नही होती, जितनी घरो मे रहनेवाले उन लोगो के लिए होती है, जिनके यहाँ राधा काम करती है। तरह-तरह के लोग मुहल्ले मे बसते है। आवाज पड जाय, तो उन्हे याद रहता है कि लडकी का बाप बाहर गली म खडा है।

'सीधी फाटक म से आ, राधा, खबरदार जो दीवार कूदकर आयी !"
श्यामा बीबी की आवाज है।

मगर राधा राधा नही अगर कोई काम सीधा कर जाये। उसे कभी किसी ने सीधा फाटक खोलकर अन्दर आते नही देखा। हमेशा आगन की दीवार फादकर आती है या पडोसवाला की दीवार पर चलती हुई आँगन मे छलाँग लगाती है।

'किसी दिन ऐसी गिरेगी कि होश ठिकाने आ जायेंगे।'

'नही गिरूँगी देखा तो बीबीजी कस चल रही हू। कुछ भी तो नही हो रहा देखो '

आर वह आगन की दीवार के ऊपर, अपना स तुलन बनाये हुए, एक फिल्मी गीत गुनगुनाती हुई बढती आ रही है, " मुझे बुडढा मिल गया !"

उतर नीचे !" श्यामा चिल्लायी, "किसी दिन गिरेगी, तो खोपडी फूट जायगी।"

'मैं भी तो यही चाहती हूँ बीबीजी, कि खोपडी फूट जाय।'

"खोपडी फोडना है, तो किसी दूसरे की दीवार म गिरकर फोडना, उतर नीचे '

'जाती हूँ, आती हू " और राधा ने छलाग लगा दी, 'आज टेलिविजन पर कौन सी फिल्म है, बीबीजी ?'

"फिल्म है तेरा सिर! पहले काम कर। अभी शाम बहुत दूर है।'

"आज टेलिविजन पर मेरा सिर दिखायेंगे ? है बीबीजी ?" और राधा हँस दी, "अगर मेरा सिर न हुआ तो ?"

"चल अन्दर, काम कर। काम के वक्त नही बोलते।"

'मैं बोल कहा रही हूँ बीबीजी, मैं तो हँस रही हूँ।" और राधा फिर हँसी से लोट पोट होने लगी।

रसोईघर के अन्दर बतन मलते हुए फिर गुनगुनाने लगी, " मुझे बुड्ढा मिल गया !"

"काम के वक्त चुपचाप काम किया कर।

"बीबीजी, और जो मन आये कह लो, मगर मुह बन्द करने के लिए नही कहो। यह तो मैं कर ही नही सकती।"

"पिछले तीन दिन काम पर क्यो नही आयी ?'

मैं कसे आती बीबीजी, मैं बीमार जो थी।"

'कौन बीमार था, झूठी कही की। ऐसे नही चलेगा राधा मैंने कह दिया। अगली बार नही आयी तो मैं दूसरा इन्तजाम कर लूगी।'

'अच्छा जरूर कर लेना और जब मैं लौटकर आऊँगी तो फिर से मुझे रख लेना।" और राधा हँसने लगी।

'चल, चल मुझे तेरी बातें अच्छी नही लगती।"

राधा का और घरा की मिस्टर श्यामा बीबी के घर म काम करना

पसन्द है। श्यामा बीबी बिगड़ती भी है बुरा भला भी कहती है मगर दिल की अच्छी है। उधर श्यामा बीबी को भी राधा पसन्द है काम चुस्ती से करती है, हँसमुख है, मुहल्ले भर की खबरें सुना जाती है और चारी चकोरी भी नहीं करती। पर है बातूनी सारा वक्त गप्पें हाँकती है, बात बबात पर बेवकूफों की तरह हँसती रहती है।

"चाय पियगी ?"

'पिला दो, बीबीजी।'

"साथ म रोटी भी दूँ ?"

'द दो, बीबीजी।' राधा ने कहा और फिर हस दी।

'क्यो, क्या फिर बाप ने पीट दिया था ?"

"पीटता तो रोज है। कल भी पीटा था, परसो भी पीटा था। आज भी पीटेगा, कल भी पीटेगा, परसो भी पीटेगा " और राधा अपनी ही मुहारनी पर खिल खिलाकर हँसने लगी।

राधा रोटी खा चुकी थी, लेकिन श्यामा को अभी भी उसकी आँखो मे भूख झाकती-सी नजर आयी।

"और रोटी दू ?"

'एक दे दो !"

"सुबह कुछ खाया था ?"

नही जी, कुछ नही खाया था। कल रात भी कुछ नही खाया था। तो क्या हुआ ? हम भूखे पेट सो जात हैं। हमे कुछ नही होता।'

'तुम तो सब लोग खाना साथ मे लेकर आती हो।'

"मगर बीबीजी, रोटियाँ ही खत्म हो गयी, तो मैं लाती कसे ?'

"क्या मतलब ?"

'मैंने पकायी तो थी। मैंन दो रोटियाँ पकायी वह भाई लेकर स्कूल चला गया। फिर तीन रोटियाँ पकायी, वह बाप लेकर काम पर चला आया। फिर दो रोटियाँ पकायी वह माँ न बाध ली। फिर आटा खतम !'

आटा और गूध लती !"

'मैं क्यो गूध लेती बीबीजी जब वे देते नही तो मैं क्यो माँगू ? वे

मुझे तुम्हारे घर भेजते ही इसलिए है बीबीजी, कि तुम खाने को देती हो। उन्हें खिलाना नही पडता।

'तू कैसी बातें करती है! माँ बाप के बारे म ऐसा नही बोलते। बाप, बाप होता है '

' और माँ, मा होती है, और भाई भाई होता है और राधा राधा होती है " और राधा खिलखिलाकर हँस दी।

"अच्छा, अब नही हँसूगी।" राधा ने झट से मुह म पल्ला ठूसते हुए कहा, फिर दूसरे ही क्षण पल्ला निकालकर बोली, ' बाप कसाई होता है माँ चुडैल होती है, और भाई गधा होता है।' और फिर हसने लगी।

'हत, ऐसा नही बोलते।" श्यामा बीबी ने फिर से कहा। और राधा ने फिर मुह मे कपडा ठूस लिया।

"अब उठ, काम कर।

'आज टलिविजन पर कौन सी फिल्म होगी बीबीजी ?"

"आज कोई फिलम विलम नही है। सीधी घर जाना।"

' आप बताती क्यो नही ? आज इतवार जो है, फिल्म तो होगी ही।'

"तू सीधी घर जाना।'

"देखो बीबीजी, जो फिल्म होगी, तो मैं देखकर जाऊँगी। घर जाती हूँ, तो सबके लिए खाना मुझे बनाना पडता है। इधर सात घरो का काम करती हूँ, उधर घर जाकर खाना भी बनाती हूँ। अगर फिल्म देखकर जाऊँगी, तो सिर्फ पिटाई होगी, खाना तो नही बनाना पडेगा ?"

'खाना मिलेगा भी तो नही ?" श्यामा ने राधा के ही अन्दाज म जोडा।

"तो क्या हुआ ? मैं भूखी सो जाऊँगी, मुझे कुछ नही होता।'

श्यामा चुप रही। वह जानती थी कि राधा टेलिविजन पर फिल्म देखे बिना घर नही जायेगी, भले ही बाप चमडी उधेड दे। दसियो फिल्मो के गाने उसे याद थे और दसियो फिल्मो की कहानिया। सारा वक्त गाने गुनगुनाती फिरती थी। अनेक फिल्मो के वार्तालाप उसे कण्ठस्थ थे।

आँखें बन्द करके लेट गयी। मैंने सोचा—सोये सोय मर जाऊँगी, पर बीबीजी, थोड़ी देर म मेरे पेट मे एसा दद उठा, मैं क्या बताऊँ, जोर स बल पडने लगा। मैंने झट से मुह म कपडा ठुस लिया। सभी लाग सो रहे थे। फिर जी, मुझे अन्दर ही-अन्दर जलन होन लगी जैसे पेट के अन्दर आग लग गयी है। तब मुझसे लेटा ही नही जाता था। मैं उठी और कोठरी म से भागकर बाहर आ गयी। मुझे लगा, जैसे कोई जोर-जोर से मेरा पेट काट रहा है, जसे अन्दर आग जल रही है। मैंने झट से मटके मे से पानी पी लिया। ढेर सा पानी। पर फिर भी जैसे पट जलता था। आपको क्या बताऊ जी चाहता था किसी ठण्डी जगह पर जाकर पड रहूँ। मुझसे बठा ही नही जाता था। फिर जी, मुझे जोर से मतली हुई और क आ गयी। पाँचो-की-पाचो गोलिया सबूती की सबूती बाहर आ गयी।' और राधा हँस दी, "इतनी मोटी मोटी गोलियाँ!"

"पागल कही की! चल, तुझे सबक मिल गया। अब जहर कभी नही खायगी।"

"चूहा को मारने के लिए तुम भी वही दवाई डालती हो ना, बीबीजी?"

"हा तो।"

"हाय अब वह दवाई नही डालना, वह बहुत बुरी है।"

"तेर बाप को मालूम है तूने जहर खाया था?"

"उसे कसे बताती बीबीजी। उसे बताती तो वह और पीट देता।'

'तू तो सचमुच बडी पागल है। कोई जहर भी खाता है। ऐसी भी क्या बात है। माँ बाप बुरे हैं तो तू सदा तो उनके साथ नही रहगी। दो-एक साल मे तेरा ब्याह हो जायेगा। तू अपने घर चली जायेगी। इनके साथ थोडे बैठी रहेगी।"

"हाय बीबीजी। ब्याह ही तो करने जा रहे थे इसी से तो मैंने जहर खाया था।"

'तूने तो कभी बताया ही नही कि तेरा ब्याह होनेवाला है। क्यो, क्या तुझे लडका पसन्द नहीं था, जो जहर खाया?"

"वह लडका कहा है, वह तो बूढा है। और बीबीजी, गूगा है, और दूर

खाओ, न खाओ। सोओ, नहीं सोओ, दर से जाओ, सवेरे जाओ, किसी बात से कोई फर्क नही पडता।

धूप तेज हो गयी थी और वह अभी एक ही घर स निपट पायी थी। गली के सिरे पर पेड के नीचे मद्रासी नौकर नौकरानियो का टोला बैठा था। उन्होने इस जगह को अपना अड्डा बना लिया था। जो कोई काम से निबटकर आता यही पर आकर बैठ जाता। उनके पास से गुजरते हुए राधा ऊँची आवाज मे बोली, "गुट गुटैया वाँ गुड्डुप्पू !" और आगे बढ गयी। तो टोले के सिरे पर बैठी चेलम्मा सिर हिलाकर मुस्करा दी।

"पागल है, पागल !"

राधा ने मुडकर फिर से कहा, "गुट गुटैया वाँ गुड्डुप्पू !' और हँसती हुई मोड काट गयी।

बगाली बाबू की सीढियाँ चढने से पहले राधा ठिठक गयी। आज देर बहुत हो गयी है। घरवाली काम पर निकल गयी होगी उसन सोचा। बगाली बाबू काम पर देर से जाता था। इस वक्त अकेला घर म बैठा होगा। यह भी मुसीबत है। मालकिन के रहते चौका बतन कर लो, तो सब काम सुभीते से हो जाता है।

बगाली बाबू उसे सीढियो पर ही खडा, तोद खुजलाता मिला। पान चबाता मुस्करा रहा था।

"आज देर कर दी राधा। हमने सोचा आज आयेगी भी या नही।'

"हमारा बीबी के घर देर हो गयी।"

आखें बन्द करके लेट गयी। मैंने साचा—साये सोय मर जाऊंगी, पर बीबीजी थोडी देर म मेरे पट म ऐसा दद उठा, मैं क्या बताऊँ, जोर से बल पडने लगा। मैंने झट से मुह म कपडा ठूस लिया। सभी लोग सो रहे थे। फिर जी, मुझे अ दर ही-अ दर जलन होने लगी, जैसे पट के अ दर आग लग गयी है। तब मुझसे लेटा ही नही जाता था। मैं उठी और कोठरी म से भागकर बाहर आ गयी। मुझे लगा, जैसे कोई जोर-जोर से मेरा पेट काट रहा है, जैसे अ दर आग जल रही है। मैंने झट से मटके म से पानी पी लिया। ढेर सा पानी। पर फिर भी जसे पट जलता था। आपको क्या बताऊ, जी चाहता था किसी ठण्डी जगह पर जाकर पड रहूँ। मुझमे बठा ही नही जाता था। फिर जी मुझे जोर से मतली हुई और क आ गयी। पाचो की-पाचो गोलिया सबूती की सबूती, बाहर आ गयी।" और राधा हँस दी, "इतनी मोटी मोटी गोलिया!"

"पागल कही की! चल, तुझे सबक मिल गया। अब जहर कभी नही खायगी।"

"चूहो को मारने के लिए तुम भी वही दवाई डालती हो ना, बीबीजी?"

"हा तो।"

'हाय, अब वह दवाई नही डालना, वह बहुत बुरी है।"

"तेरे बाप का मालूम है तूने जहर खाया था?"

"उसे कैसे बताती बीबीजी। उसे बताती तो वह और पीट देता।"

"तू ता सचमुच बडी पागल है। कोई जहर भी खाता है। ऐसी भी क्या बात है। मा बाप बुरे हैं, ता तू सदा तो उनके साथ नही रहेगी। दो-एक साल म तेरा ब्याह हो जायेगा। तू अपने घर चली जायेगी। इनके साथ थोडे बैठी रहगी।'

"हाय, बीबीजी। ब्याह ही तो करने जा रहे थे, इसी से तो मैंने जहर खाया था।"

'तूने तो कभी बताया ही नही कि तेरा ब्याह होनेवाला है। क्यो, क्या तुझे लडका पस द नही था, जो जहर खाया?"

"वह लडका कहा है, वह तो बूढा है। और बीबीजी, गूगा है, और दूर

गाँव मे रहता है।" श्यामा चुप रही। यह इन लोगो के बीच राज की कहानी है, कोई नयी बात थोडे ही है। फिर भी उस धोबी पर गुस्सा आया। छोटी मासूम सी लडकी को बूढे के हवाले कर रहा है।

'बात पक्की हो गयी, तो मुझे लगा अब कुछ नही हो सकता। अब ये लोग किसी दिन मेरी शादी कर देंगे। इसी से तो मैंने जहर खाया था। नही तो मैं जहर क्यो खाती ? पर मैं मरी ही नही।"

राधा अभी भी मजाक के लहजे म बात किय जा रही थी।

"उसे ऐसी क्या जरूरत आ पडी है, गूंगे-बूढे के साथ तेरा ब्याह करने की ?

"क्यो बीबीजी, जवान लडके के साथ मेरा ब्याह करेगा, तो उसे जेब से पसे देने पडेंगे बूढे के साथ करेगा तो उल्टे उसे पसे मिलेंगे। बस सीधी सी बात है। मुझे तो किसी ने बताया ही नही। पर मैंने सुन लिया। मैं रात को जब सो जाती हूँ, तो ये लोग खुसर पुसर करते है। मैं आखें भीच पडी रहती हूँ। इनकी सब बात सुन लेती हूँ। वह बूढा मेरठ के पास कही रहता है और मेरे बाप को पूरे सतरह सौ रुपये देगा। और दो सौ रुपये तो मेरा बाप उससे ले भी आया है।"

"क्या तेरे बाप की कमाई अच्छी नही है ?'

"अच्छी कहाँ है ! दो-अढाई रुपये रोज कमाता है।"

"बस ?

'बस।" राधा ने सिर हिलाकर कहा 'जब से कमेटीवाले इसका हथठेला उठाकर ले गये हैं, तब से इसका काम अच्छा नही है।'

यह बात तो श्यामा को भी याद है, क्योकि हथठेला उठ जाने पर धोबी उसके पास भी पैसे मांगने आया था। वे इसकी इस्त्री और हथठेला उठा ले गये थे और इस साठ रुपये की रकम भरने को कह गये थे। और यह भी वह भर नही पाया था।

देखो, बीबीजी, ये रुपयें जो इसे मिलेंगे ना इससे यह साल-दो साल अपना काम चलायेगा। इस बीच मेरा भाई बडा हो जायेगा और वह काम करने लगेगा।'

'और क्या सुना तुमने ?

"और क्या ! बाप मेरी मा से कह रहा था 'इसम सरम की बात क्या है ! जो वटी ने अच्छे करम किये हैं, तो वहा भी सुख भोगेगी। अच्छे करम नही किये हैं तो जैस हम दर दर भटक रहे हैं, वह भी भटका करेगी।' "

"यह बात तो ठीक है राधा। खाता पीता किसान है तो तुझे रखेगा तो आराम से। सात-सात घरो के बतन तो नही मलने पड़ेंगे।'

"हाय गाव मे कौन रहेगा बीबीजी। मैं ता एक दिन भी नही रहूँ रहूँगी तो शहर मे रहूँगी। वहाँ गाव मे तो मैं मर जाऊँगी। मैं तो शहर मे रहूँगी और आपके घर टेलिविजन देखने आया करूँगी।

'तेरी कमाई खाता है तो तुझे पीटता क्यो है ?"

'क्या जानू बीबीजी क्यो पीटता है ? मेरे भाई को रोज दूध पीने को देते हैं, मुझे खाना भी नही देते।

तभी नीचे से धोबी ने हाक लगायी, 'रा धा ! ! ! '

'आज बहुत देर हो गयी है बीबीजी, आज बाप बहुत बिगडेगा।'

इस पर श्यामा बीवी को गुस्सा आ गया, बिगडेगा तो मेरी बला से ! यह क्या तमाशा है, अभी अभी आयी और अभी से तेरा बाप नीचे से चिल्लाने लगा है। तीन-तीन दिन काम पर नही आती '

पर जब राधा चुपचाप किचन मे बतन मलने लगी तो श्यामा बीबी थोडी देर बाद कमरे मे से ही बोली, 'बतन मलकर चली जा। बाकी काम दोपहर को कर लेना।"

'मेरा और कही काम करने को जी नही चाहता बीबीजी। तुम मुझे दिन भर के काम के लिए रख लो। हैं, सच ? मगर आप सत्तर रुपये तो नही दोगी, ना। यह भी बात सच है। और मेरा बाप सत्तर स कम पर मानेगा भी नही यह भी बात सच है। यह भी बात सच है जी वह भी बात सच है " और फिर खिलखिलाकर हँस दी और चुनी से हाथ पोछती हुई सीढिया उतर गयी।

तेरह साल की उम्र म ही राधा न जिन्दगी का एक बहुमूल्य पाठ सीख लिया था—कोई फक नही पडता, किसी बात से कोई फक नही पडता।

खाओ, न खाओ। सोओ, नहीं सोआ, दर से जाओ, सवेरे जाओ, किसी बात स कोई फक नही पडता।

धूप तेज हो गयी थी और वह अभी एक ही घर से निपट पायी थी। गली के सिरे पर पेड के नीचे मद्रासी नौकर नौकरानियो का टोला बैठा था। उन्होन इस जगह को अपना अडडा बना लिया था। जो कोई काम स निवटकर आता, यही पर आकर वठ जाता। उनके पास से गुजरत हुए राधा ऊँची आवाज मे बोली, "गुट गुटया वाँ गुड्डुप्पू!' और आगे वढ गयी। तो टोले के सिरे पर बैठी चलम्मा सिर हिलाकर मुस्करा दी।

"पागल है, पागल!"

राधा ने मुडकर फिर से कहा, "गुट गुटैया वाँ गुड्डुप्पू!" और हँसती हुई माड काट गयी।

बगाली वाबू की सीढियाँ चढने से पहले राधा ठिठक गयी। आज देर बहुत हो गयी है। घरवाली काम पर निकल गयी हागी, उसन सोचा। बगाली बाबू काम पर देर से जाता था। इस वक्त अकेला घर म वठा हागा। यह भी मुसीबत है। मालकिन के रहत चौका बतन कर लो, तो सब काम सुभीते से हो जाता है।

बगाली बाबू उसे सीढियों पर ही खडा, ताद खुजलाता मिला। पान चबाता मुस्करा रहा था।

'आज देर कर दी राधा। हमने साचा आज आयेगी भी या नही।'

"श्यामा बीबी के घर दर हो गयी।"

उसने बगाली बाबू की बगल म से दबककर निकलत हुए कहा और सीधी रसोईघर म चली गयी। बगाली बाबू ने समझा, जानबूझकर देर से आयी है।

बगाली वाबू सब काम धीमी, सहज गति से करते थे। उनका विचार था कि इस धीमी, सहज गति के कारण ही राधा के दिल म उनके प्रति प्यार पक रहा है। वह उन लोगो से अलग हैं, जो नौकरानियो पर झपटते हैं, किचन म घुसे और दबोच लिया या दस का नोट दिखाया और बाँह मे भर लिया।

राधा थोडी दर तक गुनगुनाती काम करती रहा और बाबू के कान

उसी ओर लगे रहे।

"राधा !"

'जी !'

"इधर आकर यह मेज साफ कर दे।' राधा समझ गयी और सिर झटक दिया और झाड़न उठाकर बाबू के कमरे में चली गयी।

"कल तूने झाड़ू लगायी थी ?"

"लगायी तो थी।'

'देख कितनी मिट्टी है ! मेज पर देख।" और बंगाली बाबू ने हाथ की उँगली मेज पर चलायी और फिर सीधी करके राधा को दिखा दी। मेज पर सचमुच धूल थी।

"धूल बहुत उड़ती है इन दिनों।' राधा ने कहा और झाड़न से मेज पोंछने लगी।

बाबू को लड़की का सामीप्य अच्छा लगा। इसके बदन से, पसीने के कारण एक प्रकार की गन्ध आने लगी थी, जो अपने तीखेपन में भी यौवन की गन्ध लिये हुए थी।

'देख तो टेलिफोन को भी साफ नहीं किया। चोगा उठाकर तो देख। नीचे कितनी मिट्टी है। ठहर, तुझे मैं दिखाता हूँ।"

दूसरे क्षण बंगाली बाबू राधा के पीछे खड़े थे। फिर दोनों हाथ राधा के कन्धों पर रखकर बोले 'उठा तो चोगा। या नहीं यों ' और आगे बढ़कर उसके कन्धे के ऊपर से हाथ बढ़ाया जिससे उनका गाल राधा के गाल से छू रहा था और कन्धा राधा की पीठ से और बाबू ने चोगा उठाया।

राधा मन से थकी थकी थी बेचैन थी। उसका माथा तप रहा था। वह उपेक्षा से खड़ी रही। बाबू ने समझा, मुझे बढ़ावा दे रही है।

'अभी साफ कर देती हूँ, लाइए।' और झाड़न से राधा चोगा और टेलिफोन पोंछने लगी। बंगाली बाबू ने दोनों हाथ फिर उसके कन्धों पर रख दिये। उनकी साँस धौंकनी की तरह चलने लगी थी। पर बंगाली बाबू समझ रहा था कि इस उम्र में भी वह एक लड़की का दिल जीत रहा है। टेलिफोन साफ हो जाने पर बंगाली बाबू ने फिर से झुककर चोगा टेलिफोन

पर रख दिया और फिर से एक बार राधा के गाल के साथ अपना गाल सटा दिया। राधा बिना कुछ कह, नीचे सरक गयी।

*राधा के मन मे आया कह दे, 'मैं बीवीजी को बता दूगी।'* इससे बगाली बाबू पीछे हट जायेगा, मगर इससे उसकी नौकरी रहेगी ? उसने एक बार एक सरदारजी से ऐसे ही कह दिया था, दूसरे ही दिन घरवाली ने नौकरी छुडवा दी थी। पन्द्रह रुपय का घर हाथ से निकल गया था।

राधा सरककर किचन म जा चुकी थी तभी नीचे स उसके बाप की आवाज सुनायी दी, "रा धा ! ! !' और राधा सीढियो की ओर लपकी।

"अभी स जा रही है ? अभी तो तुमने बतन भी नही किये ?"

''दो वतन रह गये है दोपहर को आकर मल दूगी, जब बीवीजी आ जायेंगी। और वह सीढियो पर जा पहुँची। ऐस मौको पर बाप का आवाज लगाना उसे अच्छा लगता था। और सच तो यह था कि धोबी घर घर की टोह रखता था, आवाज लगाता ही इसीलिए था कि घर मालिक को भान हो जाये कि राधा का बाप नीचे खडा है।

*राधा का ब्याह कर देने के पीछे भी एक तरह स यही कारण था।* कोई-न-कोई मुहल्ले का आदमी या सम्बन्धी धोबी को आये दिन चेतावनी देता रहता था 'इसका काम छुडवा दे।"

"काम छुडवा दू तो खाऊ कहाँ से ? पूरे सत्तर रुपये कमाकर लाती है।'

"अगर किसी दिन इसे पेट हो गया तो ? तो क्या करेगा ?"

"तो क्या करूँ ?"

"इसके हाथ रगके इसे चलता कर। जस भी हो इसे चलता कर। देखता नही जमाना किधर जा रहा है !"

"पसे कहाँ से लाऊँ ?'

"इसकी भी कोई-न कोई तरकीब निकल आयेगी।"

*ओर तरकीब सचमुच निकल आयी थी।*

बगाली बाबू के घर से निकलकर राधा सि धी व्यापारिया के घर की ओर चल दी। उम घर मे इस वक्त जान मे कोइ जोखिम नही था। यहा बगाली बाबू के हाथ से निकल भागना मुश्किल नही था, पर वहा दयाराम रसोइया पकड लेता था और उसके चगुल से निकल पाना बहुत कठिन हो जाता था। सिन्धी व्यापारी, उसकी पत्नी और बटी खाना खा चुकने के बाद एयर कडीशनरवाले कमरे म सोने के लिए चले जाते थे और दोपहर-भर वही पडे रहते थे एक बार भी बाहर नही निकलत थे और उन तक बाहर की आवाज भी नही पहुच पाती थी। इसीलिए सि धी व्यापारी के घर दोपहर के भोजन से पहले पहुँचना जरूरी था। वैसे ही जसे बगाली बाबू के घर सुवह के नाश्ते से पहले।

सि धी व्यापारी के घर स निबट चुकन के बाद उसे 'माजी के घर जाना था जहा बूढी विधवा अपनी बेटी के साथ रहती थी फिर वहा से डाक्टर साहब के घर और फिर दोपहर के खाने के बाद दोबारा दिन के बतन साफ करने के लिए इन्ही लोगो के घर फिर मे जाना होता था। ढलती दोपहर तक यह चक्कर रहता था।

उम दिन शाम को राधा श्यामा बीबी के घर टेलिविजन देखने नही गयी। श्यामा बीबी ने कोई विशेष ध्यान नही दिया। दूसरे दिन राधा काम पर भी नही आयी। श्यामा बीबी को खीभ उठी और उमने धोबी स पूछा, तो धोबी ने टालने के-से स्वर म कहा, अभी आती होगी, यही कही होगी।' जब दोपहर तक नही आयी, तो धोबी ने कहा, "मैं क्या जानू बीबीजी, घर से तो चली आयी थी। न जाने किधर बठ गयी। मैं देखता हूँ। मिल गयी तो भेजता हूँ।' पर दोपहर ढल गयी, राधा नही आयी। धोबी जरूर कुछ छिपा रहा है, वरना अगर राधा आयी होती, तो बार बार उसका नाम लेकर पुकारता। पुकार नही रहा है तो इसका मतलब है वह काम पर नही आयी। श्यामा बीबी बडबडायी, लेकिन फिर जम-तम अपना काम निभा लिया।

राधा दूसरे दिन भी नही आयी। और दूसरे दिन धोबी स्वय भी नही आया। श्यामा बीबी का माथा ठनका। कही कोई जरूर भेद की बात है।

हो न हो, यह राधा का ब्याह कर रहा है। राधा शायद ठीक ही कह रही थी कि किसी गूंगे बूढ़े के साथ उसका ब्याह पक्का हो गया है। मगर क्या मालूम कोई और ही बात हो। जब तीसरे दिन, और चौथे दिन, और फिर पाचवें दिन भी धोबी नही आया और राधा भी कही नजर नही आयी, तो श्यामा बीबी ने घर की सफाई और बतना के लिए एक मद्रासी औरत को रख लिया। दो एक बार श्यामा बीबी को खयाल आया, कही कोई और बात न हो, कही उसने फिर जहर न खा लिया हो, पर धीरे धीरे उसका ध्यान राधा पर से हटने लगा।

फिर एक दिन धोबी काम पर आ गया। गली म बठा इस्त्री सुलगा रहा था, जब श्यामा बीबी ने उसे देखा। श्यामा बीबी सीधी उसके पास चली आयी।

"कहो धोबी, राधा का ब्याह कर आये?"

'क्या बीबीजी, किसका ब्याह?'

श्यामा बीबी झिझक गयी। कुछ फीकी सी भी पड गयी कि बिना कुछ जाने समझे बात कर दी।

"राधा कहाँ है? कितने दिन स काम पर नही आयी?'

इस पर धोबी बोला, दो चार दिन म काम पर आने लगगी बीबीजी।'

और धाबी इस्त्री सुलगाने म जुट गया।

"ठीक ठीक बताओ धोबी, आयेगी या नही? उसे नही आना हो, तो मैं कोई दूसरा इन्तजाम कर लू।"

"आयेगी आयगी'

'कब आयगी?'

इस पर धोबी फट पडा, 'अब बीबीजी मैं उसके दिल की क्या जानू। हरामजादी कुछ बताया नही कहा नही, कही निकल गयी है। जानू तो बहन के पास मथुरा गयी है। जानू तो यही लक्ष्मीबाई नगर म गयी है जहाँ उसकी दूसरी बहन रहती है। कुछ बतनाकर तो गयी नही, जब आयगी तो मैं भेज दूगा।

श्यामा बीबी चली आयी। जरूर कही कोई गडबड हागी। य लडकियाँ बातें करने मे बडी सीधी होती हैं लेकिन घाट घाट का पानी पिये होती

हैं, क्या मालूम क्या करतूत कर बैठी है।

फिर एक दिन शाम के वक्त श्यामा बीबी, हाथ म बुनाई का काम लिये टेलिविजन के सामने बठी ही थी कि क्या देखती है कि दरवाजे के बीचो बीच राधा खडी है।

"अरी, तू कहाँ से आ गयी ?" श्यामा बीबी ने हैरान होकर कहा, फिर राधा को सिर से पर तक देखकर हँसने लगी। "अरी वाह तू कैसी बन ठनकर आयी है !"

"मेरी शादी जो हो गयी है बीबीजी।"

"शादी हो गयी है ? किसके साथ ? गूगे के साथ ?"

"नही तो।" और राधा मुस्कराने लगी।

"तेरे माँ बाप को मालूम है ?"

' उन्ह कैसे मालूम होगा, उन्हें कुछ भी मालूम नही।"

इस पर श्यामा डर सी गयी और झट से उठकर सीढियोवाला दरवाजा बन्द कर दिया। "छिपकर आयी है ? पगली, तू किसी दिन खुद भी मरेगी और मुझ भी परेशान करेगी। तेरा बाप बाहर गली में बठा है। उसने तुझे देख लिया तो ?'

"वह कैसे देखेगा ? मैं तो उसके पास से निकलकर आयी हूँ।'

"तुम्हे किसी ने नही देखा ?"

' किसी ने नही देखा, सच, बीबीजी।" राधा ने चहककर कहा।

श्यामा बीबी की नजर उसके कानो मे पडे सस्ते झूमरो पर गयी भडकीली साडी पर गयी।

"यह साडी कहा से मिली ?

उन्होन दी है।' राधा ठहाका मारकर हँसने लगी।

' बडी आयी सुहागिन ! उन्हो उन्हो करने लगी है। कब शादी की थी ?"

राधा सचमुच दुल्हनो की तरह सकुचा गयी। उसकी आखें पहले ही की भाति बन्द बन्द बोझिल बोझिल सी थी माथा तपा हुआ जैसे

रहता था।

"बडी सुदर लग रही है राधा, सच।"

"मैं तो सुन्दर हूँ ही नही, मैं बस सु॒॒र लग सकती हूँ ?"

"नही, बडी अच्छी लग रही है।"

"अच्छी कहो ना, सुदर तो न कहो।"

श्यामा बीबी उठकर गयी और तश्तरी म थोडी-सी चीनी डालकर ले आयी।

"ल मुह मीठा कर। मेरे घर म ब्याह करके आयी है।'

राधा हँस दी और चुटकी भरकर चीनी मुह मे डाल ली। पर उसी से न जाने कैस, श्यामा बीबी ने भाँप लिया कि राधा भूखी है।

"कुछ खायेगी ?"

"नही बीबीजी, मैं कुछ नही खाऊँगी। मुझे भूख नही है।"

इससे श्यामा बीबी का सशय और भी पक्का हो गया। वह उठकर गयी और दो तीन स्लाइस और थोडा सा अचार उठा लायी। राधा न उन्ह हाथ मे लिया और देखते देखते ही हडप कर गयी।

"किससे ब्याह हुआ तेरा ?'

"इधर, पीछे थोडी दूर लडको का होस्टर है ना, उसमे काम करते हैं।"

श्यामा फिर हँस दी और उसके चेहरे की ओर दखती रही।

'वहाँ होस्टर म औरतो को नही रहने देते।' वह अपन ब्याह की कहानी सुनाने के लिए बेताब थी पता है बीबीजी, मैं कसे भागी थी ?'

"तू घर से भाग गयी थी ?"

'मैं आप ही के घर से तो भागी थी।" राधा फिर से चहकने लगी 'वे पहले से साइकिल लिये आप ही के घर के बाहर खडे थे। बस, मैं चुपके से उनके पीछे बैठ गयी और वे सीधा मुझे होस्टर मे ले गये।

'तेरा बाप कहा पर था ?"

"वह तो पिछली गली मे था। मैं तो सामनेवाली गली मे से निकल गयी थी। उसे कसे पता चलता ?

वहाँ कहा पर रहती है ? तेरे आदमी को क्वाटर मिला है ?'

छिपकर ही तो वहा रहती हूँ।' राधा ने चहककर कहा, जस कोई

फिल्मी कहानी सुना रही हो "होस्टर के पास जब हम पहुचे, तो मैं साइकल पर से कूदकर एक पेड के पीछे दबक्कर खडी हो गयी। व साइकल लेकर सीधे अन्दर चले गये। फिर वे लौटकर आये और पिछवाडे की तरफ स अन्दर जान का रास्ता बता दिया। पिछला दरवाजा व पहले से खोलकर आये थे बस।' और राधा गुढक गुढक्कर हँसने लगी, वहाँ पर भी किसी को मालूम नही हुआ।" राधा कहती गयी, "पता कसे चलता ? मैं दिन भर वहा छिपी जो रहती हूँ पता है बीबीजी बूढा चौकीदार रात को वहाँ चक्कर लगाने आता है। दस बजे, बत्ती बुझान से पहले राउण्ड लगाता है। और एक एक कमरे मे भाक भाकक्कर देखता है। मगर उसे कुछ नजर नही आता। मैं दबक्कर एक कोन मे बठी रहती हूँ।'

"किसी दिन पकडी जायगी, पगली।

"पकडी जाऊँगी तो पकडी जाऊँगी।" राधा ने सदा की तरह हाथ चमकाकर कहा।

"दिन को क्या करती है ? वह तो काम पर चला जाता होगा।'

"बस, छिपी बठी रहती हूँ, कमरे मे। बोलती भी नही।'

"शादी कब की ?'

"पाँच छह दिन हुए।'

"तू उसे पहले से जानती थी ?'

"हा, इधर ही काम करते थ। मेरे बाप से कपडे इस्त्री करवाने भी आते थे।"

श्यामा मुस्करा दी। "कहा शादी करवायी थी ?"

"मन्दिर मे।' फिर अपने आप ही बोली, 'होस्टर के पीछे मन्दर है ना वहा करवायी थी।' फिर श्यामा को अपनी आर सशय की नजर से देखत पाकर बाली, "हमारी कोठरी के पीछे जो बरामदा है ना बीबीजी, वहा आले मे भगवानजी की मूर्ति रखी है। उसी के सामने हम दोनो खडे हो गये और ब्याह करवा लिया।"

पण्डित कोई नही था ?"

"पण्डित किसलिए बीबीजी ? हम दोनो ने मूर्ति के सामने हाथ जोडकर ब्याह करवा लिया। 'अनुराधा' फिल्म मे भी तो ऐस ही हुआ था

आपको याद नही ? टेलिविजन पर आप ही के घर मे तो देखी थी। बस, वैस ही हमने भी ब्याह करवा लिया।"

'तू पागल ही रहेगी। एसे भी काई ब्याह होता है ?" श्यामा बीबी ने कहा और उसकी ओर दखती रह गयी। "रोज न्नि भर वहां छिपी रहा करेगी ?'

"पहले दो दिन तो कुछ नहा हुआ। मगर कल मैं बहुत थक गयी थी। मुझे ता भूल ही गया था कि दिन कौन सा है। आज सुबह जब उन्होंने बताया कि इतवार है, तो मैंन कहा, आज तो मैं बीबीजी के घर जरूर जाऊँगी। फिल्म देखूगी। आज कौन सी फिल्म है, बीबीजी ?"

श्यामा का कहते न बना कि कौन सी फिल्म है, "किसी ने तुम्हें देख लिया होता तो ?"

' देख कस लेता बीबीजी, मैंने घूघट जो काढ रखा था। मैं तो बाप के पास से निकलकर आयी हूँ। मैंने घूघट काढ लिया और दीवार के साथ साथ चली आयी। ऐसे कपडो म उसने मुझे कभी देखा ही नहीं।'

"तरे बाप का पता चल गया तो ?'

'अभी तक उसे कुछ भी मालूम नहीं।' राधा चहककर बाली 'पता है, बीबीजी वह जा मेरा घरवाला है ना, वह रोज दो कपडे इस्त्री करवान के लिए मेरे बाप के पास ले आता है। और बातो बातो म सब कुछ पूछ लेता है।' राधा गुढककर हँसी।

'क्या पूछ लेता है ?"

'कि बाप ने पुलिस म खबर दी है या नही, कि मेरी खोज कर रहा है या नही। पुलिस को अभी तक खबर नही दी है। यह अच्छी बात है न, बीबीजी ?'

तू रहेगी कहां ? यह ब्याह ता कोई ब्याह न हुआ।'

"ननीताल के पास इनके मा-बाप रहत हैं। ये वहा जायेंगे।'

"तुझ भी साथ लेकर जायेगा ?'

'हां।

"अगर इसके मा बाप ने नही माना तो ? '

'ता क्या बीबीजी, मैं लौट आऊँगी।

"उस छोड देगी ?"

"मैं क्या छाडूगी । पर अगर व छोडेगे, तो मैं चली आऊगी ।'

"तेरी जात का है ?"

' नही, हमारी जात के नही । वे गढवाली है ।'

"पगली तुम्हे ऐसी शादी करवान की क्या जरूरत थी ? वह तुम्हे छोड गया तो ?'

"वे ऐसे नही हैं, वे बहुत अच्छे हैं ।" श्यामा हँस दी ।

"व तो बहुत अच्छे हैं, पर सभी तो अच्छे नही होते ।'

इस पर राधा सिर झटककर बोली, "छोड दिया तो छोड दिया । फिर क्या हुआ ? मैं फिर से कही बतन पाछा करने लगूगी ।

"इस वक्त वह कहा पर है ? '

"वे दस बजे मुझे लेने आयेंगे ।'

'कहा लेने आयेंगे ?' श्यामा ने हँसकर 'आयेंगे' पर बल देते हुए पूछा ।

'आप ही के घर की सीढियो पर मैं बैठी मिलूगी । व साइकिल पर आयेंगे और मैं झट से साइकिल पर उनके पीछे बठ जाऊँगी ।'

पर श्यामा को यह सुझाव पसन्द नही आया । यह मामला गडबड है और जोखिम का काम है । किसी को पता चल गया, तो दस आदमी यहा पहुँच जायेंगे । आजकल किसी का कोई एतबार नही । भागी हुई लडकी । बाप बाहर गली मे बठा है । मैं क्या जानू कौन है कौन नही है । ज्यो ज्यो श्यामा सोचती जाती उसकी घबराहट बढती जाती, उसका डर बढता जाता कि उसके लिए कोई पचडा खडा न हो जाये । और राधा उसकी नजरो म दूर होती जा रही थी, यहा तक कि वह उस अजनबी लगने लगी थी ।

अपनी आवाज को सयत करते हुए श्यामा बोली, "यह ठीक नही है, राधा । तू यहाँ से चली जा । जब तेरा ब्याह पक्का हो जाये तो जरूर आ जाया करना । घर तेरा ही है । पर इधर कोई सीढिया चढकर ऊपर आ जाय, तुझे बठा देख ले और नीचे जाकर धोबी को बता दे बखेडा खडा हो जायगा । ठीक है ना ? तू अब जा और जब तक तेरा ब्याह पक्का

नही हो जाये और तेरे मा बाप को खबर नही हो जाये, मेरे घर नही आना "

' पर मैं ता फिल्म देखन आयी हूँ।"

*"नही राधा तू जा।"*

' पर फिल्म देखे बगैर मैं कसे जा सकती हूँ ? मैं तो वहा से फिल्म दखने के लिए ही आयी हूँ।' राधा बच्चा की तरह जिद करन लगी।

*पर श्यामा की आवाज मे तीखापन आ गया,* ' नही नही, कोई फिल्म विल्म नही। तू जा यहाँ से।"

"पर बीबीजी, वे तो दस वजे आयेंगे। मैं दस बजे तक क्या करूँगी ?"

"नही, नही, तू जा बस यही ठीक है।" श्यामा ने अधिक घबडाकर कहा, वह जैसे तैसे उसे घर से चलता करना चाहती थी।

राधा ठिठक गयी। श्यामा की ओर देखा और फली आँखो से देर तक देखती रही। फिर उठ खडी हुई, "अच्छा बीबीजी मैं जाऊँगी।'

"मगर जायेगी कैसे ? बेशक रात हो जाने दे, फिर चली जाना।'

"ओह नहीं बीबीजी, मुझे कुछ नही होगा। राधा कुछ देर तक ठिठकी खडी रही, फिर उठ खडी हुई और जिन कदमो ऊपर आयी थी, उन्ही कदमो नीचे उतर गयी।

श्यामा न लपककर बाहर खिडकी म से देखा। राधा ने घूघट काढ लिया था और धीरे धीरे चलती हुई ऐन धोबी के पास से होती हुई आगे बढ गयी और फिर बायें हाथ का मोड काटकर आखो से ओझल हो गयी।

श्यामा बीबी कुर्सी पर आ बैठी और थोडी ही देर बाद स्वभावानुसार द्विविधा मे डोलन लगी। क्यो न उसे बठा रहने दिया ? यहा उसे कौन देखने आता ? बाहर अभी अँधेरा भी नहीं हुआ। पर फिर सिर हिलाकर बोली "नही नही, ठीक ही हुआ जो चली गयी। कोई बखेडा उठ खडा होता तो ? यह बात छिपी थोडी रहगी ? '

# त्रास

एक्सिडेंट पलक मारते हो गया। और ऐक्सिडेंट की जमीन भी पलक मारते तैयार हुई। पर मैं गलत कह रहा हूँ। उसकी जमीन मेरे मन मे वर्षो से तयार हो रही थी। हा, जो कुछ हुआ वह जरूर पलक मारते हो गया।

दिल्ली मे प्रत्येक मोटर चलाने वाला आदमी साइकिल चलानेवालो स नफरत करता है। दिल्ली के हर आदमी के मस्तिष्क म घणा पलती रहती है और एक-न एक दिन किसी-न किसी रूप मे फट पडती है। दिल्ली की सडको पर सारे वक्त घणा का व्यापार चलता रहता है। बसो म धक्के खाकर चढनेवाले, भाग भागकर सडकें लाघनेवाले, भोपू बजाती मोटरा मे सफर करनेवाले सभी किसी न किसी पर चिल्लाते, गालिया बकते, मुड मुडकर एक दूसरे को दात दिखाते जाते हैं। घणा एक धुन्ध की तरह सडको पर तरती रहती है।

पिछले जमाने की घणा कितनी सरल हुआ करती थी, लगभग प्यार जसी सरल। क्योकि वह घणा किसी व्यक्ति विशेष के प्रति हुआ करती थी। पर अनजान लोगो के प्रति यह अमूत घृणा, मस्तिष्क से जो निकल निकलकर सारा वक्त वातावरण में अपना जहर घोलती रहती है।

वह साइकिल पर था और मैं मोटर चला रहा था। न जाने वह आदमी कौन था। मोटर के सामने आया तो मेरे लिए उसका कोई अस्तित्व बना, वरना असख्य लोगो की भीड म खोया रहता जिम पर मेरी तैरती नजर घूमती रहती है। दुघटना के ऐन पहले उसने सहसा मुडकर मेरी ओर देखा और क्षणभर के लिए हमारी आँखें मिली थी। उसकी गँदली-सी आँखो म अपने को सहसा विकट स्थिति मे पाने की उद्भ्रान्ति थी, सहमा वे आँखें फल गयी थी। न जाने उसे मेरी आँखो मे क्या नजर आया था।

ऐन दुघटना के क्षण तक पहुँचत पहुँचत मरा मस्तिष्क धुधला जाता है, मरी चेतना दायें पर के पजे पर आकर लडखडा जाती है और सारा दृश्य किसी टूटत घर की तरह असम्बद्ध हो उठता है यानि मैंन उस क्षण अपन दायें पैर के पजे के एक्सलरेटर को जानबूझकर दबा दिया था। ब्रेक को दबाने की बजाय, एक्सलरेटर को दबा दिया था, मोटर की रफ्तार धीमी करन की बजाय मैंन उसे और तेज कर दिया था। मैंन एक्सलरेटर को ही नही दबाया, उसके पीछे गाडी को तनिक मोडा भी, जब वह मेरे सामने से रास्ता काटकर लगभग आधी सडक लाँघ चुका था। तभी उसने घबराकर मेरी आर देखा था। फिर पटाक का शब्द हुआ था, और काई चीज उछली थी जैसे चील झपट्टा मारती है।

जब पहली बार मेरी नजर उस पर गयी तो वह मेरे आगे सडक के किनारे किनारे बायें हाथ बढता जा रहा था। तब भी मेरे मन मे उसके प्रति घणा उठी थी। वह थुल थुल-सा ठिगने कद का आदमी जान पडा था, क्योंकि उसके पर मुश्किल म साइकिल के पैडलो तक पहुँच पा रहे थे। टखनो के ऊपर लगभग घुटनो तक उठ हुए उसके पाजामे को देखकर ही मेर दिल म नफरत उठी थी या उसकी काली गदन को देखकर। अभी वह दूर था और आसपास चलती गाडियो की ही भाति मेरे दृष्टि क्षेत्र मे आ गया था। फिर वह सहसा अपना दाया हाथ झुला झुलाकर मुडने का इशारा करते हुए सडक के बीचोबीच आने लगा था। हाथ झुला झुलाकर वह जसे मुझे ललकार रहा था। तभी मेरे अन्दर चिंगारी सी फूटी थी। अब भी याद आता है तो सबसे पहले उसका घुटनो तक चढा हुआ पाजामा और काली गदन आखो के सामने आ जाते है। वह आदमी दफ्तर का बाबू भी हो सकता था, किसी स्कूल का अध्यापक भी हो सकता था छोटा मोटा दुकानदार भी हो सकता था। सुअर का पिल्ला, देखू तो कैसे मोड काट जाता है। यह भी कोई तरीका है सडक पार करने का ? उसी लमहे भर में मैंन ऐक्सलरेटर को दबा दिया था और मोटर को तनिक मोड दिया था। तभी उसने हडबडाकर पीछे की ओर देखा था ।

वह क्षण तप्ति का क्षण था, विप भरे सन्तोप का। सुअरका बच्चा, अब आये तो मेरे सामन। लेकिन 'खटाक' शब्द के साथ ही एक हडबडाती आवाज भी उठी, और एक पुज-सा जमीन पर गिरता आँखो के सामने कौंध गया, कुछ वैसे ही जैस कोई चील झपटटा मारकर पास स निकल गयी हो।

पर इस क्षण को लोप होते देर नही लगी और मेरा मन लडखडा सा गया। यह मैं क्या कर बैठा हूँ ? किसी बात को चाहना एक बात है और सचमुच कर डालना बिल्कुल दूसरी बात। कही कोई चीज टूटी थी। मेरे मन की स्थिति वैसी ही हो रही थी जसे कोई आदमी बडे आग्रह स किसी घर के अन्दर घुस, पर कदम रखते ही घर की दीवारें और छत और खिड कियाँ ढह ढहकर उसके आस-पास गिरने लगें। यह मैं क्या कर बठा हूँ ? चलते चलाते मैंने बखेडा मोल ले लिया है।

मैंने ऐक्सलरेटर को फिर से दबा दिया। हडबडाते मस्तिष्क म से आवाज आयी निकल चलो यहा स, पीछे मुडकर नही देखो और निकल जाओ यहा से।

पर मेरा अवचेतन ज्यादा सचेत था। उसका सन्तुलन अभी नही टूटा था। वर्षों पहले किसी ने कहा था कि ऐक्सिडेंट के बाद भागने से जोखम बढता है, बखेड उठ खडे होते हैं। मरा पर ऐक्सलरेटर पर स हट गया, टाँगो म कम्पन हुआ और मोटर की रफ्तार धीमी पड गयी। फिर वह अपन आप ही जैस बायें हाथ की पटरी के साथ लगकर खडी हो गयी। मोटर की गति थमने की देर थी कि मेरी टाँगो मे पानी भर गया और सारे बदन पर ठण्डा पसीना-सा आता महसूस हुआ। यह मैं क्या कर बठा हूँ। यह अनुभव तो दिल्ली में सभी के साथ गाहे बगाहे होता है घणा के आवश मे कुछ कर बैठो और फिर कापने लगो।

सडक पर शाम के हल्के हल्के साये उतर आय थे, वह समय जब अधेरे के साथ-साथ झीना सा परायापन सडको पर उतर आता है जब चारो ओर हल्की हल्की धूल सी उडती जान पडती और आदमी अकेला और खिन्न

और नि सहाय सा महसूस करने लगता है। सडक पर आमद रफ्त कम हो चुकी थी। बत्तियाँ अभी नही जली थी। मैं मोटर का दरवाजा खालकर नीचे उतर आया। दो एक मोटरें उसी दिशा स आती हुई धीमी हुइ। सडक के पार पटरी पर कोई औरत चलते चलते रुक गयी थी और सडक की ओर देखे जा रही थी। उसका हाथ थामे उसके साथ एक बच्चा था।

मैंने उतरते ही सबसे पहले आगे बढकर मोटर का बोनट देखा, बत्तिया देखी, पहलू को ऊपर से नीचे तक देखा कि कही कोई 'चिब' तो नही पडा या खरोच तो नही आयी, या कही रग उधडा हो। नही, कही कुछ टेढा नही हुआ था, मोटर को कही जब नही आयी थी। फिर मैं तेवर चढाये पीछे की ओर घूम गया, जहाँ सडक के बीचोबीच वह आदमी गठरी सा बना पडा था और उसकी साइकिल उसके ऊपर गिरी पडी थी। साइकिल का पिछला पहिया टेढा होकर अभी भी घूम जा रहा था।

बचाव का एक ही साधन है, हमला। फटकार स बात शुरू करो। अपनी घबराहट जाहिर करोगे तो मामला बिगड जायेगा, लेन-के-देने पड जायेंगे।

"यह क्या तरीका है साइकिल चलाने का ? चलते चलते मुड जाते हो ? अगर मर जाते तो क्या हाता ? "

मेरी आवाज ने और मेरे तक ने ही मुझे आश्वस्त कर दिया कि गलती उसी की थी, मेरी नही।

"इधर हाथ देते हो, उधर मुड जाते हो।"

न हूँ, न हाँ। धूप मे झुलसा चौडा सा चेहरा और उडते खिचडी बाल। उसके लिए उठ बैठना कठिन हो रहा था। शायद जानबूझकर हिल डुल नही रहा था। मेरे अवचेतन ने फिर मुझे उसकी ओर धकेला, इसकी बाह थामकर इसे उठा दा। स्थिति सँभालने का यही तरीका है। मैंने आगे बढकर साइकिल को उस पर से हटाया और उस काले-कलूटे को गदन के नीचे हाथ देकर बैठा दिया। उसने फटी फटी आँखा से मेरी ओर देखा। उसकी नजर मे अब भी पहले सी भ्रान्ति और त्रास था और वह बेसुध हो रहा था। भूचाल के बाद जसे काई आँखें खोले और समझने की कोशिश करे कि कहाँ पर पटक दिया गया है। खून की बूदें उसके खिचडी

वालों मे कही से निकल निकलकर उसके कोट के कालर पर गिर रही थी।

सडक पार की ओर स किसी के चिल्लाने की आवाज आयी

"ऐसा तेज चलाते है जसे सडक इनके बाप की है। आदमी को मार ही डालेंगे "

पटरी पर घाघरेवाली बागडन औरत अपनी बच्ची का हाथ थामे खडी चिल्ला रही थी। उसने ऐक्सिडेंट को हात दखा था। ऐसे आदमी बहुत कम होते हैं जिन्होने ऐक्सिडेंट को होते देखा हो और वे अपनी गवाही चिल्ला चिल्लाकर देना चाहते हैं।

मामला बिगड रहा है, बखेडा खडा हो जायेगा। मेरे सँभाले नही सभलेगा।

मेरे दायें हाथ की पटरी पर एक आदमी ठिठककर खडा हो गया। किंकर्तव्यविमूढ, मैंने घूमकर देखा। कोई वयोवद्ध था, सूट बूट पहने, छडी डुलाता पटरी पर ठिठका खडा था। मेरे देखने पर पटरी पर से उतर आया।

"सभी ऐक्सिडेंट साइकिलोवाले करते हैं वह । इन्हे बडी सडको पर आने की इजाजत ही नही होनी चाहिए, बात ।"

अँगरेजो के जमाने की गाली दे रहा था। तौर तरीके से भी अँगरेजो के जमाने का रिटायड अफसर जान पडता था। कोट नकटाई लगाये, हाथ मे छडी लिये, घूमने निकला था। अपनी-अपनी तौफीक के मुताबिक अपने अपने हमदद सभी को जुट जाते हैं। मेरा हौसला बढ गया।

"मैंने मोटर रोक ली तो बच गया नही तो इसका भुर्ता बन गया होता।"

मैंने ऊँची आवाज मे कहा और मेरे जिस्म म आत्मविश्वास की हल्की-सी लहर दौड गयी। उसी क्षण मुझे जगतराम सुपरिटेंडेंट का भी ख्याल आया। मेरे भाई का साढू है पुलिस का अफसर है। मामला बिगड गया तो उसे टेलीफोन भी कर देने की जरूरत है। अपने आप स्थिति को सँभाल लेगा।

मैं वहां से चलने को हुआ। मैंने दोनो हाथ पतलून की जेबो मे डाल लिये और मेरी टागो मे स्थिरता आ गयी।

सूट बूटवाला बुजुग मेरे पास आ गया था और फुसफुसाकर कह रहा था।

"इसे अस्पताल मे छोड आओ। जैसे भी हो यहा से हटा ले जाओ। पुलिस आ गयी तो बखेडा उठ खडा होगा। वहाँ पर दो चार रुपये देकर मामला निबटा लेना ।"

पुलिस के नाम पर फिर मेरी आँखो के सामने जगतराम सुपरिटेंडेंट का चेहरा घूम गया। फिर से बदन मे आत्मविश्वास की लहर दौड गयी। मैंने आंख घुमाकर काले-कलूटे की ओर देखा। वह दोनो हाथो मे अपना सिर थामे वही का वही बैठा था। खून की बूदें रिसना बन्द हो गयी थी और कालर पर चौडा सा खून का पैबन्द लग गया था। कोई क्लर्क है शायद। कितने का आसामी होगा ? कितने पसे देने पर मान जायेगा ?

सडक पार से फिर से चिल्लाने की आवाज आयी

"हमारे सामने पीछे से टक्कर मारी है। हमने अपनी आँखो से देखा है ।"

औरत ने तीन राह जाते आदमी घेर लिये थे, और अब वे सडक के पार खडे मेरी ओर घूरे जा रहे थे।

"अगर पुलिस आ गयी तो मोटर को यही पर छोडकर जाना पडेगा। ख्वाहम ख्वाह का पचडा खडा हो जायेगा, बरखुरदार ।'

सूट-बूटवाले सज्जन बडी सधी हुई आवाज मे बडा सधा हुआ परामर्श दे रहे थे।

मैं फिर ऊँची आवाज मे सडक के पार खडे लोगो को सुनाने के लिए बोला

"जिस तरह तुम झट से मुड गये थे टक्कर होना लाजमी था। गनीमत जानो कि मैंने गाडी रोक ली वरना तुम्हारी हड्डी पसली नही बचती। अगर इसी तरह साइकिल चलाओगे तो किसी-न किसी दिन जान से हाथ धो बठोग ।"

मेरी आवाज म समाजसेवा की गूज आ गयी थी और मुझे इस बात

का विश्वास होने लगा था कि मैंने सचमुच इस आदमी को बचाया है। इसे गिराया नहीं। उस आदमी ने सिर ऊपर उठाया। उसकी आखो म अभी भी त्रास छाया था, लेकिन मुझे लगा जैसे उसकी आँखें मस्तिष्क म छिपे मेरे इरादो को देख रही हैं। त्रास के साथ साथ कुछ-कुछ कृतज्ञता का भाव भी झलक आया है।

'मेरी मानो, इस अस्पताल पहुँचा दो।' बुजुग न फिर से फुसफुसाकर कहा।

लेकिन मेरा कोई इरादा उसे अस्पताल पहुँचाने का नहीं था। मेरे भाई का हमजुल्फ जगतराम, सब मामला सँभाल लेगा। उसे टेलीफोन पर कहने की देर है।

थुल थुल के बालो म से खून रिसना बन्द हो गया था। अधेड उम्र बडी खतरनाक होती है बुरी तरह से घायल होने के लिए भी और दूसरो को परेशान करने के लिए भी।

मैंने फिर से हाथ पतलून की जेब मे डाला, जिसमे दो नोट रखे थे, एक पाच रुपये का, दूसरा दस रुपये का। ज्यो ज्यो मेरा डर कम होता जा रहा था उसी अनुपात मे मेरी दुविधा भी कम होती जा रही थी। दस रुपये देने की भी कोई जरूरत नहीं पाच रुपये बहुत हैं, यो यह किसी भी प्रकार की मदद का हकदार नहीं है, जिस तरह इसने झट से साइकिल को मोड दिया था एक्सिडेंट होना जरूरी था।

जेब मे से पाँच रुपये का नोट निकालने से पहले मैंने मुडकर देखा। सूट-बूटवाला बुजुग जा चुका था। दूर छडी झुलाता, लम्बे लम्बे सास लेता, आग बढ गया था। मुझे अकेला अपने हाल पर छोड गया था। मुझे धोखा दे गया था। मैं अकेला, दुश्मनो से घिरा महसूस करने लगा। दो छोटे छोटे लडके भी मेरी बगल मे आकर खडे हो गये थे, और उन्होंने थुल थुल को पहचान लिया जान पडता था।

'गोपाल के बापू हैं। हैं ना !'' एक ने दूसरे से सहमी सी आवाज म कहा। मगर वे दोनो दूर ही खडे रहे और थुल-थुल को देखते रहे कभी उसकी ओर देखते, कभी मेरी ओर।

मैं अभी पाच का नोट उँगलियो मे मसल ही रहा था कि पुलिस आ

गयी। कोई आदमी चिल्लाया "पुलिस। पुलिस आ गयी है।'

मैं चूक गया हू। उस वक्त निकल जाता तो निकल जाता। अब तो यह आदमी भी तेज हो जायगा। वावला मचायेगा, पुलिस को अपने जन्म दिखायगा। साइकिल का टेढा पहिया दिखायगा। भीड इकट्ठी कर लेगा। मुझे परेशान करेगा। पटरी पर वह बागडन औरत अभी भी खडी थी और उसकी बच्ची रोय जा रही थी।

आन दो पुलिस को, मन-ही मन कहा। जगतराम सुपरिटेंडेंट का नाम उनके आते ही कह देना होगा। वरना उन्होंने अगर चालान लिख दिया तो फिर उसे नही फाडेंग।

लोग नजदीक आने लग थे। घेरा सा बनने लगा था। और मैं कह रहा था, आन दो, जगतराम का नाम छटते ही सुना देना होगा, दर हो गयी और चालान लिख डाला गया तो व पुर्जा नही फाडेंगे।

पर दूसरे क्षण मैं लपककर थुल थुल के उपर झुक गया था और उस बाजू का सहारा दकर उठा रहा था।

"चलो, तुम्हें अस्पताल पहुँचा आऊँ। उठो, देर नहीं करो ।"

मैंने उसे बाजू का सहारा इसलिए दिया था कि आस-पास के लोग देख लें कि मुझे उस आदमी के साथ हमदर्दी है पुलिसवाले भी देख लें कि मरे मन मे द्वेषभाव नही है।

उसने आखें फेरकर मेरी ओर देखा, सहसा उठ खडा हुआ। मुझे लगा जैसे उसका शरीर सहसा बडा हल्का हो गया है और बिना मेरी मदद के अपने आप चलन लगा है। वह उठा ही नही, लडखडाता हुआ मोटर की ओर चल दिया। मैंने पहले तो सोचा कि वह अपना साइकिल उठाने जा रहा है। पर वह सीधा मोटर के पास जा पहुचा और हत्थी को पकड कर दरवाजे के शीशे के साथ माथा टिकाकर खडा हो गया।

यह क्या करने जा रहा है? वहाँ पर जाकर खडा हो गया? मैं लपककर आगे बढा, चाभी से डिक्की का दरवाजा खोला, टेडे पहिये समेत साइकिल को उसके अन्दर ठूसा, फिर उस आदमी के लिए कार का दरवाजा खोलकर उसे अन्दर धकेल दिया और पलक मारत गाडी चला दी।

अस्पताल मे पहुँचने से पहले ही मुझे पूण सुरक्षा का भास होने लगा। मुझे अपनी कमठता पर और चुस्ती पर गव होने लगा था। कोई और होता तो ऐक्सिडेंट के हो जाने के बाद और पुलिस के आ जाने पर किंकतव्यविमूढ, मुह बाये खडा रहता। अब इसे अस्पताल के बरामदे म पटकूगा और सीधा घर की ओर निकल जाऊँगा।

मोटर चलने पर किसी ने गाली दी थी। दो आदमी कार की आर लपके भी थे। गाली मुझे दी गयी थी या उस आदमी को, मैं नही जानता। लेकिन मोटर बडी खूबसूरती से लोगो की गाठ का चीरती हुई सर करके निकल गयी थी और अब मैं कैजुल्टी वाड के बरामदे मे खडा था और अन्दर उसकी पट्टी हो रही थी।

मैंने अन्दर झाककर देखा तो अध लेटे लेट उसन मरे सामन हाथ बाध दिये और देर तक हाथ जोडे रहा। एक क्षीण, विचित्र सी मुस्कान भी उसके चेहरे पर आ गयी थी। क्षण भर के लिए मुझे लगा जसे सिर की चोट के कारण वह पगला गया है। जितनी देर मैं उसके सामने रहा वह छाती पर दानो हाथ बाधे मेरी ओर देखे जा रहा था। मैं ठिठककर वहा से हट गया और बरामदे म टहलने लगा लेकिन थोडी देर बाद जब मैंने फिर दरवाजे मे से अन्दर झाका तो वह अभी भी छाती पर हाथ बाँधे मेरी ओर देख रहा था। क्या यह सचमुच पगला हो गया है?

मैं धीरे धीरे चलता हुआ उसके पास जा पहुँचा।

"अच्छे करम किये थे जो आपके दशन हो गये। " वह बोला और हाथ जोडे रहा।

मैं ठिठककर खडा हो गया। यह क्या बक रहा है?

फिर सहसा वह, अपनी पट्टिया के बावजूद दोना हाथ बढाकर नीचे की ओर झुका और मेरे पैरो को छूने की कोशिश करने लगा।

मैं पीछे हट गया।

उसने फिर हाथ बाध दिय।

"मर अच्छे करम थे साहिब, जो आपकी मोटर से टक्कर हुई ।"

यह कौन सा स्वाग रचन लगा है? क्या यह सचमुच होश म नही है? पर वह दोना हाथ बाधे, दायें से बायें अपना सिर हिला रहा था।

पीछे बरामदे में हलचल सुनायी दी, एक स्त्री, दो छोटे-छोटे लड़कों के साथ बदहवास सी, वार्ड में घूमती हुई अन्दर आ रही थी। अन्दर की ओर झांकते ही वह लपककर उस आदमी की खाट की ओर आ गयी। दोनों लड़के भी उसके पीछे पीछे भागते हुए अन्दर आ गये।

"हाय तुम्हें क्या हुआ? कहाँ चोट आयी है?" और वह फटी फटी आंखों से उसके सिर पर बँधी पट्टियों की ओर देख रही थी।

यह उसकी पत्नी रही होगी मैंने मन ही-मन समझ लिया। हादसे की खबर इस तक पहुँच गयी है। अस्पताल में आने पर सुरक्षा का जो भाव मन में उठा था वह लड़खड़ा सा गया। पहले ही से उसके सनकी व्यवहार पर मैं हैरान हो रहा था। मन में आया निकल चलूं, अब और ज्यादा ठहरने में जोखिम है।

पर वह आदमी अपने दो बालकों से कह रहा था

"पालागन करो, जाओ जाओ पालागन करो।"

और दोनों लड़के, राम लछमन की तरह हाथ बाँधे मेरे पैर छूने के लिए आगे बढ़े आ रहे थे।

स्त्री ने तनिक घूमकर मेरी ओर देखा। वह बेहद घबरायी हुई थी।

'इनके आगे माथा नवाओ। इन्हें नमस्कार करो! करो, करो!' वह अपनी पत्नी से कह रहा था।

औरत हतबुद्धि सी सिर पर पल्ला करके मेरे सामने झुकी।

'मुझे मौत के मुँह से निकाल लाये हैं। सड़क पर पड़े आदमी को कौन उठाता है? यह मुझे उठा लाये हैं।' वह बोले जा रहा था, "उधर पुलिस आ गयी थी। यह मुझे पुलिस के हाथ से खींचकर ले आये हैं। मैंने अच्छे करम किये थे, आप तो भगवान के अवतार होकर उतरे हैं। इस कलियुग में कौन किसी को सड़क पर से उठाता है। आपके हाथ से बहुतों का भला होगा। "

थुल थुल गिड़गिड़ा रहा था। वह पगलाया नहीं था, उसकी बकवास के पीछे कोई षड्यन्त्र भी नहीं था केवल त्रास था, दिल्ली की सड़कों का त्रास।

मैंने इत्मीनान की सांस ली।

"नही नही, ऐसा नही कीजिए", अपनी ओर गले मे पल्ला डाले झुकी हुई उसकी पत्नी को सम्बोधन करते हुए कहा। मेरी आवाज मे मिठास आ गयी थी, तनाव दूर हो गया था।

"नही, नही, मैंने केवल अपना फज पूरा किया है। एक इ सान के नाते मरा फ्ज था।" फिर सदभावनापूण परामश देते हुए बोला, 'लेकिन आपको साइक्लि ध्यान से चलानी चाहिए। दिल्ली म हादसे बहुत होते ह। बल्कि मैं तो कहूँगा कि आपको इस उम्र मे साइकिल चलानी ही नही चाहिए। इससे तो पैदल चलना बेहतर है। "

"आपकी दया बनी रहे " उसने बुदबुदाकर कहा।

"नही नही, एक इन्सान के नाते यह मेरा फज था। और किसी चीज की जरूरत हो तो बताओ, मैं भिजवा दूगा "

उसन फिर हाथ जोड दिये और सिर हिलाने लगा। दयालुता और आत्मश्रद्धा के आवेश मे मेरा हाथ फिर पतलून की जेब म गया, जहा दो नोट पडे थे। मैंने उँगलियो से दोनो नोट अलग अलग किये। पाच दू या दस ? दस दू या पाँच ? आसामी तो पाच का नजर आता है। फिर तभी हाथ रुक गया। यह क्या बेवकूफी करने जा रहे हो ? यह क्या कम है कि इसे अस्पताल म उठा लाये हो ? यह है कौन जिसके प्रति इतने पसीजने लगे हो ? न जान, न पहचान

मैंने आँख उठाकर उसकी ओर देखा। छाती पर हाथ बाघे वह अभी भी श्रद्धा से सिर हिलाये जा रहा था। लिजलिजी, लसलसी-सी श्रद्धा, जिसे देखकर फिर से मन मे घणा की लहर उठने लगी, और मैं वहीं से बाहर की ओर घूम गया।

# खूँटे

हम सब अपने अपने खूटे तुडाकर इस सेमिनार मे भाग लेने आये थे। समिनार का आयोजन दिल्ली से दूर इस नगर मे किया गया था, इस आशय से कि कुछ पैसे भी बच जायेंगे, कुछ सैर भी हो जायेगी। मेरी पत्नी ने भी कृपा की थी, कुछ दिन के लिए खूटे पर से रस्सी खोल दी थी और मैं दुलत्ती झाडकर भाग खड़ा हुआ था। यही स्थिति हम सबकी रही होगी। जैन की भी और विनायक की भी और उस पतले मूँगे कनक महता की भी।

दो दिन तक तो सेमिनार की कार्यवाई चलती रही थी। सचालक के नाते जैन ने अपना भाषण पहले दिन ही सेमिनार मे दे दिया था। वर्षों से रटा हुआ भाषण था, यहाँ तक कि हॉल मे मेरे साथ बैठा महता, भाषण के वाक्य पहले से ही बुदबुदा देता। उपसचालक के नाते विनायक को ज्यादा काम था, किराये भत्ते का हिसाब रखना, किसे कहाँ ठहराना है, कौन-कौन से प्रस्ताव होगे, अपना काला सा बैग बगल मे दबाये सारा वक्त इधर से उधर घूमता रहा था।

पर अब सेमिनार की अधिकांश कार्यवाई खत्म हो चुकी थी और इतवार का दिन था और हमने नगर की सैर करने की ठान ली थी। जैन ने नकटाई खोल दी और कोट उतारकर लाल रग का बुश-शर्ट पहन लिया मैंने भी सफेद कमीज और ग्रे रग की पतलून पहन ली और जब में बढ़िया सिगरेटो की डिबिया रख ली। केवल विनायक ने चलते समय अपना बैग फिर से उठाकर बगल मे दबा लिया।

"इसे कहाँ उठाये फिरोगे?" मैंने कहा।

विनायक ने मेरी ओर देखा, और बैग वापस पलग पर रख दिया।

"चलो, यहीं से चलना", उसने कहा लेकिन जब हम लोग कमरे मे से

निकलने लगे तो उसने बैग को फिर से बगल मे दबा लिया।

"यह न रहे तो बगल खाली खाली लगती है, मुझे अटपटा सा लगता रहता है।"

हम होटल मे से निकलकर शहर को जानेवाली बडी सडक पर आ गये। मैं तो बाहर का आदमी था, 'पब्लिक' की ओर स समिनार मे भाग लेने गया था, मगर ये तीना तो एक ही दफ्तर के कार्यकर्ता थे—एक सचालक, दूसरा उपसचालक, तीसरा क्लक। भला दिल्ली मे कहा कभी एक साथ घूमने निकलते होगे।

किसी नये नगर के साक्षात करते ही बदन मे स्फूर्ति की लहर दौड जाती है। बाहर खुले मे आते ही तबीयत मे चुस्ती आ गयी। घुला घुला मौसम था, हवा मे खुनकी और खिली खिली धूप। हम बरबस बतियाने हँसने लगे। सचालक, उपसचालक, और क्लक के बीच की हदबन्दिया भुरभुराने लगी और बातचीत म बेतकल्लुफी आने लगी। आखें झाक झाककर आसपास का नज्जारा दखन लगी आते जाते लोग, शहर की चहल पहल, सजी धजी दुकानें, तरह तरह के वाहन। जैन ने सबसे पहले टिप्पणी की

"यहा की लौण्डिया तो बुरी नही। सावली, नमकीन, इनकी आँखें ऐसे चमकती हैं, जसे गहरे कुए मे पानी झिलमिलाता है।"

यह उपमा भी जरूर उसने कही से उठायी होगी। फिर अपने आप कहने लगा "हम तो एक बात जानते हैं, औरतें सुन्दर हैं तो नगर सुन्दर है अगर औरतें थुलथुल हैं ता अपन तो वहाँ नही जायेंगे। हमने देख-सुन कर ही सेमिनार के लिए जगह चुनी है।"

सामन स पाच छ युवतियो की एक डार-सी चली आ रही थी। जैन खडा हो गया और पतलून की जेब मे हाथ डाले और तोद फलाये आँखें फाड फाडकर उनकी ओर देखने लगा। दिल्ली में वह इस तरह कब लडकियों को घूरता होगा। उसकी चाल-ढाल को देखकर लगा जैसे जवानी के दिनो म जरूर लोफरो के साथ घूमता रहा है। स्वभाव पर चढी दफ्तरी अनुशासन की पपडी चटक चटक टूट रही थी।

क्लक मेहता खी खी करके जैन के व्यवहार पर हँसता भी जाता और आस पास की दूकानों म झाकता भी जाता था। उसे मछली के

आगरा की बनी सुराहियाँ बड़ी पसन्द आयीं और ऐसी थालियाँ भी जिनमें कटोरियाँ थाली के अन्दर ही जुड़ी रहती हैं।

"ये कैसी हैं? हैं जी, देखा जी? ये कैसी हैं, हैं जी? उल्टा भी कर दो तो भी कटोरी नहीं गिरेगी।"

केवल उपसचालक विनायक चुप था। बगल में काला बैग दबाये, निर्मम और निश्चेष्ट आगे की ओर गर्दन बढ़ाये, चला जा रहा था। विनायक की कनपटियों के बाल सफेद हो चले थे और चेहरे का रंग उपसचालकों का सा, सुहागे के रंग का हो रहा था, जबकि जैन का चेहरा खिला खिला था, संचालकों के चेहरे-जैसा। पिछले कुछ दिनों से *विनायक मेरे साथ खुलने लगा था कुछ इसलिए भी कि हम एक ही कमरे* में ठहराये गये थे।

पर यह बेतकल्लुफी जैसे ही शुरू हुई थी वैसे ही सहसा खत्म भी होने लगी।

थोड़ी दूर तक चलते रहने के बाद जैन खड़ा हो गया और बोला, "पहले कहीं से अच्छा सा बनारसी पान का बीड़ा लेकर मुंह में रखेंगे फिर आगे की बात होगी। जब से आये हैं, ढंग का पान खाने को नहीं मिला।"

"बनारसी पत्ता यहाँ कहां मिलेगा," विनायक ने तनिक लापरवाही से कहा, "चलिए, बहुत पान नहीं खाते। आपको तो डाक्टर ने भी मना कर रखा है।"

इस पर जैन ने निर्णयात्मक सी आवाज में कहा, 'तुम लोग घूमना चाहो तो घूमो हम तो पहले बनारसी पान खायेंगे।'

इस पर फिर विनायक ने लापरवाही से कहा, "अब बनारसी पान न *मिले तो कोई कहां से लाये, यहाँ देसी पान ही खा लीजिए।'*

"देशी पान तो हम नहीं खायेंगे," सड़क की पटरी पर अपने पैर जमाते हुए जैन बोला, "देशी पान नहीं खायेंगे। इससे तो घास खा लेना ज्यादा अच्छा है। बनारसी पत्ता हो उसमें थोड़ी गीली सुपारी हो, एक इलायची और चुटकी भर जर्दा तो हमें और कुछ नहीं चाहिए।"

"पर यह मिले भी तो? यहाँ बनारसी पत्ता नहीं मिलता!'

विनायक ने अपना असंतोष व्यक्त करते हुए कहा।

जैन ने इस ढंग से विनायक की ओर देखा कि विनायक समझ ले कि वह संचालक के सामने खड़ा है। विनायक चुप हो गया।

अब भी हम लोग आगे बढ़े तो अपने आप ही पंक्तिबद्ध हो गये। जैन सबसे आगे था, दोनों हाथ पीठ पीछे रखे हुए नेपोलियन की तरह आगे बढ़ा जा रहा था मैं और विनायक उससे दो कदम पीछे थे और मेहता सबसे पीछे। और जब हम कहीं रुकते तो मैं पाता कि जैन अक्सर सड़क की पटरी पर खड़ा होता, विनायक का एक पैर पटरी पर तो दूसरा सड़क पर होता जबकि मेहता पटरी पर से उतरकर पांच कदम की दूरी पर सड़क पर खड़ा होता। अदब कायदे के दर्जे सड़क पर भी अपने आप बनते जा रहे थे।

अब विनायक बार बार मुझे छोड़कर, कभी सड़क के दायें तो कभी बायें, हर पनवाड़ी की दूकान से बनारसी पत्ते के बारे में पूछने लगा।

'यार, यह क्या परेशानी है? क्या हम दिन भर बनारसी पत्ता ही ढूंढ़ते फिरेंगे?' मैंने विनायक से कहा।

'हम तो नहीं कह सकते, तुम इनसे कहो," विनायक ने निश्चेष्ट सी आवाज में कहा।

"क्यों? तुम क्यों नहीं कह सकते? तुम्हारे अफसर होंगे तो दिल्ली में होंगे, यहां पर तो नहीं हैं और आज तो छुट्टी का दिन है, इतवार है।'

इस पर विनायक तुनककर बोला, 'अफसर की बात नहीं है, अफसर तो यहां पर मैं हूँ, सेमिनार का आयोजन तो सारा मैंने किया है।"

'यहां पर तो मेरी चलती है" पर बोलते हुए ही उसने झट से अपनी आवाज धीमी कर ली मानो उसे लगा हो कि जैन कान लगाये उसकी बातें सुन रहा है।

हम लोग तीन सड़कें लांघ चुके थे। तब विनायक को एक पान की दूकान में बनारसी पत्ता मिल ही गया।

जैन ने मुंह में बीड़ा रखा फिर चकवे की तरह गर्दन ऊंची करके मुंह खोला और जर्दे की चुटकी उसमें घोल दी। देखते ही-देखते जैन के गालों पर रंगत फैल गयी फिर होंठ लाल हुए। आंखों में तरावट आ

गयी, आत्मा तप्त हो गयी।

'इस पान के पीछे तुमने हमें थका मारा,' जन ने बेतकल्लुफी से कहा, "अब तो भाई, हमसे चला नहीं जाता। बहुत कुछ देख लिया। अब पहल तो हम कहीं बैठेंगे।"

"पान के पीछे मारे-मारे तो हम घूमते रहे और थक आप गये।" विनायक ने तनिक खीझकर कहा, "अगों को हिलाते रहा कीजिए जन साहब, आप घूमते नहीं, इसीलिए आपका रक्तचाप स्थिर नहीं रहता।'

जन साहब मुस्कराते रहे, लेकिन उनकी आखों मे फिर वही भाव तिरता सा आया कि तुम जरूरत से ज्यादा हमारे साथ बेतकल्लुफ हो। तुम्हें देश हो या परदेस, यह नहीं भूलना चाहिए कि मैं जैन हूँ और तुम विनायक हो।

"चलिए, पहले किसी जगह बैठकर थोडा नाश्ता करेंगे, फिर आगे का प्रोग्राम बनायेंगे।" जैन ने जबडा चलाते हुए कहा, फिर विनायक की ओर घूमकर बोला, "जाइए विनायकजी कोई गाडी वाडी ले आइए, एक टैक्सी वहीं से पकड लाइए अब हम और पैदल तो नहीं चलेंगे।"

विनायक ठिठका, मेरे चेहरे की ओर उसकी आँख नहीं उठी, फिर वह कनक मेहता की ओर मुखातिब होकर बोला, 'मेहताजी, इधर मे एक टैक्सी पकडिए, तो।"

"मेहता को यहाँ से मिलेगी, आप खुद ही तकलीफ कीजिए" जन ने कहा। जन की छोटी छोटी मुस्कराती हुई सी आँखें कह रही थी कि मातहता के पख थोडे-बहुत कतरते ही रहना चाहिए।

विनायक का चेहरा स्याह पड गया। बगल म अपना काला बग दबाये चुपचाप टैक्सी की तलाश म जाने लगा।

'ठहरिए विनायकजी मैं भी चलता हूँ।' मैंने कहा और विनायक के साथ हो लिया।

जैन पटरी पर खडा जुगाली करता रहा और उसस दम कदम दूर मेहता, पटरी पर से उतरकर सडक पर खडा हो गया।

विनायक के मस्तिष्क म सस्मरणों का पूरा भरा पडा है। हर बार तिरस्कृत होने पर किसी-न किसी सस्मरण का चिथडा निकाल लाता है

और मेरे सामने उसकी नुमाइश करता है।

"यहाँ किसी रेस्तरा मे बठकर नाश्ता कर लेते।" मैंने कहा।

"तुम कहो, हम तो नही कह सकते," विनायक बोला, फिर बड बडाकर कहन लगा, टैक्सी के पैसे सरकार देगी, इनके जेब से थोडे ही जायेंगे," और तभी अपनी ठण्डी निश्चेष्ट आवाज मे सस्मरण सुनाने लगा "इन साहब ने मुझे लखनऊ मे तार दिया कि मैं लखनऊ आ रहा हूँ, मरे रहने का इ तजाम करवा दो। मैंने बडी दौडधूप करके सरकिट हाउस म इ तजाम करवा दिया। जाडो के दिन थे, सुबह चार बजे मैं स्टशन पर इन्ह लिवाने के लिए गया। जब गाडी मे से उतरे ता इनके साथ तिवारीजी थे। मुझे देखकर वह हजरत बोल, "कहिए विनायकजी, हमारे रहने का प्रबन्ध हो गया?"

'जी" मैंने कहा, "बहुत बढिया इन्तजाम कर दिया है, सरकिट हाउस मे, और गाडी भी ले आया हू।"

"कितने पैसे देने होगे रोज़ के?"

"केवल बाईस रुपये। खाना-पीना सब मिलाकर।"

"अरे, इतने ज्यादा!" यह हजरत बोले और साथी की ओर घूमकर कहने लगे, "तब तो तिवारीजी हम आप ही के साथ चलेंगे" और बिना मेरी ओर देखे या कुछ कहे उनके साथ हो लिये।

विनायक की आवाज इतनी सूखी इतनी समतल है कि उसमे आत्मानुकम्पा तक की गूज सुनायी नही देती। सूखी, निश्चेष्ट ठण्डी आवाज।

नुक्कड पर एक टक्सी मिल गयी और हम उसे ले आये। जैन उसी तरह पतलून के जेब मे हाथ डाले मुह हिलाये जा रहा था और मेहता दस कदम दूर अदब से जैन की ओर पैंतालिस डिग्री का कोण बनाये खडा था।

टक्सी खडी हुई तो हम लोग उसमे से निकल आये। फिर बडे कायदे से टैक्सी मे बठने की रस्म अदा की गयी, मतलब कि पहले विनायक टैक्सी का दरवाजा खोलकर उसे थामे खडा रहा और जैन ने अन्दर प्रवेश किया। फिर मेहता ने दरवाजा पकडा और विनायक ने प्रवेश

किया, फिर मैंने, और इसके बाद दरवाजा बन्द करके मेहता ने आगे का दरवाजा खोला और ड्राइवर के साथ सटकर बैठ गया।

गाडी चली तो जैन बोला "विनायक साहब, आज हम नाश्ते पर मिठाई मांगें भी तो हम खाने नही देना, हमने कह दिया।'

"आप खायेंगे साहिब, खायेंगे भी और बाद म मुझे दोष भी देंगे।' विनायक बोला।

"नही नही, मत खाने देना, मैंने कह दिया।"

"क्यो ?' मैंने पूछा, "क्या शूगर की तकलीफ है ?"

जैन मुस्कराया, "एक शूगर ही तो कह। मैं नौ गोलिया रोज खाता हू, छोटी बडी, कोई पीली कोई नीली।" फिर वह ब्यौरे के साथ अपनी बीमारियाँ गिनाने लगा मानो कह रहा हो मेरी हैसियत का कोई दूसरा अफसर बताओ जो मेरी तरह नौ गोलियाँ रोज खाता हो। 'शूगर भी है, ब्लड प्रेशर भी है, जाने क्या क्या है "

रेस्तराँ के बडे हॉल कमरे मे बहुत सी मेजें लगी थी। हमने चार कुर्सियावाले एक मेज का रुख किया। मगर बैठ जाने पर एक कुर्सी खाली ही बनी रही। क्लर्क मेहता, अपने आप ही, चुपचाप किसी दूसरी जगह जा बैठा था। मैंने घूमकर देखा तो दीवार के साथ लगे एक मेज पर लगभग दीवार की ओर मुह किये बैठा था।

"वहाँ आजादी से खायेंगे," जैन ने सफाई देते हुए कहा, "हमारे साथ बँधे बँधे महसूस करते, उन्ह झेंप होती है।' फिर न जाने जैन को क्या सूझी, विनायक की ओर देखकर बोला, "विनायकजी, आप वहा मेहता के साथ जा बैठिए। बेचारा अकेला है।"

विनायक ठिठका, उसके बायें गाल पर कँपकँपी दौड गयी, पर वह वही बना रहा।

'नही साहब, उन्ह मेरे साथ रहते भी झेंप होगी।"

जैन मुस्कराता रहा। गाल मे दबा पान अब तक चिथडे चिथडे हो चुका था, और अब जैन इन चिथडों को टटोल टटोलकर ला रहा था और दाँतों तले पीस रहा था।

जैन ने अपनी लाल जर्सी उतारकर कुर्सी की पीठ पर टाँग दी और

पतलून के ऊपर के दो बटन खोल दिये।

जब नाश्ता परोसा जाने लगा तो जैन ने फिर से विनायक को सम्बोधन किया, "हम मिठाई नही खाने देना विनायक, हमने कह दिया।" फिर मानो अपने से बातें करते हुए बोला, "लेकिन तुम बहुत ठीक हो, सुस्ती अच्छी चीज नही। दिल्ली मे भी सारा वक्त बैठे रहते हैं,' फिर मेरी ओर देखकर बोला, 'हमारे पिताजी भी हमे सुस्त कहा करते थे, 'अमर चन्द्र, तुम बहुत सुस्त हो, सारा वक्त निठल्ले पडे रहते हो, तुम्हारा बने बनायेगा कुछ नही।' आज पिताजी हम देखें तो, हमारा कुछ बना है या नही। जिस पोजीशन पर वह चालीस साल तक एडिया घिसने के बाद पहुँचे थे, उस पोजीशन के लोगो के साथ तो हम बात भी नही करते।" और जैन खी-खी कर हँस दिया।

नाश्ता आया तो जैन ने डटकर खाया, यहा तक कि उसकी सास तेज चलने लगी और उसे पतलून का ऊपर से तीसरा बटन भी खोल देना पडा। आखिर वह कुर्सी की पीठ से टेक लगाकर हांपता हुआ बैठ गया।

नाश्ता कर चुकने के बाद, उस प्रदेश के चलन के अनुसार जब बैरा मिठाई की तश्तरी सामने रख गया तो जैन का बुरा हाल था। उसकी आखें मिठाई पर से हटती ही नही थी। देखते ही देखते जैन का चेहरा पीला पड गया और माथे पर पसीने की बूदें झलक आयी। उसका मन विकट द्वन्द्व मे छटपटा रहा था कि मिठाई मुह मे डाले या नही डाले। उसके दायें गोलमटोल गुदगुदे हाथ मे बार बार कम्पन होता, मानो वह मिठाई की ओर बढना चाहता हो, पर फिर वह मेज पर निश्चेष्ट सा पडे रहता।

विनायक ने वितृष्णा से मुह फेर लिया, लगता था वह इस स्थिति से भली भाति परिचित है।

फिर सहसा एक ही झटके से जैन मिठाई की तश्तरी पर झपटा जैसे चील अपने शिकार पर झपटती है और बर्फी के दो टुकडे उठाकर सीधे मुह मे डाल लिये, 'ऐसी भी क्या बात है, आखिर छुट्टी पर आय हैं। देखा जायेगा जो होगा।"

उसका जबडा फिर से चलने लगा, गालो पर फिर रंगत आ गयी,

गाखो मे तप्ति का नीलापन पहले की तरह फिर से लौट पडा। मुह ने अदर उसकी बल खाती जीभ बार-बार इधर स उधर लोटने लगी।

दर तक जबडा हिलात रहन के बाद उसन आखें मिचमिचायी और दोनो हाथ तोद पर रख लिय। उसकी जीभ अभी भी जबडो और दांता के बीच वर्फी के जर्रे बटोर रही थी। जब जबडा हिलना बन्द हुआ तो वह आँखें नीची किये मेज की ओर दखता रहा और चुप सा हो गया। उसे कोफ्त-सी होने लगी कि क्या कर बैठा है। हो गया जो होना था " वह बुदबुदाया और फिर जहर म बुझी नजर से विनायक की ओर दखन लगा। लगा, अभी विनायक पर बरस पडेगा, लेकिन वह कुछ भी बोला नही, केवल बडबडाता हुआ उठकर बाहर लाउज की ओर चला गया।

नाश्ते के बाद मैं लाउज मे से निकलकर सीधा रेस्तरां के बाहर आ गया। मुझे सैर का प्रोग्राम खटाई मे पडता जान पडा। मन मे आया अकेले ही कही निकल जाऊँ। जैन लाउज मे आकर एक सोफे पर पसर गया था, और विनायक क्लर्क को लेकर रुपये पैसे का हिसाब करने लगा था और अपने तिरस्कार की कटुता क्लर्क पर निकालने लगा था। मैं रेस्तरां मे से निकलने ही वाला था कि इतने मे पीछे से आहट हुई। विनायक अपने काले बैग मे रसीदें खोसता हुआ चला आ रहा था। मैंने उसे देखते ही कहा—

"जैन साहिब तो लगता है अब आराम करेंगे। चलो, हम और तुम मन्दिर देख आयें।"

"मन्दिर वन्दिर म क्या रखा है ' उसन खीझकर कहा।

'जन तो सो रहा है यार, और मेहता उसके पास है, चलो हम दोनो निकल चलें।' और मैं उसे घसीटकर एक टैक्सी की ओर ले चला।

शहर मे से निकलते ही दृश्य बदल गया। बल खाती चौडी सडक ऊपर को जाने लगी। आँखें बरबस बाहर की ओर उठ गयी। दूर पहाडी का रग तावे जसा लग रहा था और उसी पर, पेडो के झुरमुट के बीच किसी पुराने मन्दिर का कलश चमक रहा था। बार-बार वह आंखो के सामन

आता और बार-बार ही आँखो से ओझल भी हो जाता। विनायक पहले तो देर तक बडबडाता रहा और मैं डरता रहा कि अपने सस्मरणों का पिटारा फिर से खोल देगा, लेकिन ज्यो ज्यों टैक्सी आगे बढती गयी और वह जैन से दूर होता गया, वह ज्यादा आजाद और ज्यादा हल्का महसूस करने लगा।

"मैंने सोचा है रिटायर होकर मैं एक जीप खरीद लूगा। जीप मे खाने-पीने और सोने-पहनने का सामान रखा और चल मेरे भाई जिधर मन आया निकल गये। जहा मन आया घमे, कभी एक जगह तो कभी दूसरी जगह।" उसने इतने आग्रह के साथ कहा मानो वह सचमुच आजाद हो पाने के लिए छटपटा रहा हो।

मन्दिर तक पहुँचते-पहुँचते चार बज गये। पहाडी के नीचे एक ओर को चौडी झील बिछी थी। ऊपर आकाश का रग ताबे जैसा लाल हो रहा था। यही यहाँ का सूर्यास्त माना जाता होगा। आस पास की छोटी छोटी पहाडियाँ भी आकाश की लालिमा से ढकी थी। इसी लाली के कारण नीचे की झील किसी दहकते द्रव्य का बहुत बडा कुण्ड लग रही थी। चारो ओर फली इस लाली की पष्ठभूमि म अनेक पक्षी अपने पतले पतले, काले पख फैलाये, जसे आग की लपटो से बच पाने के लिए भागे जा रहे थे। किसी किसी वक्त किसी पक्षी का तीखी चीख सुनायी दे जाती जो असह्य उल्लास की चीख भी हो सकती थी और असह्य वेदना की भी। ऐसा दृश्य मैंने पहले कभी नही देखा था।

तभी मुझे अपने पीछे बुदबुदाने की आवाज आयी। विनायक था।

"क्या सोच रहे हो ?' मैन पूछा। वह ठिठका, फिर धीरे स बोला, 'जिन्दगी म कुछ बना बनाया नहीं, सारी जिन्दगी चौपट हो गयी।"

उसका बाया गाल फिर से थिरकने लगा था।

'अपने कस्बे मे बना रहता तो इस वक्त सात सौ कमा रहा होता। और कस्बे म कोई खर्च ही नही इज्जत ही इज्जत है। इधर पिछले सात साल से जैन छाती पर सवार है, जान आफत म आ गयी है" फिर ठण्डी सास भरकर बोला, "चलो जैसे इतने बरस बीत गये है छ महीने और भी कट जायेंगे।'

"छ महीने क्या ?"

'छ महीने म रिटायर हा रहा हूँ। कम-से-कम इस मूजी से तो पिण्ड छूटेगा।"

' क्या तुम एक्सटेंशन नही ले रहे हो ?"

'एक्सटेंशन का क्या सवाल है अब ता रिटायर होने के दिन आ गये।"

"अच्छा ! मैंन तो सुना है, तुम्हारे महकमे म एक्सटेंशन दने लगे हैं। नीम सरकारी महकमा है तुम्हारा। बल्कि मैंन तो सुना है कि किंकर ने एक्सटेंशन के लिए दरख्वास्त भी कर दी है।'

पहले ता बात विनायक के जेहन म नही उतरी। मैंन भी सुनी सुनायी बात कह दी थी। नहीं जानता था, कहाँ तक सही थी। उसने सिर झटक दिया माना कह रहा हो भाड मे जाये किंकर भी और जन भी। पर फिर सहसा वह मेरी कोहनी पकडकर बोला—

'तुम्ह किसने बताया ? क्या सचमुच किंकर ने एक्सटेंशन के लिए दर्खास्त कर दी है ?

' त्रिपाठी बता रहे थे।'

"कब ?" विनायक की सास तज चलन लगी थी।

"यही चलने से दो एक दिन पहले। क्या जैन ने तुम्ह बताया नही ?"

"नहीं तो। यार साफ साफ बताओ, क्या पहेलियाँ बुझा रहे हो।'

"मैं ज्यादा कुछ नही जानता। तुम्हारे यहाँ दो एक साल की एक्स्टेंशन मिल सकती है, मैंने इतना ही सुना है।

कह चुकन के बाद मुझे लगा जसे मुझसे भूल हो गयी है। विनायक चुप हो गया और झील की ओर देखन लगा। फिर सहसा उसके मुँह से हूक सी निकली और बेहद उत्तेजित हो उठा। उसके दाना गाल थिरक रहे थे।

' मैं यह चास भी खो दूगा। पहले भी ऐसा हो चुका है। मेरी किस्मत ही ऐसी है।' फिर मेरी कोहनी पकडकर बोला ' क्या सचमुच नौकरी की मीयाद बढ सकती है ? मुझे दिल्ली पहुँचना चाहिए। जसे भी हो दिल्ली पहुँचना चाहिए। मैं दिल्ली जाऊँगा। आज रात ही दिल्ली के लिए

निकल जाऊँगा। मेरे कैरियर का सवाल है। तुम जानते हो, दो बरस नौकरी के और मिल जायेंगे। और क्या चाहिए "

विनायक की अकुलाहट बराबर बढती जा रही थी। कभी बग को एक बगल मे रखता, कभी दूसरी म। और दोना गाल काप रहे थे।

"जन सिफारिश कर दें तो काम बन जायेगा।" वह बुदबुदा रहा था "मैंने उनकी बडी खिदमत की है। उनकी बेटी की शादी का सारा काम मैंने किया था। मुझे दिल्ली पहुँचना चाहिए "

और वह उन्ही कदमो लौट पडा और ढलान उतरने लगा।

"कहाँ जा रहे हो विनायक, ठहरो तो! दिल्ली यहाँ से बहुत दूर है।"

"भाई माफ करना, मैं भागा जा रहा हूँ, यह मेर कैरियर का सवाल है। तुम नज्जारा देखकर आ जाना। बहुत अच्छा नज्जारा है बडी मशहूर जगह है, मुझे माफ करना '

और वह भागने लगा, तेजी से ढलान उतरन लगा। काला बैग उसके हाथ मे झूल रहा था, और तीखी ढलान पर पर बेतरह पड रहे थे। "जैन साहब सिफारिश कर दे तो बेडा पार है। मैं अभी उनसे मिलूगा ' तभी वह धडाम से घुटना के बल गिरा। बडी उम्र का आदमी दौडकर ढलान उतरने का अभ्यस्त नही था। मैं भागकर उसके पास गया। वह हाँफ रहा था, पर शीघ्र ही उठ बैठा। दोनो घुटना पर से पतलून फट गयी थी और हाथो की हथेलिया छिल गयी थी।

"मैं ठीक हूँ। मुझे कोई चोट नही आयी।" उसने उठते हुए कहा, और दूर गिरा अपना काला बैग उठाने लगा। "वक्त पर बात हो जाये तो काम बन जाता है वक्त निकल जाये तो कोइ कुछ नही कर सकता। भय्या मुझे माफ करना। अभी नही तो कभी नही। जैन साहब सिफारिश कर दें तो बेडा पार है। इनके साथ सात बरस स काम कर रहा हूँ। मैंने इनकी खिदमत की है। तुम सूर्यास्त का दृश्य देखो। मर कैरियर का सवाल है। एक बार दिल्ली पहुँच जाऊँ ता इसे हाथ से नही जाने दूगा। ' और वह फिर हाफ्ता हुआ ढलान उतरने लगा।

तभी आसमान म चारो आर फली लौ बुझने सी लगी। क्षण भर

पहले लाली चारा ओर छायी थी। अब लग रहा था जैसे आकाश म से धूसर रग की राख गिरने लगी है। लगा जसे कोई स्वप्न भग हो रहा है। वे पक्षी जो चारो ओर छिटकी लालिमा म अठखेलियाँ कर रह थे, अब पख समेटकर जाने कहाँ चले गये थे। वातावरण म अवसाद की धूल-सी उडने लगी थी।

•••